योगासन

श्री स्वामी शिवानन्द



दिव्य जीवन संघ प्रकाशन

योगासन

लेखक

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती



अनुवादिका

डा॰ स्वर्णलता अग्रवाल

प्रकाशक

दिव्य जीवन संघ

पत्रालय : शिवानन्दनगर—२४९१९२

जिला : टिहरी-गढ़वाल, ऊ॰प्र॰ (हिमालय), भारत

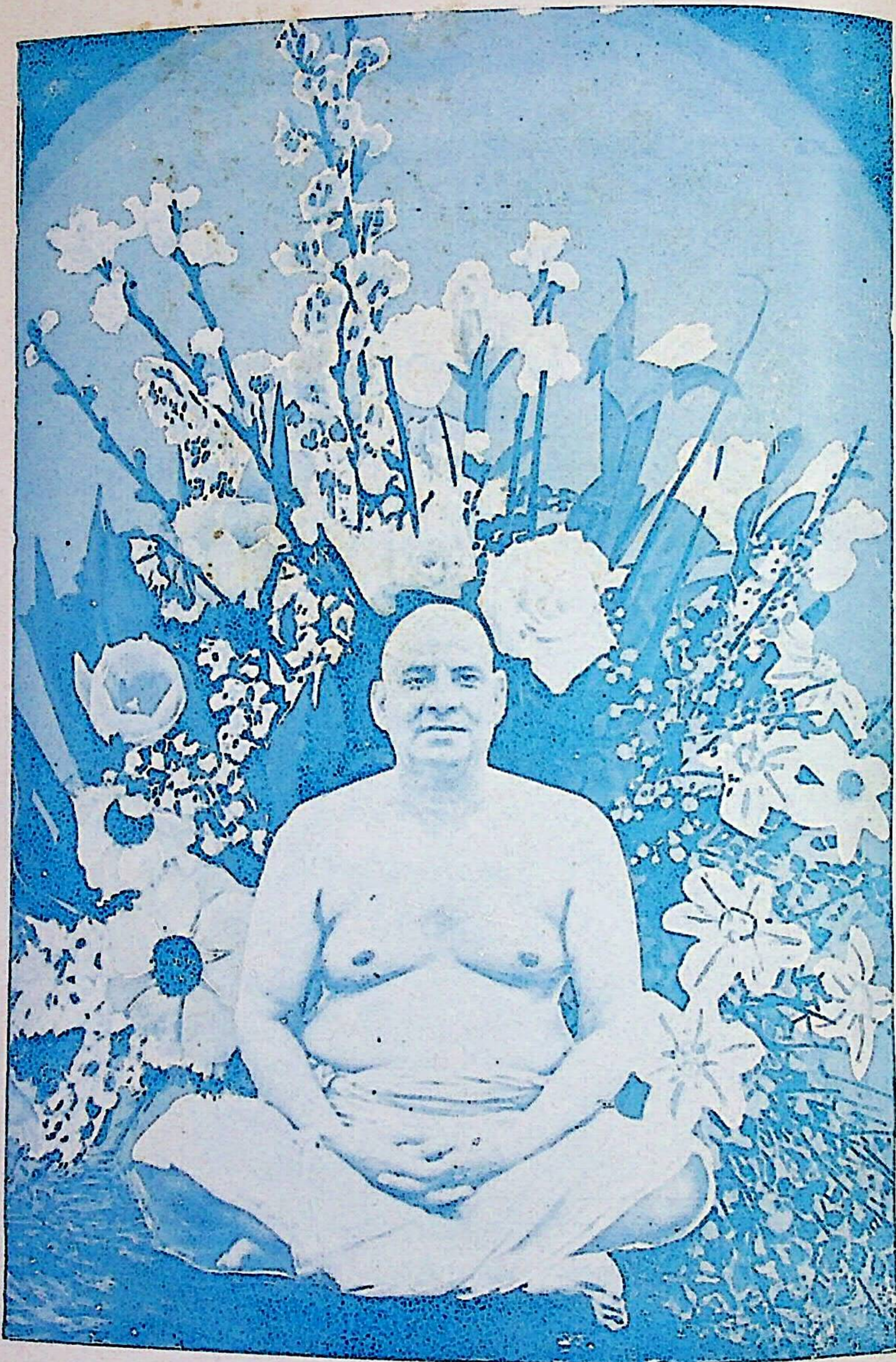
मूल्य] १९९६ [रु॰ 50/-

प्रथम हिन्दी संस्करण ... १९८२
द्वितीय हिन्दी संस्करण ... १९८८
तृतीय हिन्दी संस्करण ... १९९६

[४,००० प्रतियाँ]

ISBN 81-7052-126-2

'डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त अरण्य अकादमी मुद्रणालय, पो॰ शिवानन्दनगर—२४९१९२, जिला टिहरी-गढ़वाल, ऊ.प्र॰' में मुद्रित ।



SWAMI SIVANANDA

देवी-स्तोत्र

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।

शरण में आये हुए दीनों एवं पीड़ितों की रक्षा में संलग्न रहने वाली तथा सबकी पीड़ा दूर करने वाली नारायणी देवी ! तुम्हें नमस्कार है ।

गुरु-स्तोत्र

गुरुमूर्तिं स्मरेन्नित्यं गुरोर्नाम सदा जपेत् ।
गुरोराज्ञां प्रकुर्वीत गुरोरन्यन्न भावयेत् ।।

व्यक्ति को चाहिए कि वह सदा गुरु के रूप का स्मरण करे, सदा गुरु के नाम का जप करे तथा गुरु की आज्ञा का पालन करे और गुरु के अतिरिक्त अन्य किसी का चिन्तन न करे ।

गुरुरेको जगत्सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात् सम्पूजयेद् गुरुम् ।।

ब्रह्मा, विष्णु और शिवात्मक सारा संसार एकमात्र गुरु है । गुरु से महान् कोई नहीं है; अतः गुरु की पूजा करनी चाहिए ।

परा-पूजा

हे केशव प्रभु ! मेरी समस्या यह है : मैं तुम्हें कैसे प्रसन्न करूँ?

१. गङ्गा स्वयं तुम्हारे श्रीचरणों से प्रवाहित हो रही हैं। क्या मैं तुम्हारे स्नानार्थ जल लाऊँ?

२. तुम्हारा सच्चिदानन्द स्वरूप तुम्हारा वस्त्र है। अब मैं तुम्हें कौन-सा पीताम्बर पहनाऊँ?

३. विश्व के समस्त प्राणियों तथा जड़ पदार्थों में तुम निवास करते हो। हे वासुदेव ! अब मैं तुम्हें कौन-सा आसन बैठने के लिए दूँ?

४. सदा-सर्वदा सूर्य-चन्द्र—दोनों ही तुम्हारी सेवा कर रहे हैं। फिर व्यर्थ ही मैं तुम्हें दर्पण क्या दिखाऊँ?

५. तुम प्रकाशों के प्रकाश हो। बोलो, अब तुम्हारे लिए मैं कौन-सा अन्य प्रकाश जलाऊँ?

६. तुम्हारा स्वागत करने के लिए अहर्निश अनाहतनाद हो रहा है। तब क्या मैं तुम्हें प्रसन्न करने के लिए ढोल-मजीरा या शङ्ख बजाऊँ?

७. चारों वेद चारों प्रकार के स्वरों में केवल तुम्हारी स्तुति ही कर रहे हैं। फिर तुम्हारे लिए मैं किस स्तोत्र का पाठ करूँ?

८. समस्त रस तुम्हारे सुवास ही हैं। हे राम ! तब मैं भोग के रूप में तुम्हारे समक्ष कौन-सा पदार्थ रखूँ?

विश्व-प्रार्थना

हे स्नेहमय करुणा-सागर प्रभु !
हे शान्ति के असीम सागर !

१. तुम वरुण, इद्र, ब्रह्मा तथा रुद्र हो।
तुम सबके माता-पिता तथा पितामह हो।
तुम नीलाम्बर, चन्द्रमा तथा तारक-समूह हो।
तुम्हारी जय हो, जय हो, सहस्र बार जय हो !

२. तुम अन्तर्, बाह्य, अधः तथा ऊर्ध्व—सर्वत्र हो।
तुम प्रत्येक दिशा में—पूर्व, पश्चिम तथा चतुर्दिक् हो।
तुम अन्तर्यामी, साक्षी तथा स्वामी हो।
तुम्हारी जय हो, पुनः-पुनः जय हो !

३. तुम सर्वव्यापी तथा अन्तर्व्याप्त हो
पुष्पाहार के सूत्र के समान तुम सूत्रात्मन हो।
तुम जीवन, बुद्धि, विचार अथवा चेतना हो।
मैं तुम्हें प्रत्येक स्थान पर तथा प्रत्येक में देख सकूँ—
इसका आशीर्वाद दो।

४. हे परम महिम मधुर आराध्य सत्ता !
हे सूर्यों के सूर्य, प्रकाशों के प्रकाश, देवों के देव !
मेरी दृष्टि को धुँधला बना देने वाले
अज्ञानावरण को विदीर्ण करो
तथा मुझे अपने साथ एकत्व अनुभव करने की
शक्ति प्रदान करो।

प्रकाशकीय वक्तव्य

योगासनों को जो महत्ता प्राप्त हुई है, उसका स्वरूप द्विविध है। आसन मात्र सर्वतोमुखी शारीरिक व्यायामों का समूह नहीं हैं, वे योगाभ्यास के प्रारम्भिक सोपान भी हैं। शरीर-शोधन के लिए तथा उच्चतर एकता हेतु आवश्यक स्नायविक सन्तुलन के साथ इसकी (शारीरिक शोधन) समस्वरता के लिए आसनों की इन प्रविधियों को हठयोग और राजयोग—दोनों में निर्दिष्ट किया गया है। पातञ्जल योगदर्शन में ध्यानाभ्यास के लिए उपयुक्त किसी विशिष्ट आसन का उल्लेख नहीं है; परन्तु हठयोग में शरीर को स्वस्थ रखने एवं इसके कार्यकलापों में सामञ्जस्य उत्पन्न करने हेतु विभिन्न आसनों के अभ्यास पर बल दिया गया है जिससे कि प्राणायाम के अभ्यास द्वारा प्राण-प्रवाह में सन्तुलन तथा सामञ्जस्य लाने की सूक्ष्मतर प्रक्रिया में यह (अभ्यास) सहायक हो सके। इस प्रकार योगासन योग के मूल रूप के आधार ही हैं।

(ब्रह्मलीन) श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज परम तत्त्व पर ध्यान करने के प्रधान योग में विभिन्न योगों को (सोपानों, अवस्थाओं तथा प्रक्रियाओं के रूप में) मिलाने के लिए विख्यात हैं। उन्होंने इस पुस्तक में योगासनों का वर्णन सीधे-सादे ढङ्ग से किया है जिससे कि सामान्य व्यक्ति भी इन्हें समझ सकें।

इस पुस्तक में अत्यधिक प्राविधिक विवरणों का समावेश सप्रयोजन नहीं किया गया है ताकि सामान्य जन भी इस (पुस्तक) से लाभान्वित हो सकें और उनके लिए सामान्य सांसारिक स्तर से ऊपर उठ कर एक नवीन तथा उच्चतर क्षेत्र में प्रवेश करने का मार्ग प्रशस्त हो सके। महत्त्वपूर्ण आसनों के वर्णन के साथ-साथ उनके चित्र भी दिये गये हैं; फिर भी, किसी प्रशिक्षक के मार्गनिर्देशन में आसनाभ्यास करना उचित होगा।

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज जैसी दिव्य विभूति द्वारा रचित इस ग्रन्थ के पूर्व हिन्दी संस्करणों का हिन्दी पाठकों में आशातीत स्वागत हुआ! आशा है, यह संस्करण भी पाठकों के लिए पूर्ववत् उपयोगी सिद्ध होगा।

—दिव्य जीवन सङ्घ

भूमिका

मैं उस ब्रह्म को करबद्ध कोटि-कोटि प्रणाम करता हूँ जो शरणागतों के समस्त भयों, दुःखों और कष्टों को नष्ट करने वाला है, जो अजन्मा होते हुए भी अपनी महानता से जन्म लेता हुआ प्रतीत होता है, जो अचल होते हुए भी चलायमान लगता है, जो एक होते हुए भी **(एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म)** उन लोगों को अनेक रूप धारण किये प्रतीत होता है जिनकी दृष्टि अनन्तविध मिथ्या दृश्यों को देखने से धुँधली पड़ गयी है।

हे आदिनाथ भगवान् शिव ! सर्वप्रथम मैं आपको प्रणाम करता हूँ जिन्होंने पार्वती जी को हठयोग (जो परमोत्कृष्ट राजयोग को उपलब्ध करने का एक सोपान है) की शिक्षा दी थी।

गोरक्ष तथा मत्स्येन्द्र हठयोग भली प्रकार जानते थे। योगी स्वात्माराम ने उनकी ही कृपा से यह योग उनसे सीखा। योग की इस शाखा के अज्ञानान्धकार में जो भटक रहे हैं, हठयोग का ज्ञान प्राप्त करने में जो असमर्थ हैं, उन्हें परम दयालु स्वात्माराम योगी हठविद्या का प्रकाश प्रदान करते हैं।

जीवन का लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार है। भारतीय दर्शन की समस्त प्रणालियों का एक ही लक्ष्य है—पूर्णता द्वारा आत्मा की मुक्ति।

प्रत्येक मनुष्य सुख चाहता है तथा दुःख से बचता है। कोई किसी को सुख प्राप्त करने का उपाय नहीं सिखाता। सुख की खोज करना मानव का अन्तर्निष्ठ स्वभाव है। आनन्द मनुष्य का स्वरूप ही है।

इच्छाओं की पूर्ति से मन को वास्तविक शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती, यद्यपि उससे स्नायुओं को क्षणिक प्रसन्नता का अनुभव अवश्य होता है। जिस प्रकार अग्नि पर घी डालने से अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार विषय-भोग करने से इच्छाएँ तीव्र होती हैं तथा मन और अधिक अशान्त हो जाता है। जो पदार्थ दिक्काल तथा कारणत्व से अनुबन्धित होने के कारण विनाशी तथा अनित्य हैं, उनसे यथार्थ स्थायी सुख की आशा कैसे की जा सकती है ?

विषय-पदार्थों से प्राप्त सुख क्षणिक तथा अनित्य होता है। एक दार्शनिक के लिए यह सुख कदापि सुख नहीं है—यह खुजलाहट अनुभव होने पर शरीर को खुजलाने के समान है। विषय-सुख के साथ ही कठिन श्रम, पाप, भय, पीड़ा, चिन्ता

तथा अनेक बुराइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

सांसारिक कार्यकलापों के कोलाहल तथा उनकी प्रचण्ड हलचल के बीच रहते हुए भी जीवन में शान्ति के कुछ ऐसे क्षण आते हैं, जब मन कुछ समय के लिए दूषित सांसारिकता से ऊपर उठ कर जीवन की उच्चतर समस्याओं पर मनन करता है—'मैं कौन हूँ?', 'यह संसार किन-किन उपादानों से, कहाँ से, कब और क्यों उत्पन्न हुआ?' आदि। सच्चे जिज्ञासु गम्भीरतापूर्वक अपने चिन्तन के क्षेत्र को और अधिक विस्तृत कर लेते हैं। वे सत्य का अन्वेषण करने तथा उसे समझने के प्रयास में जुट जाते हैं। उनमें विवेकोदय होता है। वे आत्मज्ञान-सम्बन्धी पुस्तकों के अध्ययन में रत हो जाते हैं, चिन्तन-मनन करते हैं, निदिध्यासन करते हैं, अपने मन को शुद्ध करते हैं तथा अन्ततोगत्वा सर्वोच्च आत्मज्ञान को प्राप्त कर लेते हैं। जिनका मन सांसारिक वासनाओं तथा लालसाओं से सन्तृप्त रहता है, वे असावधान रहते हैं। वे राग-द्वेष की तरङ्गों से बलात् दोलायित होते रहते हैं तथा जन्म-मरण और उसकी सहगामी बुराइयों के विक्षुब्ध संसार-सागर में असहाय हो कर हिचकोले खाते रहते हैं।

अध्यात्म-मार्ग कण्टकाकीर्ण तथा अधःपाती है। इस पर दृढ़ सङ्कल्प, निर्भीक मनोवृत्ति तथा अदम्य शक्ति वाले व्यक्ति ही चल पाये हैं। यदि एक बार आप इस मार्ग पर चलने का निश्चय कर लें, तो प्रत्येक वस्तु सुगम एवं सरल हो जायेगी और आपके ऊपर भगवत्कृपा अवतरित होगी। समस्त आध्यात्मिक संसार आपका समर्थन करेगा। यह मार्ग आपको सीधे असीम परमानन्द, परम शान्ति, शाश्वत जीवन तथा शाश्वत प्रकाश के उन लोकों में ले जायेगा जहाँ आत्मा को यातना देने वाले त्रिताप, चिन्ताएँ, परेशानियाँ तथा भय प्रवेश करने का साहस नहीं करते; जहाँ जाति, धर्म, वर्ण आदि के समस्त विभेद एक दिव्य प्रेम में विलीन हो जाते हैं और जहाँ कामनाएँ तथा स्पृहाएँ पूर्णतः तृप्त हो जाती हैं।

जिस प्रकार एक ही कोट जॉन, दास अथवा अहमद को फिट नहीं आ सकता, उसी प्रकार एक ही मार्ग सब लोगों के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता। चार प्रकार के स्वभाव वाले लोगों के लिए चार मार्ग उपयुक्त होते हैं। वे सब मार्ग एक ही लक्ष्य की ओर ले जाते हैं और वह लक्ष्य है परम सत्ता की प्राप्ति। मार्ग अलग-अलग हैं; किन्तु गन्तव्य-स्थान एक ही है। कर्मपरायण, भक्तिपरायण, रहस्यविद् तथा दार्शनिक (विवेकशील)—इन चार प्रकार के व्यक्तियों के विभिन्न दृष्टिकोणों से परम सत्य की प्राप्ति हेतु जिन चार मार्गों का बोध कराया गया है, वे हैं (क्रमशः) कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग तथा ज्ञानयोग।

ये चार मार्ग एक-दूसरे के विरोधी नहीं, वरन् परस्पर पूरक हैं। इसका तात्पर्य यह है कि हिन्दू-धर्म की विभिन्न पद्धतियों में परस्पर सामञ्जस्य है। धर्म के द्वारा पूर्ण मानव—उसका हृदय, बुद्धि और हाथ—विकसित तथा प्रशिक्षित होना चाहिए। एकपक्षीय विकास वाञ्छनीय नहीं है। कर्मयोग मल (मन के विकारों) का निवारण, मन को शुद्ध तथा हाथों को विकसित करता है। भक्तियोग विक्षेप को दूर करके हृदय को विकसित करता है। राजयोग मन को स्थिर तथा एकाग्र करता है। ज्ञानयोग अविद्या के आवरण को हटा कर इच्छा-शक्ति एवं विवेक को विकसित करता है तथा आत्मज्ञान उत्पन्न करता है। अतएव मनुष्य को चारों प्रकार के योगों का अभ्यास करना चाहिए। अध्यात्म-मार्ग पर ठीक प्रगति करने के लिए ज्ञानयोग को प्रमुख तथा अन्य योग-प्रणालियों को उसका सहायक बनाया जा सकता है।

'योग' शब्द का अर्थ है—जीवात्मा तथा परमात्मा का मिलन। जो विद्या इस गुह्य ज्ञान को प्राप्त करने का मार्ग बतलाती है, वह योगशास्त्र कहलाती है। हठयोग का सम्बन्ध शरीर से एवं श्वास-नियन्त्रण से है। राजयोग मन से सम्बन्धित है। राजयोग तथा हठयोग एक-दूसरे के अनिवार्य पूरक हैं। पूर्णयोगी बनने के लिए दोनों का ही व्यावहारिक ज्ञान होना आवश्यक है। जहाँ भली प्रकार से अभ्यास किये हुए हठयोग की समाप्ति होती है, वहीं से राजयोग का प्रारम्भ होता है।

'हठ' शब्द 'ह' तथा 'ठ'—इन दो अक्षरों से बना हुआ संयुक्त शब्द माना जाता है। 'ह' का अर्थ है चन्द्रमा (इड़ा-नाड़ी) तथा 'ठ' का अर्थ है सूर्य (पिङ्गला-नाड़ी)। ये दोनों नाड़ियाँ बायें-दायें नासारन्ध्रों से प्रवाहित होने वाले श्वासों के अनुरूप हैं। हठयोग सूर्य तथा चन्द्र एवं प्राण तथा अपान को श्वास के नियमन द्वारा जोड़ने का उपाय बतलाता है।

हठयोग स्वास्थ्य तथा दीर्घायु प्राप्त करने में सहायक है। इसके अभ्यास से हृदय, फेफड़ों, मस्तिष्क तथा पाचन-तन्त्र की क्रियाएँ नियमित होती हैं। पाचन तथा रुधिर-परिसञ्चरण की क्रियाएँ भी भली प्रकार होती रहती हैं। वृक्क (गुरदे), यकृत तथा अन्य आन्तराङ्ग भी सुचारु रूप से कार्य करने लगते हैं। हठयोग समस्त प्रकार के रोगों को दूर करता है।

इस पुस्तक में योगशास्त्र द्वारा निर्धारित ९० शारीरिक आसनों, महत्त्वपूर्ण बन्धों तथा मुद्राओं एवं प्राणायाम के प्रकारों का वर्णन है। प्राणायाम का अभ्यास आसनों से साथ-साथ ही किया जाता है। योग के प्रथम दो अङ्ग यम तथा नियम हैं। आसन अष्टाङ्गयोग का तृतीय अङ्ग तथा प्राणायाम चतुर्थ अङ्ग है। प्राचीन ऋषियों ने आध्यात्मिक संस्कृति की रक्षा करने एवं उच्चस्तरीय स्वास्थ्य, बल तथा

स्फूर्ति को बनाये रखने में सहायक उपकरणों के रूप में इनका प्रतिपादन किया था।

साधारण शारीरिक व्यायामों से केवल शरीर की बाह्य आभासी मांसपेशियों का विकास होता है। उनके अभ्यास से आकर्षक डील-डौल वाला पहलवान बना जा सकता है। किन्तु आसनों के माध्यम से शरीर के आन्तरिक अङ्गों—यथा यकृत, प्लीहा, अग्न्याशय, अँतड़ियों, हृदय, फेफड़ों, मस्तिष्क—तथा शरीर की उपापचय व्यवस्था, उसके चयापचय की स्वस्थता तथा उसके विभिन्न प्रकार के कोशाणुओं और ऊतकों की संरचना, विकास एवं पोषण में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करने वाली महत्त्वपूर्ण वाहिनीहीन (अन्तःस्रावी) ग्रन्थियों (यथा, गरदन के मूल पर स्थित. अवटु-ग्रन्थि तथा परावटु-ग्रन्थि, प्लीहा में स्थित अधिवृक्क-ग्रन्थि, मस्तिष्क में स्थित पीयूष-ग्रन्थि तथा शंकुरूप-ग्रन्थि) का सम्पूर्ण व्यायाम हो जाता है।

योगासनों की प्रविधियों में सम्बन्धित विस्तृत निर्देश और उनके चित्र इस पुस्तक में दिये गये हैं। इसे पढ़ कर कोई भी व्यक्ति योगासनों का अभ्यास कर सकता है।

भारतवर्ष को इस समय बलवान् और स्वस्थ मानव-प्रजाति की आवश्यकता है। कई कारणों से इसमें ह्रास आ गया है। हमारे प्राचीन ऋषियों द्वारा बताये हुए इन अमूल्य व्यायामों का नियमित एवं विवेचित अभ्यास निश्चय ही मानव-प्रजाति को पुनरुज्जीवित करने तथा एवं शक्तिशाली एक स्वस्थ पीढ़ी के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करता है।

'स्थिरसुखमासनम्'—आसन वह है जो स्थिर तथा सुखदायक हो। इससे कोई दुःखदायी अनुभूति अथवा कष्ट नहीं होना चाहिए। यदि आसन स्थिर न हो, तो मन शीघ्र ही विक्षुब्ध हो जायेगा तथा उसकी एकाग्रता समाप्त हो जायेगी। शरीर चट्टान के समान स्थिर होना चाहिए तथा इसे किञ्चित् भी नहीं हिलना चाहिए। आसन स्थिर होने से ध्यानाभ्यास में प्रगति होगी तथा शरीर की चेतना समाप्त हो जायेगी।

प्राचीनकालीन गुरुकुलों में इन आसनों का अभ्यास कराया जाता था। इसी कारण लोग बलवान्, स्वस्थ तथा दीर्घायु होते थे। विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में इन आसनों का प्रचार होना चाहिए।

आसनों की संख्या उतनी ही है, जितनी इस सृष्टि में जीवों की योनियाँ हैं (८४ लाख)। भगवान् शिव के द्वारा बताये हुए आसनों की संख्या ८४ लाख है।

उनमें से ८४ आसन सर्वश्रेष्ठ हैं और इन (८४ आसनों) में से ३२ आसन मानव-जाति के लिए अत्यन्त उपयोगी माने गये हैं।

चौरासी लाख योनियों से हो कर मानव अपनी वर्तमान स्थित में पहुँचा है। मानव-गर्भ का भली प्रकार अध्ययन करने से भूतकाल की विभिन्न योनियों के चिह्न प्रकट होंगे।

कुछ आसन खड़े हो कर किये जाते हैं यथा—ताड़ासन, त्रिकोणासन, गरुड़ासन आदि। जिन आसनों का अभ्यास बैठ कर किया जाता है, वे हैं—पश्चिमोत्तानासन, जानुशिरासन, पद्मासन, लोलासन आदि। कुछ आसनों का अभ्यास लेट कर किया जाता है; ये आसन हैं—उत्तानपादासन, कर्णपीड़ासन, चक्रासन आदि। दुर्बल एवं सुकुमार व्यक्ति लेट कर आसनों का अभ्यास कर सकते हैं। कुछ आसनों जैसे शीर्षासन, वृक्षासन, सर्वाङ्गासन, विपरीतकरणीमुद्रा आदि का अभ्यास शिर नीचे और पैर ऊपर करके किया जाता है।

सामान्यतः इन आसनों का अभ्यास दश-बारह वर्ष की आयु के बाद से ही किया जा सकता है। बीस-तीस वर्ष की आयु वाले व्यक्ति इन सब आसनों का अभ्यास भली प्रकार कर लेते हैं। एक-दो महीने के अभ्यास के पश्चात् समस्त कठोर नाड़ियाँ, कण्डराएँ, मांसपेशियाँ तथा अस्थियाँ लचीली बन जाती हैं। वृद्धजन भी समस्त प्रकार के आसनों का अभ्यास कर सकते हैं। हाँ, यदि वे शारीरिक रूप से स्वस्थ न हों, तो शीर्षासन का अभ्यास करना उनके लिए आवश्यक नहीं है। दूसरी ओर, कुछ लोग वृद्धावस्था में शीर्षासन भी करते हैं।

वेदान्ती इस कारण आसन-प्राणायाम का अभ्यास करने से भय खाते हैं कि इससे देहाध्यास गहन होगा और वैराग्य-साधना में बाधा पड़ेगी। यद्यपि हठयोग तथा वेदान्त परस्पर बिलकुल भिन्न हैं, फिर भी वेदान्ती अपने सर्वोत्तम लाभ के लिए प्राणायामों के साथ आसनों को सम्मिलित कर सकता है। मैंने कई वेदान्तियों को अस्वस्थ दशा, क्षीणकाय तथा जर्जरावस्था में देखा है। वे कोई भी कठोर वेदान्ती साधना नहीं कर पाते। वे यन्त्रवत् ॐ, ॐ, ॐ का उच्चारण मात्र कर सकते हैं। उनमें इतनी आन्तरिक शक्ति नहीं होती कि शुद्ध सात्त्विक अन्तःकरण से अपनी ब्रह्माकार-वृत्ति को ऊपर उठा सकें। शरीर मन से अत्यधिक सम्बन्धित है। दुर्बल तथा रोगी शरीर का अर्थ दुर्बल मन भी होता है। यदि वेदान्ती अपने शरीर-मन को सबल तथा स्वस्थ बनाये रखने के लिए प्राणायाम और आसनों का थोड़ा अभ्यास कर ले, तो वह भली प्रकार निदिध्यासन करके उत्कृष्ट आध्यात्मिक साधना सम्पन्न कर सकता है। यद्यपि शरीर जड़ तथा निःसार है, तदपि

आत्मसाक्षात्कार के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है। इस उपकरण को निर्मल, हृष्ट-पुष्ट तथा स्वस्थ रखा जाना चाहिए। आपको आपके लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए यह शरीर एक घोड़े के समान है। यदि घोड़ा ठोकर खा कर गिर पड़े तो आप अपने गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुँच सकते हैं। यदि यह साधन (शरीर) निर्बल हो जाता है, तो आप अपने आत्मसाक्षात्कार के लक्ष्य को नहीं प्राप्त कर सकेंगे।

षट्कर्मों के नियमित अभ्यास से शुद्धि होती है। ये षट्कर्म हैं—धौति, वस्ति, नेति, नौलि, त्राटक तथा कपालभाति।

आसनों से शक्ति प्राप्त होती है तथा मुद्रा से स्थिरता। प्रत्याहार धैर्य प्रदान करता है। प्राणायाम का अभ्यास करने से शरीर हलका हो जाता है। ध्यान से आत्म-साक्षात्कार होता है। समाधि निर्लिप्तता अर्थात् कैवल्य प्रदान करती है।

इतिहास के आदिकाल से अनेक असाधारण घटनाएँ मानव-जगत् में घटित होती मानी गयी हैं। पाश्चात्य देशों में वैश्व-चेतना शीर्षक के अन्तर्गत कई धार्मिक व्यक्तियों के अनुभव अङ्कित किये गये हैं। कुशल तान्त्रिकों ने सूक्ष्म शरीर को स्थूल शरीर से पृथक् करने की घटना प्रदर्शित की। सतही ज्ञान रखने वाले कुछ वैज्ञानिक जब विभिन्न प्रकार की योग की अलौकिक घटनाओं के समझने में असमर्थ हो जाते हैं, तब इनकी उपेक्षा करने का प्रयत्न करने लगते हैं। अनेक समझदार वैज्ञानिक ऐसी असाधारण घटनाओं (जो कठोर योगाभ्यासों का परिणाम हैं) का अध्ययन, अनुसन्धान तथा सामान्यीकरण करने हेतु प्रयत्नशील हैं। मानव अपनी अन्तर तथा बाह्य प्रकृति पर नियन्त्रण स्थापित करके अपने को दिव्यता में तत्त्वान्तरित कर सकता है।

वाराणसी के (ब्रह्मलीन) त्रैलिङ्ग स्वामी, आलन्दी के ज्ञानदेव, राजा भर्तृहरि, चाङ्गदेव—इन सभी ने योग-साधना द्वारा अपने-आपको ईश्वरत्व के स्तर तक उठा लिया था। जो-कुछ किसी एक ने प्राप्त किया है, लगन से प्रयत्न करने पर हम सभी उसे प्राप्त कर सकते हैं। यह माँग और पूर्ति का प्रश्न है। माँग प्रबल होने पर उसकी पूर्ति तुरन्त हो जाती है। प्रश्न यह है—क्या आपमें ईश्वर की माँग है? क्या आपमें आध्यात्मिक पिपासा तथा क्षुधा है?

आप सबमें सदा-सर्वदा सुख, परमानन्द, अमरता, शान्ति, मनस्थैर्य, महिमा तथा वैभव निवास करें!

विषय-सूची

विषय	: पृष्ठ-संख्या
देवी-स्तोत्र	3
गुरु-स्तोत्र	3
परा-पूजा	4
विश्व-प्रार्थना	5
प्रकाशकीय वक्तव्य	6
भूमिका	7

प्रथम अध्याय

सूर्य-नमस्कार . . . . ३ से ६

द्वितीय अध्याय

ध्यान के लिए आसन . . . . ७ से १३

सामान्य निर्देश	७
१. पद्मासन	८
२. सिद्धासन	१०
३. स्वस्तिकासन	११
४. सुखासन	१२

तृतीय अध्याय

मुख्य आसन . . . . १४ से ४९

५. शीर्षासन	१४
६. सर्वांगासन	१८
७. हलासन	२०
८. मत्स्यासन	२२
९. पश्चिमोत्तानासन	२३

१०. मयूरासन २४
११. अर्ध-मत्स्येन्द्रासन २७
१२. शलभासन २८
१३. भुजङ्गासन २९
१४. धनुरासन ३१
१५. गोमुखासन ३२
१६. वज्रासन ३४
१७. गरुड़ासन ३७
१८. ऊर्ध्व पद्मासन ३७
१९. पादांगुष्ठासन ३९
२०. त्रिकोणासन ४०
२१. बद्धपद्मासन ४१
२२. पादहस्तासन ४२
२३. मत्स्येन्द्रासन ४४
२४. चक्रासन ४६
२५. शवासन ४७

चतुर्थ अध्याय

विविध आसन . . . . .५० से ७३
२६. जानुशीर्षासन ५०
२७. तोलांगुलासन ५१
२८. गर्भासन ५१
२९. ससाङ्गासन ५२
३०. सिंहासन ५२
३१. कुक्कुटासन ५३
३२. गोरक्षासन ५३
३३. कन्दपीड़ासन ५४
३४. सङ्कटासन ५५
३५. योगासन ५५

३६. उत्कटासन ५५
३७. ज्येष्टिकासन ५६
३८. अद्वासन ५६
३९. ऊर्ध्वपादासन ५६
४०. उष्ट्रासन ५७
४१. मकरासन ५७
४२. भद्रासन ५७
४३. वृश्चिकासन ५७
४४. योगनिद्रासन ५८
४५. अर्ध-पाद्रासन ५८
४६. कोकिलासन ५८
४७. कर्णपीड़ासन ५८
४८. वातायनासन ५९
४९. पर्यंकासन ५९
५०. मृतासन ५९
विशेष निर्देश ६०
आसनों का उपयोग (तालिका) ७२

पञ्चम अध्याय

महत्त्वपूर्ण मुद्राएँ और बन्ध . . . . ७४ से ८०
१. महामुद्रा ७४
२. योगमुद्रा ७४
३. खेचरीमुद्रा ७५
४. वज्रोलीमुद्रा ७६
५. विपरीतकरणीमुद्रा ७६
६. शक्तिचालनमुद्रा ७७
७. महावेध ७७
८. महाबन्ध ७७
९. मूलबन्ध ७८

१०. जालन्धरबन्ध ७८
११. उड्डीयानबन्ध ७९
१२. योनिमुद्रा ८०

षष्ठ अध्याय

प्राणायाम-विज्ञान . . . . .८१ से ९२
१. कपालभाति ८२
२. सूर्यभेद ८३
३. उज्जायी ८४
४. सीत्कारी ८४
५. शीतली-प्राणायाम ८५
६. भस्त्रिका-प्राणायाम ८५
७. भ्रामरी ८७
८. मूर्च्छा ८७
९. प्लावनी ८७
१०. केवल-कुम्भक ८८
प्राणायाम के लाभ ८९
प्राणायाम-सम्बन्धी सङ्केत ८९

योग-परिशिष्ट

कुण्डलिनी ९५
अभ्यास-क्रम एवं दिनचर्या ९६
महत्त्वपूर्ण संकेत ९९
योगासनों की विस्तृत सूची १०१

योगासन

प्रथम अध्याय

सूर्य-नमस्कार

सूर्य-नमस्कार की प्रणाली लयबद्ध श्वसन के साथ कई प्रकार के योगासनों, द्रुतगति, सूर्य-स्नान तथा दिव्य शक्ति (जिसका प्रतिनिधित्व सूर्य करता है) के प्रार्थनामय चिन्तन का सम्मिश्रण है। सूर्य-नमस्कार का अभ्यास सम्पूर्ण संसार को प्रकाश, जीवन, आनन्द तथा ऊष्मा प्रदान करने वाले प्रातःकालीन सूर्य की ओर मुँह करके तथा उसकी प्राणदायिनी किरणों से समग्र शरीर को निमज्जित करते हुए किया जाता है।

सूर्य-नमस्कार के अन्तर्गत १२ आसन किये जाते हैं। प्रत्येक आसन की क्रिया अपने से आगामी आसन की क्रिया में सहज एवं सौम्य रूप से प्रवहणशील रहती है। सूर्य-नमस्कार का अभ्यास करते समय शरीर को ओजपूर्ण गति करनी पड़ती है। इससे मांसपेशियाँ निर्मित होती हैं; परन्तु साथ ही, इस अभ्यास में योग के इस महत्त्वपूर्ण नियम का भी ध्यान रखा जाता है कि शरीर पर कोई अनावश्यक जोर न पड़े। इसका परिणाम एक असाधारण तथा अनूठे प्रभाव के रूप में सामने आता है—अर्थात् सूर्य-नमस्कार का अभ्यास करने के पश्चात् (मात्र शारीरिक संवर्धन करने वाले व्यायाम आदि करने के परिणाम-स्वरूप शरीर पर पड़े हुए प्रभाव के असमान) अभ्यासी का शरीर थकता नहीं तथा वह पूर्ण रूप से ताजगी अनुभव करता है।

इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात उस आन्तरिक भावदशा से सम्बन्धित है जिसमें रहते हुए सूर्य-नमस्कार का अभ्यास किया जाता है। अभ्यास करते समय प्रत्येक छोटी-से-छोटी गति के प्रति जागरूक रहते हुए शरीर, विशेषकर मेरुदण्ड, में होने वाले प्रत्येक परिवर्तन का ध्यान रखा जाता है। ऐसा होने देने के लिए अभ्यास की अवधि में मन को शान्त तथा सहज रहना चाहिए। कुछ महीनों के अभ्यास के पश्चात् इस प्रकार की जागरूकता (सतर्कता) विकसित हो जाती है।

प्रविधि

१. सीधे खड़े हो जायें। वक्षस्थल के सामने हाथों को जोड़ें—जिस प्रकार प्राच्य ढङ्ग से अभिवादन किया जाता है। श्वास बाहर निकालें।

२. अपनी दोनों भुजाओं को सीधा रखते हुए शिर के ऊपर ले जायें तथा धड़ को उसके आधार से धीर-धीरे यथासम्भव पीछे की ओर झुकायें। ऐसा करते समय श्वास अन्दर लें। यदि आप इस गति के अन्त में श्वास छोड़ेंगे तो आपको और अधिक झुकने में सहायता मिलेगी।

३. श्वास छोड़ते हुए ऊपर की ओर उठें और आगे की ओर झुकें। मेरुदण्ड में खिंचाव उत्पन्न करें। घुटनों को सीधा रखते हुए अपनी हथेलियाँ भूमि पर समतल रखें। उँगलियाँ सामने की ओर पैरों के समानान्तर रखें। चेहरा दोनों घुटनों के बीच में रखें।

४. श्वास अन्दर लेते हुए, दाहिने पैर को पीछे की ओर ले जायें। बायें पैर को घुटने से मोड़ें तथा (इस पैर की) जाँघ को धड़ के बिलकुल निकट रखें। ऊपर की ओर देखें। श्वास अन्दर लें।

५. बायें पैर को पीछे की ओर ले जायें। पीठ और भुजाएँ सीधी रखें। श्वास छोड़ें।

६. श्वास छोड़ते हुए कोहनियों को मोड़ें। शरीर को फर्श की ओर लायें। माथे, सीने, हथेलियों, घुटनों और पैरों की उँगलियों से फर्श को स्पर्श करें। शरीर के अन्य अङ्ग फर्श को स्पर्श नहीं करेंगे। श्रोणीय झुकाव रखते हुए नितम्बों को ऊपर उठाये रखें।

७. शिर को ऊपर और पीछे की ओर ले जायें। भुजाओं को सीधा करें और मेरुदण्ड को यथासम्भव पीछे की ओर झुकायें। श्वास अन्दर लें।

८. श्वास बाहर निकालते हुए कूल्हों को ऊपर और पीछे की ओर उठायें। शरीर को अँगरेजी के उलटे 'वी' अक्षर के आकार में ले आयें तथा पैरों और हथेलियों को फर्श पर रखें।

९. दाहिने पैर को आगे की ओर ले आयें तथा (दाहिनें पैर के) तलवे को दोनों हथेलियों के बीच फर्श पर समतल रखें (क्रम-संख्या ४ के समान)। श्वास अन्दर लें।

१०. बायें पैर को आगे ले जायें, घुटनों को सीधा कर लें तथा शिर नीचे की ओर करें (क्रम-संख्या ३ के समान)। श्वास छोड़ें।

११. श्वास अन्दर लें। शरीर को सीधा करें। अपनी भुजाओं को सीधा

रखते हुए शिर के ऊपर ले जायें तथा शरीर को पीछे की ओर यथासम्भव मोड़ें (क्रम-संख्या २ के समान)।

१२. सीधे खड़े हो जायें (क्रम-संख्या १ के समान)। सामान्य ढङ्ग से खड़े होने की स्थिति में आ जायें।

प्रतिदिन प्रातःकाल सूर्य-नमस्कार के अभ्यास की कम-से-कम १२ आवृत्तियाँ करें (एक आवृत्ति में उपर्युक्त क्रमानुसार १२ आसन होते हैं)।

१२ आवृत्तियाँ पूरी करने के पश्चात् फर्श पर पीठ के बल लेट जायें। पैरों की उँगलियों तथा शिर के ऊपरी भाग के बीच के प्रत्येक अङ्ग को एक-एक करके शिथिल करें। इसे शवासन कहते हैं। प्रारम्भ में यदि अभ्यासी तीन या चार आवृत्तियों के बाद थकने लगे तो उसे आवृत्तियों की संख्या शनैः-शनैः (प्रतिदिन या प्रति दो दिन में एक-एक करके) बढ़ानी चाहिए। उसे इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी कारण से शरीर के किसी भी भाग पर अधिक जोर न पड़े। आवृत्तियों की संख्या अपनी क्षमता के अनुसार बढ़ानी चाहिए। कुछ अभ्यासी अधिक थकान का अनुभव किये बिना एक-साथ ही १०८ आवृत्तियाँ पूरी कर लेते हैं।

सूर्य-नमस्कार का अभ्यास आरम्भ करने से पूर्व अभ्यासी को सर्वशक्तिमान् सूर्य भगवान् से निम्नाङ्कित प्रार्थना करनी चाहिए :

सूर्य-प्रार्थना

ॐ सूर्यं सुन्दरलोकनाथममृतं वेदान्तसारं शिवं
ज्ञानं ब्रह्ममयं सुरेशममलं लोकैकचित्तं स्वयम्।
इन्द्रादित्यनराधिपं सुरगुरुं त्रैलोक्यचूड़ामणिं
ब्रह्माविष्णुशिवस्वरूपहृदयं वन्दे सदा भास्करम्॥

मैं सदा सूर्य भगवान् की वन्दना करता हूँ, जो सुन्दर लोकनाथ हैं; अमर हैं; वेदान्त के सार, मङ्गलकारी तथा स्वतन्त्र ज्ञान-स्वरूप एवं ब्रह्ममय अपि च देवताओं के अधिपति हैं; जो नित्य शुद्ध हैं; जो जगत् के एकमात्र चैतन्य हैं; जो इन्द्र, मनुष्यों तथा देवताओं के अधिपति और देवताओं के गुरु हैं; जो तीनों लोकों के चूड़ामणि हैं तथा जो ब्रह्मा, विष्णु और शिव के हृदय-स्वरूप और प्रकाश देने वाले हैं।

सूर्य पृथ्वी के निवासियों के लिए अत्यन्त देदीप्यमान् तथा जीवनदायिनी

शक्ति है। यह अप्रकट सर्वशक्तिमान् ईश्वर का दृश्य प्रतिनिधि है। अधिकांश मानव किसी मूर्त पदार्थ अथवा विचार की सहायता के बिना अनुभवातीत परम तत्त्व का चिन्तन नहीं कर सकते। उनके लिए सूर्य पूजा तथा ध्यान का सर्वोत्तम विषय है।

इस प्रकार सूर्य-नमस्कार मानव के लिए अत्यन्तावश्यक शरीर, मन तथा आत्मा के भव्य तथा सम्पूर्ण संवर्धन की आधारशिला प्रस्तुत करता है।

द्वितीय अध्याय

ध्यान के लिए आसन

सामान्य निर्देश

जप और ध्यान के लिए चार आसन निर्धारित हैं। ये हैं—पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन और सुखासन।

इन चारों में से किसी भी एक आसन में शरीर को बिना हिलाये लगातार तीन घण्टे तक बैठने में समर्थ होना चाहिए। तभी आप आसन-जय प्राप्त कर सकेंगे। तत्पश्चात् आप प्राणायाम और ध्यान का अभ्यास आरम्भ कर सकेंगे। स्थिर आसन प्राप्त किये बिना ध्यान-योग में आप भली प्रकार आगे नहीं बढ़ सकते। आपको आसन में जितनी अधिक स्थिरता प्राप्त होगी, उतना ही अधिक आप मन को एकाग्र कर सकेंगे। यदि आप एक घण्टा भी आसन-मुद्रा में स्थिर रह सकें तो आप चित्त की एकाग्रता को और उसके फल-स्वरूप अनन्त शान्ति तथा आत्मिक आनन्द को प्राप्त कर सकेंगे।

ध्यान-मुद्रा में बैठने पर यह विचार करें कि 'मैं चट्टान के समान दृढ़ हूँ, कोई भी शक्ति मुझे नहीं हिला सकती।' यदि मन को अनेक बार यह निर्देश देते रहें, तो आसन शीघ्र स्थिर हो जायेगा। ध्यान के लिए बैठने पर आपको सजीव मूर्ति के समान हो जाना चाहिए। तभी आपके आसन में यथार्थ स्थिरता आयेगी। वर्ष-भर के नियमित अभ्यास से आपको सफलता मिलेगी और फिर आसन में लगातार तीन घण्टे तक आप बैठ सकेंगे। आधे घण्टे से आरम्भ करें और धीरे-धीरे अभ्यास का समय बढ़ाते जायें।

यदि कुछ समय बाद टाँगों में तीव्र पीड़ा होने लगे तो तुरन्त टाँगों को खोल कर पाँच मिनट तक हाथों से मालिश कर लें और पुनः आसन में बैठ जायें। आसन में प्रगति कर लेने पर आप पीड़ा का अनुभव नहीं करेंगे। आप पीड़ा के स्थान में अत्यधिक आनन्द का अनुभव करेंगे। प्रातः एवं सायं दोनों समय आसन का अभ्यास करें।

आसन में बैठ जाने पर नेत्र बन्द कर लें, भृकुटी अथवा त्रिकुटी (अर्थात्

दोनों भौहों के मध्य भाग) या हृदय-प्रदेश पर, जिसे अनाहत-चक्र कहते हैं, दृष्टि को केन्द्रित करें। त्रिकूट (आज्ञा-चक्र) मन का स्थान है। इस स्थान पर कोमलता से अर्थात् बिना बल लगाये ध्यान लगाने से सरलतापूर्वक मन को वश में किया जा सकता है। आपको तुरन्त एकाग्रता प्राप्त होगी। नासिकाग्र पर मन को एकाग्र करने (नासिकाग्र-दृष्टि) से भी वही लाभ होगा; किन्तु इसमें मन को जमाने में अधिक समय लगेगा। जो लोग भृकुटी अथवा नासाग्र-भाग पर दृष्टि नहीं जमा सकते वे किसी बाह्य बिन्दु अथवा हृदय, शिर, ग्रीवा आदि आन्तरिक चक्रों पर जमा सकते हैं। त्रिकूट (आज्ञा-चक्र) पर दृष्टि जमाने को भ्रूमध्य-दृष्टि भी कहा जाता है।

शिर, गरदन और धड़ के ऊपरी भाग मेरुदण्ड को एक सीधी समरेखा में रखें। पद्म, सिद्ध, स्वस्तिक अथवा सुख में से किसी भी एक आसन के अभ्यास में टिके रहें और बारम्बार अभ्यास के द्वारा उसे बिलकुल दृढ़ एवं त्रुटिहीन बना लें। आसन कभी न बदलें। एक ही आसन के अभ्यास में दृढ़तापूर्वक लगे रहें। उसमें जोंक की भाँति चिपक जायें। ध्यान के लिए एक हीं आसन अपनाने के पूर्ण लाभ को भली प्रकार से समझ लें।

१. पद्मासन

पद्म का अर्थ है कमल। इस आसंन का प्रदर्शन करने पर यह एक प्रकार से कमल-जैसा प्रतीत होता है, इसलिए इसका नाम पद्मासन रखा गया है। इसे कमलासन भी कहते हैं।

जप और ध्यान के लिए निर्दिष्ट चार आसनों में से पद्मासन सर्वोपरि है। यह ध्यानाभ्यास करने के लिए सर्वश्रेष्ठ आसन है। घेरण्ड, शाण्डिल्य आदि ऋषियों ने इस महत्त्वपूर्ण आसन की अत्यधिक प्रशंसा की है। यह गृहस्थियों के लिए अत्यधिक अनुकूल है। इस आसन में स्त्रियाँ भी बैठ सकती हैं। पद्मासन दुबले-पतले तथा युवा मनुष्यों के लिए भी उपयुक्त है।

प्रविधि

टाँगों को आगे फैला कर भूमि पर बैठें। फिर दायाँ पैर बायीं जङ्घा पर और बायाँ पैर दायी जङ्घा पर रखें। अब हाथों को जानु-सन्धियों पर रखें।

आप दोनों हाथों की अँगुलियों का ताला बना कर बँधे हाथों को बायें टखने पर रख सकते हैं। यह कुछ व्यक्तियों के लिए बहुत ही सुखकर है। या

आप फिर अपना दायाँ हाथ दायें घुटने पर और बायाँ हाथ बायें घुटने पर रख सकते हैं। इसमें हथेलियाँ ऊपर की ओर होनी चाहिए और तर्जनी अँगूठे के मध्य भाग को छूती हुई होनी चाहिए। इसे चिन्मुद्रा कहते हैं।

पद्मासन के प्रकार

(१) अर्धपद्मासन

यदि आप आरम्भ में अपने दोनों पैरों को जङ्घाओं पर न रख सकें, तो कुछ देर तक कभी एक पैर एक जङ्घा पर तथा कुछ देर तक दूसरा पैर दूसरी जङ्घा पर रखें। कुछ दिन अभ्यास करने से आप अपने दोनों पैरों को जङ्घाओं पर रख सकेंगे। यह अर्धपद्मासन है।

(२) वीरासन

आराम से बैठ कर, दायाँ पैर बायीं जङ्घा पर तथा बायाँ पैर दायीं जङ्घा के नीचे रखें। गौराङ्ग महाप्रभु इसी आसन में ध्यान के लिए बैठा करते थे। यह आरामदायक मुद्रा है। वीरासन का अर्थ वीर-मुद्रा।

(३) पर्वतासन

साधारण पद्मासन लगा कर घुटनों के बल खड़े हो जायें और अपने हाथों को ऊपर उठायें। यह पर्वतासन है। फर्श पर एक मोटा कम्बल बिछा कर यह आसन करें ताकि घुटनों पर चोट न लगे। प्रारम्भ में, जब तक आप सन्तुलन प्राप्त न कर लें, कुछ दिनों के लिए आप स्टूल या बेञ्च का सहारा ले सकते हैं। बाद में आप हाथों को ऊपर उठा सकते हैं।

वीरासन में बैठ कर हाथों को ऊपर उठायें और स्थिर हो जायें। कुछ लोग इसे भी पर्वतासन कहते हैं।

(४) समासन

बायीं एड़ी को दायीं जङ्घा के सिरे पर और दायीं एड़ी को बायीं जङ्घा के सिरे पर रखें। आराम से बैठें। दायीं या बायीं किसी भी ओर न झुकें। यह समासन कहलाता है।

(५) कार्मुकासन

साधारण पद्मासन लगायें। दायें हाथ से दायें पैर का अँगूठा और बायें हाथ से बायें पैर का अँगूठा पकड़ें। इस प्रकार अपने हाथों की कोहनी पर कैंची बना लें।

(६) उत्थित पद्मासन

पद्मासन में बैठ कर अपनी दोनों हथेलियों को अपने दोनों ओर भूमि पर टेक लें। धीरे-धीरे शरीर को उठायें, झटका नहीं लगने पाये, न शरीर काँपे। इस उठी हुई स्थिति में जितनी देर ठहरें, श्वास को रोके रखें। नीचे आने पर आप श्वास को बाहर निकाल सकते हैं। जो लोग कुक्कुटासन नहीं कर सकते, वे यह आसन कर सकते हैं। इसमें हाथ पार्श्व (side) में रखे जाते हैं जबकि कुक्कुटासन में हाथ जङ्घा और पिण्डलियों के बीच में रखे जाते हैं। इन दोनों में इतना ही अन्तर है।

(७) बद्धपद्मासन

कुछ लोग इसे पद्मासन-मुद्रा भी कहते हैं।

(८) ऊर्ध्वपद्मासन

(९) लोलासन

(१०) कुक्कुटासन

(११) तोलांगुलासन

२. सिद्धासन

पद्मासन के बाद महत्त्व की दृष्टि से सिद्धासन आता है। कुछ लोग इस आसन को ध्यान के लिए पद्मासन से भी अधिक उपयोगी मानते हैं। यदि आप इस आसन को सिद्ध कर लें तो आपको अनेक सिद्धियाँ उपलब्ध हो जायेंगी। कई प्राचीन सिद्ध-योगियों ने इस आसन का अभ्यास किया था, इसी कारण इसका नाम सिद्धासन पड़ा।

भारी ज़ङ्घाओं वाले स्थूल जन भी इस आसन को सरलतापूर्वक लगा सकते हैं। वस्तुतः यह आसन कुछ लोगों को पद्मासन की अपेक्षा अधिक उपयोगी लगता है। युवक ब्रह्मचारियों, जो ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना चाहते हैं, को इस आसन का अभ्यास करना चाहिए। महिलाओं के लिए यह आसन उपयुक्त नहीं है।

प्रविधि

बायें या दायें पैर की एड़ी को गुदा से थोड़ा ऊपर सीवनी के मध्य में, जो कि पाचन-नली का अन्तस्थल द्वार है, रखें। दूसरी ऐड़ी को जननेन्द्रिय की जड़

पर रखें। पैर और टाँगों को इतने अच्छे ढङ्ग से जमायें कि टखनों के जोड़ एक-दूसरे को छूते रहें। हाथों को उसी प्रकार रखें जिस प्रकार उन्हें हम पद्मासन में रखते हैं।

सिद्धासन के विभिन्न प्रकार

(१) गुप्तासन

बायीं एड़ी को जननेन्द्रिय के ऊपर रखें। इसी प्रकार दायीं एड़ी को भी जननेन्द्रिय के बाहरी अङ्ग पर रखें। दोनों टखने आमने-सामने या एक-दूसरे से सटे रहें। दाहिने पैर की अँगुलियों को बायीं जङ्घा और बायीं पिण्डलियों के बीच खाली भाग में डाल दें और बायें पैर की अँगुलियों को दायीं टाँग से ढक दें। गुप्त का अर्थ है छिपा हुआ। इस आसन से जननेन्द्रिय को भली-भाँति ढका जाता है, इसलिए इसे गुप्तासन कहा जाता है।

(२) वज्रासन

बायीं एड़ी को जननेन्द्रिय के नीचे और दायीं एड़ी को इसके ऊपर रखें। वज्र का अर्थ है सुदृढ़। वज्रासन का एक और प्रकार भी है। इस सम्बन्ध में अलग से अन्यत्र निर्देश दिये गये हैं।

(३) बद्धयोन्यासन

साधारण सिद्धासन में बैठ जायें और योनि-मुद्रा करें। यह बद्धयोन्यासन है। योनि-मुद्रा का वर्णन अन्य मुद्राओं के साथ किया गया है।

(४) क्षेमासन

सिद्धासन में बैठ कर यदि आप अपने दोनों हाथों को सीने की सीध में ऊपर को उठाते हैं तो इसे क्षेमासन कहा जाता है। इसका अर्थ है कि आप मानव-कल्याण के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। इसमें हथेलियाँ आपस में आमने-सामने होनी चाहिए।

(५) स्थिरासन

कुछ लोग साधारण सिद्धासन को ही स्थिरासन कहते हैं।

(६) मुक्तासन

साधारण सिद्धासन को मुक्तासन भी कहते हैं।

३. स्वस्तिकासन

स्वस्तिकासन का आशय है, शरीर को सीधा रख कर आराम से बैठना।

प्रविधि

टाँगों को आगे फैला कर बैठें, फिर बायीं टाँग को मोड़ कर इस पैर को दायीं जङ्घा की पेशियों के पास रखें। इसी प्रकार दायीं टाँग को मोड़ कर उसे बायीं जङ्घा तथा पिण्डलियों की मांसपेशियों के मध्य वाले खाली स्थान में रख दें। अब आपके दोनों पैर जङ्घाओं तथा टाँगों की पिण्डलियों के बीच में हो जायेंगे। ध्यान के लिए यह आसन अति-सुखद है। हाथों को पद्मासन की भाँति रखें।

४. सुखासन

जप और ध्यान के लिए किसी भी आनन्ददायक आसन को सुखासन कहते हैं। इसमें महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिर, गरदन और धड़ सीधे समरेखा में बिना मुड़े रहने चाहिए। जो लोग ३०-४० वर्ष की आयु के बाद जप तथा ध्यान प्रारम्भ करते हैं, वे सामान्यतया पद्म, सिद्ध अथवा स्वस्तिकासन में अधिक समय तक नहीं बैठ पाते हैं। अब मैं सुखासन का एक ऐसा सुन्दर तथा सरल रूप बताता हूँ जिसमें वृद्ध लोग भी देर तक बैठ कर ध्यान लगा सकते हैं। यह सुखासन विशेषकर उन वृद्ध लोगों के लिए उपयुक्त है, जो निरन्तर प्रयत्न करने पर भी देर तक पद्म या सिद्ध आसन में बैठने में असमर्थ हैं। युवक लोग भी इस आसन का अभ्यास कर सकते हैं।

प्रविधि

पाँच हाथ लम्बा वस्त्र ले कर उसे लम्बाईवार इस प्रकार मोड़ें कि उसकी चौड़ाई आधा हाथ मात्र रह जाये। दोनों पैरों को अपनी जङ्घाओं के नीचे रखते हुए साधारण तरीके से बैठ जायें। दोनों घुटनों को अपने सीने के समकक्ष उस समय तक ऊपर उठाते रहें जब तक कि दोनों घुटनों के बीच में ८-१० इञ्च का अन्तर नहीं रह जाता। अब उस मोड़े हुए कपड़े को ले कर उसका एक छोर बायें घुटने के पास रखें। फिर उसे बायीं ओर से पीठ के पीछे से ला कर दायें घुटने की ओर से लाते हुए आरम्भ के बिन्दु पर ला कर दोनों सिरों को गाँठ बाँध दें। अपनी दोनों हथेलियों को परस्पर आमने-सामने रखते हुए उन्हें घुटनों के बीच में रखें। इस आसन में हाथ, पैर और रीढ़ की हड्डी को सहारा मिलता है; इसलिए आपको कभी थकान अनुभव नहीं होगी। यदि आप कोई अन्य आसन नहीं कर सकते तो कम-से-कम इस आसन में बैठ कर देर तक जप-ध्यान कीजिए।

सुखासन के प्रकार

(१) पवनमुक्तासन

बैठ कर दोनों एड़ियाँ मिलायें एवं दोनों घुटनों को छाती तक उठायें। अब आप दोनों हाथों से घुटने बाँध दें।

(२) वाम पवनमुक्तासन

इसमें केवल बायें घुटने को ही भूमि से ऊपर उठाया जाता है और उसे पवनमुक्तासन की भाँति दोनों हाथों से बाँधा जाता है।

(३) दक्षिण पवनमुक्तासन

इस आसन में दायें घुटने को उठाया जाता है और उसे हाथों से बाँधा जाता है तथा बायीं टाँग को भूमि पर रखा जाता है।

उपर्युक्त तीनों आसन भूमि पर लेटे हुए किये जा सकते हैं।

(४) भैरवासन

वाम पवनमुक्तासन में बैठें और दोनों घुटनों को हाथों से बाँधने के बजाय हाथों को केवल जङ्घाओं के पार्श्व में पैरों के समीप रख लें।

पद्म, सिद्ध और स्वस्तिक आसनों के लाभ

हठयोग-सम्बन्धी ग्रन्थों में पद्म और सिद्ध आसनों के गुणों तथा लाभों की अत्यधिक प्रशंसा की गयी है। जो व्यक्ति इनमें से किसी भी आसन में नित्य प्रति १५ मिनट तक भी नेत्र मूँद कर हृदय-कमल में परमात्मा का ध्यान करता है उसके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और वह शीघ्र ही मोक्ष को प्राप्त करता है। इन आसनों से पाचन-शक्ति बढ़ कर भूख लगती है तथा स्वास्थ्य एवं सुख में वृद्धि होती है। इनसे गठिया रोग दूर होता है एवं वात, पित्त, कफ आदि त्रिदोष सन्तुलित रहते हैं। इनसे टाँगों और जङ्घाओं की नाड़ियाँ शुद्ध तथा शक्तिशाली होती हैं। ये ब्रह्मचर्य-पालन के लिए अति-उपयुक्त हैं।

तृतीय अध्याय

मुख्य आसन

५. शीर्षासन

शीर्षासन के अन्य नाम भी हैं जैसे कपाल्यासन, वृक्षासन और विपरीतकरणी। यह आसन सब आसनों का राजा है।

प्रविधि

एक कम्बल को चार तह करके बिछा लें। दोनों घुटनों के बल बैठें और अँगुलियों को एक-दूसरे में डाल कर ताला-सा बनायें और उसे कोहनी तक भूमि पर रखें। अब शिर के ऊपरी भाग को इन अँगुलियों के ताले पर अथवा दोनों हाथों के बीच में रखें। धीरे-धीरे टाँगों को उठायें जब तक कि वे सीधी स्थिति में न हो जायें। प्रारम्भ में पाँच सेकण्ड तक इस स्थिति में खड़े रहें। धीरे-धीरे प्रति सप्ताह १५ सेकण्ड बढ़ाते रहें और उस समय तक बढ़ाते रहें जब कि आप २० मिनट या आधा घण्टे तक इसे न लगा सकें। फिर धीरे-धीरे टाँगें नीचे ले आयें। शक्तिशाली लोग दो-तीन महीने में ही इस आसन को आधा घण्टे तक करने लगते हैं। इसे धीरे-धीरे करें। मन में बेचैनी मत रखें। चित्त को शान्त रखें। आपके सामने शाश्वतता है। इस कारण शीर्षासन के अभ्यास में शिथिलता मत करें। यह आसन खाली पेट करना चाहिए। यदि आपके पास समय हो, तो इसे प्रातः-सायं दोनों समय करें। इस आसन को बहुत धीरे-धीरे करें और झटका मत लगने दें। शिर के बल खड़े होने पर नासिका द्वारा धीरे-धीरे श्वास लेना चाहिए, मुँह के द्वारा कभी श्वास नहीं लेना चाहिए।

हथेलियों को शिर के दोनों ओर भूमि पर रख कर भी यह आसन किया जा सकता है। यदि आपका शरीर स्थूल है, तो इस प्रकार से आसन लगाना आपके लिए सरल रहेगा। सन्तुलन सीखते समय अँगुलियों की ताले वाली पद्धति अपनानी चाहिए। जो लोग पैरेलल बार्स पर या भूमि पर सन्तुलन रख सकते हैं, उन लोगों के लिए यह आसन कठिन नहीं है। अभ्यास करते समय आप अपने

मित्र से टाँगें सीधी रखने के लिए सहायता ले लें या आरम्भ में दीवार का सहारा ले लें।

अभ्यास के प्रारम्भ में किसी-किसी को कुछ उत्तेजना-सी हो सकती है, किन्तु शीघ्र ही यह दूर हो जाती है। इससे प्रसन्नता और आनन्द की प्राप्ति होती है। आसन पूरा हो चुकने पर पाँच मिनट तक थोड़ा विश्राम करें और फिर एक प्याला दूध पी लें। जो लोग देर तक अर्थात् २० मिनट या आधे घण्टे तक इस आसन का अभ्यास करते हों, उन्हें आसन लगाने के बाद किसी भी प्रकार का हलका नाश्ता, दूध या अन्य कुछ अवश्य ले लेना चाहिए। यह बहुत जरूरी है, अपरिहार्य है। गरमी की ऋतु में इस आसन का अभ्यास अधिक देर तक नहीं करना चाहिए। सर्दी में स्वेच्छानुसार देर तक आप यह आसन लगा सकते हैं।

कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो इस आसन को एक बार में दो-तीन घण्टे तक करते हैं। बदरीनारायण के पण्डित रघुनाथ शास्त्री को इस आसन में बहुत रुचि थी और वे इसका अभ्यास २ या ३ घण्टे तक करते थे। वाराणसी के एक योगी तो इस आसन में समाधिस्थ भी हो जाते थे। श्री जसपत राय, पी० वी० आचार्य जी महाराज एवं अन्य सत्पुरुष निममित रूप से इस आसन को एक बार में ही एक घण्टे से अधिक समय तक करते थे।

लाभ

यह आसन ब्रह्मचर्य की साधना के लिए अति-लाभप्रद है। यह आपको ऊर्ध्वरेता बनाता है। इससे वीर्य-ऊर्जा आध्यात्मिक ओज-शक्ति में परिणत हो जाती है। इसे काम-वासना का उदात्तीकरण भी कहते हैं। इससे स्वप्न-दोष से मुक्ति मिलती है। इस आसन से ऊर्ध्वरेता योगी वीर्य-शक्ति को आध्यात्मिक शक्ति में परिणत होने के लिए ऊपर की ओर मस्तिष्क में प्रवाहित करते हैं। इससे उन्हें ध्यान तथा भजन में सहायता मिलती है। इस आसन को करते समय ऐसा विचार करें कि वीर्य ओज में रूपान्तरित हो कर मस्तिष्क में सञ्चित होने के लिए मेरुदण्ड में प्रवाहित हो रहा है। शीर्षासन से स्फूर्ति और शक्ति बढ़ती है तथा सजीवता आती है।

शीर्षासन वास्तव में एक वरदान और अमृततुल्य है। इसके लाभप्रद परिणामों एवं प्रभावों का वर्णन करने के लिए कोई शब्द नहीं है। केवल इसी आसन से मस्तिष्क को प्रचुर मात्रा में प्राण और रक्त प्राप्त हो सकते हैं। यह

आकर्षण-शक्ति के विरुद्ध कार्य करके हृदय से प्रचुर मात्रा में रक्त खींचता है। इससे स्मरण-शक्ति में प्रशंसनीय वृद्धि होती है। वकील, सिद्ध पुरुष और चिन्तकों के लिए यह आसन बहुत उपयोगी है। इस आसन द्वारा स्वाभाविक रूप से प्राणायाम और समाधि उपलब्ध हो जाते हैं; किसी अन्य प्रयत्न की अपेक्षा नहीं होती। यदि आप श्वास पर ध्यान दें तो आपको विदित होगा कि यह उत्तरोत्तर सूक्ष्म होता जाता है। अभ्यास के आरम्भ में श्वास लेने में कुछ कठिनाई प्रतीत होगी, किन्तु अभ्यास के बढ़ने पर यह कठिनाई बिलकुल समाप्त हो जायेगी और इस आसन से आप वास्तविक आनन्द और आत्मिक स्फूर्ति का अनुभव करेंगे।

शीर्षासन के बाद ध्यान हेतु बैठने से महान् लाभ होता है। अनाहत-शब्द स्पष्ट रूप से सुनायी देने लगता है। हृदय-पुष्ट नवयुवकों को यह आसन करना चाहिए। इस आसन से प्राप्त होने वाले लाभ असंख्य हैं। इस आसन का अभ्यास करने वालों को अधिक सहवास नहीं करना चाहिए।

यह आसन सर्वरोगनाशक रामबाण औषधि है। यह मानसिक शक्तियों को प्रकाशित करता, कुण्डलिनी-शक्ति को जाग्रत करता, आन्त्र और उदर-सम्बन्धी सब रोगों को दूर करता और मानसिक शक्ति को बढ़ाता है। यह शक्तिशाली रक्तशोधक तथा उत्तेजना शान्त करने वाला टानिक है। इसके अभ्यास से नेत्र, नाक, गला, शिर, पेट, मूत्राशय, जिगर, तिल्ली, फेफड़े, वृक्कशूल, बहरापन, सुजाक, मधुमेह, बवासीर, दमा, क्षयरोग, आतशक इत्यादि रोग दूर हो जाते हैं। इससे पाचन-शक्ति (जठराग्नि) बढ़ती है। इस आसन से चेहरे की झुर्रियाँ तथा भूरापन दूर हो जाता है। योगतत्त्वोपनिषद् के अनुसार, 'जो मनुष्य इस आसन को लगातार तीन घण्टे तक करते हैं, वे काल पर विजय पा लेते हैं।' स्त्रियाँ भी इस आसन का अभ्यास कर सकती हैं। उनके गर्भाशय तथा डिम्ब-सम्बन्धी रोग, यहाँ तक कि बाँझपन भी दूर हो जाते हैं। प्राणायाम और जप इस आसन के साथ-साथ चलने चाहिए। इस आसन के अभ्यास-काल में अपने इष्ट-मन्त्र या गुरु द्वारा दिये हुए मन्त्र का जप करते रहना चाहिए।

भगवान् कृष्ण के इन अमूल्य शब्दों को सदा याद रखें— **"तस्माद्योगी भव"** अर्थात् इसलिए तू योगी हो (गीता, अध्याय ६, श्लोक ४६)।

टिहरी राज्य (हिमालय) के स्वर्गीय महाराजा के निजी सचिव श्री प्रकाश जङ्ग के पैरों में सूजन थी और उन्हें हृदय-रोग था। चिकित्सकों ने निदान किया कि रक्तसञ्चारण-कार्य में उनके हृदय की मांसपेशियाँ भली-भाँति सिकुड़ तथा फैल

नहीं सकती थीं। तब उन्होंने नियमित रूप से कुछ दिन शीर्षासन का अभ्यास किया। उनके पैरों की सारी सूजन दूर हो गयी। उनका हृदय भी भली प्रकार कार्य करने लगा। उनके कोई दर्द नहीं रहा। वे इस आसन को नित्य आधा घण्टा करते थे।

लखीमपुर खीरी के वकील पं० सूर्यनारायण यह आसन नित्य करते थे। इससे उनकी स्मरण-शक्ति प्रबल हो गयी और कमर तथा कन्धों का जीर्ण सन्धिवात पूर्ण रूप से जाता रहा।

शीर्षासन के प्रकार

(१) वृक्षासन,

(२) विपरीतकरणी-मुद्रा, और

(३) कपाल्यासन

ऊपर वर्णित शीर्षासन को इन तीन नामों से भी जाना जाता है।

(४) अर्ध वृक्षासन

जिस प्रकार आप शीर्षासन में खड़े होते हैं, ठीक वैसे ही खड़े हो कर घुंटनों के जोड़ों से टाँगों को मोड़ लें और उन्हें जङ्घाओं के पास रखें।

(५) मुक्त हस्त-वृक्षासन

अँगुलियों का ताला न बना कर, हाथों को शिर के दोनों ओर भूमि पर रखें।

(६) हस्त-वृक्षासन

इस आसन में आपको केवल दोनों हाथों पर खड़ा होना पड़ता है। सर्वप्रथम अपनी टाँगों को दीवार पर लगा दें और केवल हाथों पर खड़े हो जायें। धीरे-धीरे टाँगों को दीवार से दूर हटाने की कोशिश करें। कुछ दिनों में सन्तुलन सधने लगेगा।

(७) एकपाद वृक्षासन

शीर्षासन करने के बाद, धीरे-धीरे घुटने पर एक टाँग को झुकायें और एड़ी को दूसरी जङ्घा पर रखें।

(८) ऊर्ध्व पद्मासन

६. सर्वांगासन

यह एक रहस्यपूर्ण आसन है और आश्चर्यजनक लाभ देता है। इसे सर्व अङ्गों का आसन कहते हैं; क्योंकि इस आसन को करते समय शरीर के सब अङ्ग कार्य करने लगते हैं।

प्रविधि

भूमि पर एक मोटा कम्बल बिछा लें और उस पर यह आसन करें। पीठ के बल सीधे लेट जायें। धीरे-धीरे टाँगों को उठायें। धड़, कूल्हों तथा टाँगों को बिलकुल सीधे उठायें। पीठ को दोनों ओर से हाथों से सहारा दें। कोहनियों को भूमि पर टिकायें। ठोड़ी को सीने पर दबा कर दृढ़ता से ठोड़ी का ताला बना लें। इसे जालन्धर-बन्ध कहते हैं। पीठ, कन्धों तथा गरदन को भूमि से सटा कर लगा लें। शरीर को हिलने अथवा इधर-उधर मत होने दें। टाँगों को सीधा रखें। आसन पूरा हो चुकने पर टाँगों को धीरे-धीरे आराम से नीचे लायें। इसमें झटका नहीं लगना चाहिए। इस आसन को बड़ी शालीनतापूर्वक करें। इस आसन में शरीर का सारा बोझ कन्धों पर रहता है। वास्तव में आप कोहनियों के सहारे से कन्धों पर खड़े होते हैं। गरदन के सामने निचले भाग वाले लगे के पास गलग्रन्थि पर ध्यान केन्द्रित कर के श्वास को सुविधापूर्वक जितना रोका जा सके, रोकें। फिर, नासिका द्वारा धीरे-धीरे उसे बाहर निकाल दें।

यह आसन नित्य दो-तीन बार प्रातः एवं सायं कर सकते हैं। इस आसन के तुरन्त पश्चात् मत्स्यासन करना चाहिए। इससे गरदन के पीछे के हिस्से का दर्द ठीक हो जाता है और सर्वाङ्गासन की उपयोगिता में वृद्धि हो जाती है। प्रारम्भ में इस आसन का अभ्यास केवल दो मिनट तक करना चाहिए। धीरे-धीरे इसे आधे घण्टे तक बढ़ाया जा सकता है।

लाभ

इस आसन में गलग्रन्थि (Thyroid Gland) का अच्छी प्रकार से पोषण होता है, जिसका कि शारीरिक परिवर्तन, विकास, पोषण और संरचना में महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वस्थ गलग्रन्थि का अर्थ है—रक्तवह, श्वास, आहार, जनन-मूत्र तथा स्नायविक तन्त्रों की स्वस्थ क्रिया। यह गलग्रन्थि श्लेष्मीय ग्रन्थि, मस्तिष्क में

स्थित शंकुरूप ग्रन्थि, वृक्कों के ऊपर स्थित अधिवृक्कग्रन्थि, यकृत, प्लीहा, अण्डग्रन्थि आदि वाहिनी-हीन ग्रन्थियों के सहयोग से कार्य करती है। यदि यह गलग्रन्थि रुग्ण हो जाती है तो अन्य सभी ग्रन्थियाँ इससे पीड़ित हो जाती हैं। इस प्रकार एक दुश्चक्र बन जाता है। सर्वाङ्गासन गलग्रन्थि (Thyroid Gland) को स्वस्थ रखता है। स्वस्थ गलग्रन्थि से शरीर के सभी अङ्गों की क्रियाएँ समुचित रूप से होती रहती हैं।

मैंने सैकड़ों लोगों को यह आसन सिखाया है। मैंने शीर्ष-सर्वाङ्गासन का प्रचार किया है। जो लोग मेरे पास आते हैं, मैं निरपवाद रूप से उन्हें इन्हीं दो आसनों को पश्चिमोत्तानासन के साथ करने के लिए कहता हूँ। ये ही तीन आसन आपको पूर्ण स्वस्थ रख सकते हैं। इनको करने से दूर तक टहलने अथवा शारीरिक व्यायाम करने की कोई आवश्यकता नहीं रहती। सभी ने मुझे एकमत से इस आसन के रहस्यमय, आश्चर्यजनक, लाभदायक परिणाम बताये हैं। इस आसन के समाप्त होते ही आपके शरीर में एक नवीन प्रकार की स्फूर्ति और स्वस्थ भाव की अनुभूति होती है। यह एक आदर्श ओजप्रद आसन है।

इस आसन से मेरुदण्डीय स्नायुओं के मूल को प्रचुर मात्रा में रक्त उपलब्ध होता है। इसी आसन से रीढ़ (spinal column) में रक्त केन्द्रित हो कर उसका उत्तम रूप से पोषण करता है। इस आसन के अभाव में इन तन्त्रिका मूलों को पर्याप्त मात्रा में रक्त प्राप्त करने का और कोई अवसर नहीं है। इससे रीढ़ बहुत लचीली रहती है। रीढ़ के लचीला रहने का अर्थ है—सदा युवा बने रहना। इस आसन से रीढ़ में शीघ्र कड़ापन नहीं आता है; अतः इस आसन से आप चिरकाल तक युवा बने रह सकते हैं। वृद्धावस्था के सभी उपद्रव इस आसन द्वारा समाप्त हो जायेंगे। ब्रह्मचर्य को सुरक्षित रखने में यह आसन प्रचुर सहायता प्रदान करता है। शीर्षासन की भाँति, यह आसन भी आपको ऊर्ध्वरेता योगी बना देता है। यह आसन स्वप्नदोष पर प्रभावकारी ढङ्ग से नियन्त्रण रखता है। यह प्रभावशाली रक्त-पोषक एवं रक्त-शोधक टानिक का कार्य करता है। यह नाड़ियों को शक्ति प्रदान करता है। यह आसन अत्यन्त सस्ता और सरलता से उपलब्ध होने वाला, रक्त एवं उत्तेजना को शान्त करता करने वाला तथा पाचन-शक्ति को बढ़ाने वाला एक टानिक है। यह सदा आपको प्राप्त है। इसके अभ्यास से आप डाक्टरों के बिलों के भुगतान से बच जायेंगे। जब आपके पास आसनों के कोर्स को पूरा करने के लिए समय न हो, तो आप इस आसन को शीर्षासन तथा पश्चिमोत्तानासन

के साथ प्रतिदिन अवश्यमेव करते रहें। यह सुजाक तथा मूत्राशय एवं स्त्रियों के डिम्ब-सम्बन्धी रोगों के लिए बहुत उपयोगी है। इससे बाँझपन एवं गर्भाशय-सम्बंन्धी रोग दूर हो जाते हैं। महिलाएँ भी इस आसन को बिना किसी हानि के कर सकती हैं। सर्वाङ्गासन से कुण्डलिनी जाग्रत होती है और जठराग्नि तीव्र होती है। यह बदहजमी (मन्दाग्नि), मलरोध (कब्ज) एवं अन्य जठरतन्त्र-सम्बन्धी पुराने रोगों को दूर कर के शक्ति, स्फूर्ति तथा नव-जीवन प्रदान करता है। शीर्ष-सर्वाङ्गासन का कोर्स प्रभावशाली ढङ्ग से नव-जीवन प्रदान करता है।

७. हलासन

इस आसन को करते समय ठीक हल-जैसी स्थिति हो जाती है।

प्रविधि

भूमि पर एक मोटा कम्बल बिछा कर कमर के बल लेट जायें, हाथों को दोनों ओर भूमि पर रखें, हथेलियों को भूमि की ओर करके दोनों टाँगों को मिला लें और उन्हें धीरे-धीरे ऊपर को उठायें। टाँगों को मुड़ने मत दें और हाथों को ऊपर मत उठायें। धड़ को भी मत झुकने दें। इस प्रकार अधिककोण बना लें। इसके बाद धीरे-धीरे टाँगों को नीचे करें और उन्हें शरीर के ऊपर को मोड़ते जायें जब तक पाँव की अँगुलियाँ भूमि को न छू लें। घुटनों को मिला कर बिलकुल सीधे रखें। टाँगें और जङ्घाएँ एक सीधी रेखा में रहनी चाहिए। ठोड़ी को सीने पर दबा दें और धीरे-धीरे नासिका द्वारा श्वास लें। मुँह के द्वारा श्वास नहीं लेना चाहिए।

इस आसन को करने की एक विधि और है। उपर्युक्त मुद्रा बनाने के बाद, धीरे-धीरे हाथों को उठा कर पैरों की अँगुलियों को पकड़ लें। यह एक श्रेष्ठतर विधि है। इसमें किसी प्रकार का झटका नहीं लगना चाहिए। आसन समाप्त हो जाने पर धीरे-धीरे टाँगों को उठा कर उन्हें भूमि पर सीधे लेटने वाली प्रारम्भिक स्थिति में ले आयें।

लाभ

इस आसन से रीढ़ के स्नायु, कमर की मांसपेशियाँ, कशेरुकाएँ एवं मेरुदण्ड के उभयपार्श्व में फैले हुए अनुकम्पी स्नायु-तन्त्र स्वस्थ रहते हैं। यह आसन सर्वाङ्गासन का पूरक तथा गुणवर्धक है। इससे रक्त पर्याप्त मात्रा में

मेरुदण्डीय स्नायु के मूल में, मेरु-रज्जु, अनुकम्पी गण्डिकाओं, अनुकम्पी तन्त्रिकाओं एवं पीठ की मांसपेशियों में जमा होता है; इसलिए उनका पोषण अच्छी तरह होता है। इस आसन से मेरुदण्ड बहुत अधिक मुलायम एवं लचीला हो जाता है। यह आसन कशेरुका-अस्थियों को शीघ्र कठोर होने से रोकता है। अस्थियों के कठोर होने से हड्डियों में जल्दी अपक्षय पैदा होता है। अस्थियों के शीघ्र कठोर होने से बुढ़ापा जल्दी आता है। इस अपक्षय-अवस्था में हड्डियाँ कठोर एवं टूटने वाली होती हैं। हलासन करने वाला व्यक्ति अधिक फुरतीला, तेज एवं बलवान् होता है। इससे पीठ की मांसपेशियाँ बारी-बारी से सिकुड़ती, ढीली होती, खिंचती तथा फैलती हैं; अतः वे इन विभिन्न गतियों से अच्छी मात्रा में रक्त प्राप्त करती और भली-भाँति पोषित होती हैं। इस आसन के अभ्यास से पेशी-शूल, कटिवात, मोच, तन्त्रिका-शूल आदि रोग दूर हो जाते हैं।

इस आसन के करने से मेरुदण्ड कोमल एवं लचीला बनता है। यह आकुञ्चित तथा वेल्लित हो जाता है, मानो कैनवास चादर का एक टुकड़ा हो। हलासन का अभ्यास करने वाला व्यक्ति आलसी कभी नहीं बन सकता। हमारे शरीर में मेरुदण्ड एक बहुत महत्त्वपूर्ण संरचना है। यह सम्पूर्ण शरीर को अवलम्ब देता है। इसमें मेरु-रज्जु, मेरु-तन्त्रिका एवं अनुकम्पी तन्त्र अन्तर्विष्ट हैं। हठयोग में रीढ़ को मेरुदण्ड कहते हैं। अतः आपको इसे हलासन के अभ्यास से स्वस्थ, पुष्ट एवं लचीला बनाना चाहिए। इससे पेट, मलाशय एवं जङ्घाओं की पेशियाँ भी स्वस्थ बनती एवं पोषित होती हैं। इस आसन से मोटापा, जीर्ण मलावरोध, गुल्म, रक्त-संकुलता तथा यकृत और प्लीहा की वृद्धि के रोग ठीक हो जाते हैं।

हलासन के प्रकार

उत्तानपादासन

लेट जायें। टाँगों को सीधा रखें एवं हाथों को अपने बगल में तथा हथेलियों को जमीन पर रखें। अब टाँगों एवं घुटनों को न झुकने देते हुए आप अपनी दोनों टाँगों को एक-साथ सीधे जमीन से दो फीट ऊपर उठायें। धीरे-धीरे उन्हें नीचे करें। इस प्रकार छः बार अभ्यास करें। इस आसन से आपके मलावरोध तथा कूल्हों एवं जाँघों के दर्द दूर हो जायेंगे। यह सर्वाङ्गासन का एक प्रारम्भिक अभ्यास है।

८. मत्स्यासन

चूँकि प्लाविनी-प्राणायाम के साथ यह आसन जल पर सरलतापूर्वक तैरने में सहायक होता है, अतः इसे मत्स्यासन कहते हैं।

प्रविधि

एक कम्बल बिछा लें। दायाँ पैर बायीं जङ्घा पर और बायाँ पैर दायीं जङ्घा पर रख कर पद्मासन में बैठें। फिर कमर के बल सीधे लेट जायें। प्रबाहुओं की कैंची बना कर उस पर शिर रख लें। यह एक प्रकार है।

शिर को पीछे की ओर खींचें जिससे एक ओर आपके शिर का शीर्ष भाग तथा दूसरी ओर केवल नितम्ब भाग दृढ़तापूर्वक भूमि पर टिक जायें और इस प्रकार धड़ का एक पुल या चाप-सा बन जाये। हाथों को जङ्घाओं पर रखें अथवा उनसे पैरों की अँगुलियाँ पकड़ लें। इसमें आपको गरदन को अधिक-से-अधिक मोड़ना पड़ेगा। पहले की अपेक्षा यह प्रभेद अधिक प्रभावशाली है। इस प्रकार के मत्स्यासन के लाभ पहले वाले प्रभेद से सौ गुणा अधिक हैं।

भारी पिण्डली वाले स्थूलकाय लोग जिन्हें पद्मासन लगाने में कठिनाई होती है, साधारण रूप से बैठ कर ही इस आसन का अभ्यास कर सकते हैं। ऐसे लोग सर्वप्रथम पद्मासन का अभ्यास करें। उसमें दृढ़ता, सरलता और स्थिरता लायें, इसके बाद वे मत्स्यासन का अभ्यास करें। प्रारम्भ में आप इसे दश सेकण्ड तक करें और फिर दश मिनट तक बढ़ायें।

आसन समाप्त करने पर धीरे-धीरे हाथों के सहारे शिर को शनैः-शनैः निर्मुक्त कर दें और उठ बैठें। फिर पैरों का ताला (पद्मासन) खोल दें।

इस आसन को सर्वाङ्गासन के तुरन्त बाद करना चाहिए। यह गरदन की कठोरता और दीर्घ काल तक सर्वाङ्गासन के अभ्यास से उत्पन्न हुई ग्रीवा-प्रदेश की ऐंठनग्रस्तता से छुटकारा दिलाता है। ग्रीवा और कन्धों के अवष्टब्ध अङ्गों की सहज ही मालिश होती है। इसके अतिरिक्त यह सर्वाङ्गासन का अधिकतम लाभ प्रदान करता है। यह सर्वाङ्गासन का पूरक है। इस आसन से स्वरयन्त्र अथवा वायुकोष्ठ तथा (श्वासप्रणाल (श्वासनली) भरपूर खुल जाने के कारण गहरी श्वास लेने में सहायता मिलती है, फेफड़ों के शीर्ष भाग, जो जत्रुक (जिसे बोलचाल में हँसली कहते है) के ठीक पीछे एवं ऊपर होता है, को समुचित शुद्ध वायु एवं शुद्ध आक्सीजन प्राप्त होते हैं। ग्रीवा एवं उपरि पृष्ठ की स्नायुओं को प्रचुर मात्रा में

रक्त प्राप्त हो कर पोषण मिलता है एवं वे स्वस्थ रहती हैं। इनसे अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ अर्थात् पीयूष (Pituitary) तथा शंकुरूप (Pineal) ग्रन्थियाँ उद्दीप्त तथा स्वस्थ होती हैं। ये ग्रन्थियाँ शरीर के विभिन्न तन्त्रों के शारीरिक प्रकार्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

लाभ

मत्स्यासन अनेक रोगों का नाशक है। इससे मलावरोध दूर होता है। इस आसन को करने से पेट में एकत्रित विष्ठा मलाशय में आ जाती है। यह आसन गहरे श्वसन के कारण दमा, यक्ष्मा, चिरकालिक श्वासनलीशोथ आदि रोगों में उपयोगी है।

९. पश्चिमोत्तानासन

प्रविधि

भूमि पर बैठ कर टाँगों को लकड़ी-जैसी कड़ी करके आगे की ओर फैला लें। दोनों हाथों के अँगूठे, तर्जनी एवं मध्यमा अँगुली से दोनों पैरों के अँगूठों को पकड़ लें। पकड़ते समय आपको धड़ को आगे की ओर झुकाना पड़ेगा। स्थूल शरीर वालों के लिए झुकना कुछ कठिन जान पड़ेगा। श्वास निकालिए एवं बिना झटके के धीरे-धीरे झुकिए जब तक कि मस्तक घुटनों को स्पर्श न कर ले। आप अपने चेहरे को दोनों घुटनों के बीच में भी रख सकते हैं। झुकते समय पेट को अन्दर की ओर खींच लें। इससे आगे की ओर झुकने में सुविधा होगी। धीरे-धीरे अनुक्रमिक रूप से झुकें। इच्छानुसार समय लगायें। कोई जल्दी नहीं है। झुकते समय दोनों भुजाओं के बीच में शिर आ जाना चाहिए और इन्हीं की सीध में यथाशक्ति रोक लेना चाहिए। युवकजन जिनकी कि रीढ़ लचीली है, प्रथम प्रयास में ही अपना मस्तक घुटनों से लगा सकते हैं। वयस्क लोगों को, जिनकी रीढ़ कठोर हो गयी है, इस आसन में पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिए एक पखवाड़ा या एक मास तक लग जाता है। शिर को अपनी पूर्व-स्थिति में ले जाने तक और फिर से सीधे बैठने तक श्वास को रोके रखें। इसके बाद श्वास लें।

प्रथमतः आसन को पाँच सेकण्ड तक रख कर धीरे-धीरे अवधि को १० मिनट तक बढ़ायें।

जिन्हें पूरा पश्चिमोत्तानासन करने में कठिनाई अनुभव होती हो, वे पहले एक टाँग और एक हाथ से तथा बाद में दूसरी टाँग और दूसरे हाथ से आधा आसन

कर सकते हैं। यह उन्हें अधिक सुकर प्रतीत होगा। कुछ समय बाद जब मेरुदण्ड अधिक लचीला हो जाये तब वह पूरा आसन कर सकते हैं। आसनों के अभ्यास-काल में आपको सामान्य बुद्धि का प्रयोग करना होगा। इस आसन का अभ्यास आरम्भ करने से पूर्व जानुशीर्षासन पर दिये हुए निर्देशों को पढ़िए।

लाभ

यह अत्युत्तम आसन है। इससे श्वास ब्रह्म-नाड़ी अर्थात् सुषुम्ना द्वारा चलने लगता है और जठराग्नि उद्दीप्त होती है। इससे पेट की चरबी घटती है। यह आसन मोटापा तथा यकृत और प्लीहा की अपवृद्धि का विशिष्ट उपचार है। हठयोग पर लिखी पुस्तकों में इस आसन की अत्यधिक प्रशंसा की गयी है। जहाँ सर्वाङ्गासन अन्तःस्रावी ग्रन्थि (Endocrine Gland) के उद्दीपन के लिए है, वहाँ पश्चिमोत्तानासन उदर के आन्तराङ्गों यथा वृक्क, यकृत, अग्न्याशय आदि के उद्दीपन के लिए है। यह आन्त्र के क्रमाकुञ्चन में वृद्धि करता है। क्रमाकुञ्चन आन्त्र की कृमिगति है जिससे भोजन और मल को अँतड़ियों के एक भाग से दूसरी ओर धकेला जाता है। इस आसन से मलावरोध दूर होता है। यकृत-मान्द्य, अजीर्णता, डकारें आना तथा आमाशयशोथ के रोग दूर हो जाते हैं। पीठ की अकड़न अथवा कटिवात, सभी प्रकार के पेशीशूल तथा पृष्ठदेश की स्नायुओं के अन्य रोग दूर होते हैं। इस आसन से बवासीर और मधुमेह के रोगों में लाभ होता है। पेट के कुल्हे वाली पेशियाँ, नाड़ियों के सौर-जाल (Solar Plexus of Nerves), नाड़ियों के अधिजठर जाल, मूत्राशय की पुरस्थ ग्रन्थि, कटि-तन्त्रिकाएँ अनुकम्पी-रज्जु—इन सबका इस आसन से उपचार होता है, ये सब स्वस्थ हो कर ठीक स्थिति में रहते हैं। पश्चिमोत्तानासन, शीर्षासन और सर्वाङ्गासन धन्य हैं और धन्य हैं वे ऋषि जिन्होंने हठयोग के विद्यार्थियों के लिए इन आसनों को प्रवर्तित किया।

१०. मयूरासन

संस्कृत में मयूर का अर्थ मोर होता है। इस आसन के करने से आकृति पङ्खों को फैलाये हुए मोर के समान होती है। यह आसन सर्वाङ्गासन तथा मत्स्यासन से कुछ कठिन है। इसके लिए अधिक शारीरिक शक्ति की आवश्यकता होती है। व्यायाम करने वाला व्यक्ति इसे भली प्रकार सरलता से कर

सकता है। यह कुछ अंशों में समानान्तर डण्डों (Parallel Bars) पर किये जाने वाले प्लैंक व्यायाम से मिलता-जुलता है।

प्रविधि

भूमि पर झुक कर पैरों की अँगुलियों के बल बैठें। एड़ियों को ऊँचा उठायें। दोनों प्रबाहुओं को परस्पर मिला लें। दोनों हाथों की हथेलियों को भूमि पर टिका दें। दोनों कनिष्ठिकाएँ परस्पर सन्निकट तथा समानान्तर अथवा सान्निध्य में होनी चाहिए। अँगूठे भूमि को स्पर्श करें। वे पैरों की ओर बाहर निकले हों।

अब धड़ और टाँगों को उठाये रखने के आगामी कार्य में पूरे शरीर को टेक देने के लिए आपकी प्रबाहुएँ दृढ़ और स्थिर हो गयी हैं। अब पेट को धीरे-धीरे संयुक्त कोहनियों पर नीचे लायें। अपने शरीर को अपनी कोहनियों पर टिका दें जो कि नाभि से दबी हुई हैं। यह प्रथम प्रावस्था है। अब टाँगों को फैला कर पैरों को शिर के साथ एक रेखा में करते हुए भूमि के समानान्तर उठायें। यह द्वितीय प्रावस्था है।

नये साधकों को भूमि से पैर उठाने पर सन्तुलन रखना कठिन प्रतीत होता है। सामने एक गद्दी रख लें। कभी-कभी आप सामने की ओर गिर जायेंगे। इससे आपकी नासिका में हल्की चोट भी लग सकती है। जब आप सन्तुलन नहीं रख सकते, तो पार्श्वों में गिरने का प्रयत्न करें। यदि एक बार में दोनों टाँगों को पीछे फैलाना कठिन लगे तो पहले धीरे-धीरे एक टाँग फैलायें, फिर दूसरी फैलायें। यदि आप शरीर को आगे की ओर तथा शिर को नीचे की ओर झुकाना सीख जाते हैं, तो आपके पैर स्वतः ही भूमि से उठ जायेंगे और फिर आप सरलतापूर्वक उन्हें फैला सकेंगे। इस आसन के पूर्ण रूप से प्रदर्शित किये जाने पर शिर, धड़, नितम्ब, जङ्घाएँ, टाँगें और पैर भूमि के समानान्तर आ जायेंगे। यह आसन देखने में बड़ा सुन्दर लगता है।

प्रारम्भ में इस आसन को चारपायी की पट्टियाँ पकड़ कर किया जा सकता है। इस विधि से इस आसन को करना सरल जान पड़ेगा। यदि आप अपनी सामान्य बुद्धि का उपयोग करते हैं, तो आप अधिक कठिनाई के बिना ही सन्तुलन रख सकते हैं। स्थूल शरीर वाले व्यक्तियों को गिरने से बचने के लिए सावधानी बरतनी चाहिए। पैरों को फैलाते समय झटका न दें।

यह आसन पाँच से बीस सेकण्ड तक करें। जिन साधकों में शारीरिक शक्ति अच्छी है, वे दों-तीन मिनट तक इसे कर सकते हैं।

शरीर को उठाते समय श्वास को रोके रखें। इससे आपमें बहुत ताकत आयेगी। आसन की समाप्ति पर श्वास को धीरे से बाहर निकाल दें।

लाभ

मयूरासन का अपने-आपमें एक अद्‌भुत आकर्षण है। यह आपको शीघ्र ही शक्ति प्रदान करता है। कुछ सेकण्ड में ही इससे पूरा व्यायाम हो जाता है। यह एड्रीनेलिन (Adrenalin) अथवा डिजिटेलिन (Digitalin) के हाइपोडरमिक (Hypodermic) अर्थात् अधस्त्वचनीय इञ्जेक्शन का-सा काम करता है।

यह आसन पाचन-शक्ति बढ़ाने के लिए आश्चर्यजनक है। यह अस्वास्थ्यकर भोजन के प्रभाव को नष्ट करता तथा पाचन-शक्ति को बढ़ाता है। भयङ्कर हलाहल विष को भी पचा कर उसके हानिकर प्रभाव को नष्ट करता है। इससे मन्दाग्नि (Dyspepsia) एवं गुल्म आदि उदर के रोग ठीक हो जाते हैं एवं यह अन्तरुदरीय दबाव को बढ़ा कर यकृत तथा प्लीहा की अपवृद्धि को कम करता है। अन्तरुदरीय दबाव की वृद्धि से फेफड़े तथा उदर के समस्त आन्तराङ्ग भली-भाँति स्वस्थ तथा उद्दीप्त होते हैं। यकृत की निष्क्रियता इससे लुप्त हो जाती है। यह अँतड़ियों को आरोग्य रखता, (साधारण, जीर्ण और स्वभावगत) कोष्ठबद्धता को दूर करता और कुण्डलिनी को जाग्रत करता है।

यह आसन असाधारण भूख बढ़ाता है। यह वात, पित्त तथा कफ के आधिक्य से उत्पन्न रोगों को दूर करता, मधुमेह तथा बवासीर को अच्छा करता एवं भुजाओं की पेशियों को शक्तिशाली बनाता है। इससे अल्पतम समय में ही अधिकतम व्यायाम हो सकता है।

मयूरासन के प्रकार

(१) लोलासन

पद्मासन लगा कर मयूरासन की प्रथम प्रावस्था में बैठें। अब आपके शरीर का भार आपके घुटनों तथा हाथों पर होगा। फिर पद्मासन का आकार देने वाले शरीर के निचले भाग को धीरे-धीरे उठायें। यह एक प्रकार का पद्मासन में झूलने का आसन है। इसे लोलासन कहते हैं। यह मयूरासन का एक प्रकार है। इस आसन से भी मयूरासन के लाभ प्राप्त होते हैं।

(२) हंसासन

यह बहुत ही सरल आसन है। मयूरासन का प्रारम्भिक अंश हंसासन कहलाता है। इसमें मयूरासन के लिए टाँगों को उठाने से पूर्व पैर की अँगुलियों को भूमि पर रखा जाता है।

११. अर्ध-मत्स्येन्द्रासन

अर्ध का अर्थ है आधा। यह आधा आकार है। इस आसन का नाम मत्स्येन्द्र ऋषि पर रखा गया है, जिन्होंने हठयोग के विद्यार्थियों को यह आसन सर्वप्रथम सिखाया था। ऐसा कहा जाता है कि मत्स्येन्द्र भगवान् शिव के शिष्य थे। एक बार शिवजी एक निर्जन द्वीप को चले गये। वहाँ उन्होंने पार्वती जी को योग के रहस्य समझाये। एक मत्स्य, जो संयोगवश समुद्र-तट के पास था, ने भगवान् शिवजी का यह उपदेश सुन लिया और शिवजी को इसका पता चल गया। हृदय करुणापूर्ण होने के कारण उन्होंने इस योगी मत्स्य पर जल छिड़का। शिवजी की कृपा से वह मत्स्य तुरन्त दिव्य देहधारी सिद्ध योगी बन गया। इस योगी मत्स्य का नाम मत्स्येन्द्र हुआ।

पश्चिमोत्तानासन और हलासन में मेरुदण्ड को सामने की ओर झुकाते हैं। धनुरासन, भुजङ्गासन तथा शलभासन मेरुदण्ड को पीछे की ओर झुकाने के लिए प्रतिलोम आसन हैं। यह (मेरुदण्ड को आगे और पीछे की ओर झुकाना) पर्याप्त नहीं है। इसे मरोड़ना तथा एक पार्श्व से दूसरे पार्श्व की ओर झुकाना (पार्श्विक गति) चाहिए। तभी जा कर कहीं मेरुदण्ड में पूर्ण लचक सुनिश्चित हो सकती है। मत्स्येन्द्रासन मेरुदण्ड को पार्श्विक मरोड़ देने के उद्देश्य की पूर्ति भली-भाँति करता है। कुछ हठयोगी योगिक विद्यार्थियों को व्यावहारिक शिक्षा इसी आसन से देना प्रारम्भ करते हैं।

प्रविधि

बायीं एड़ी को गुदा के पास और अण्डकोष के नीचे रखें। यह मूलाधार को छूती रहे। एड़ी को इस स्थान से हिलने न दें। जननेन्द्रिय और गुदा के बीच के स्थान को मूलाधार कहते हैं। दायें घुटने को झुकायें और दायें टखने को बायीं जङ्घा के मूल पर रखें और दायें पैर को बायीं श्रोणि-सन्धि के पास भूमि पर टिका कर रखें। बायीं काँख लम्ब-रूप में झुके हुए दायें घुटने के शीर्ष भाग पर टेकें। अब घुटने को थोड़ा पीछे की ओर धकेलें जिससे वह काँख के पीछे वाले भाग

को स्पर्श करे। बायीं हथेली से बायें घुटने को पकड़ें। फिर बायीं स्कन्ध-सन्धि पर दबाव डालते हुए धीरे-धीरे मेरुदण्ड को मोड़ें और पूर्णतया दायीं ओर मुड़ जायें। अपने चेहरे को भी यथासम्भव दायीं ओर मोड़ें ओर इसे दायें कन्धे की सीध में लायें। दायीं भुजा को पीठ के पीछे घुमा लें। फिर दायें हाथ से बायीं जङ्घा को पकड़ें। ५ से १५ सेकण्ड तक इस मुद्रा में रहें। कशेरुकाओं को सीधा रखें। झुकें मत। इसी प्रकार आप मेरुदण्ड को बायीं ओर मोड़ सकते हैं। यह एक पूर्ण रीढ़ का मोड़ होगा।

लाभ

यह आसन जठराग्नि को प्रज्वलित करके क्षुधा में वृद्धि करता है। इससे भीषण रोगों का नाश होता, कुण्डलिनी जाग्रत होती तथा चन्द्र-नाड़ी नियमित रूप से चलने लगती है। चन्द्रमा का वास तालु-मूल पर माना जाता है। जो बूँद-बूँद कर शीतल दिव्य अमृत टपकता रहता है; वह जठराग्नि से मिल कर व्यर्थ हो जाता है। यह आसन उस क्षति को रोकता है।

यह आसन मेरुदण्ड को लचीला बनाता और उदराङ्गों की भली-भाँति मालिश करता है। कटिवात तथा पीठ की पेशियों के सभी प्रकार के वात-रोग ठीक हो जाते हैं। मेरुदण्ड के स्नायु-मूल तथा अनुकम्पी-तन्त्र स्वस्थ होते हैं। उन्हें अच्छी मात्रा में रक्त मिलता है। यह आसन पश्चिमोत्तानासन का सहायक अथवा पूरक है।

१२. शलभासन

इस आसन को करने से शलभ (टिड्डी)-जैसा आकार हो जाता है; इसलिए इसका नाम शलभासन पड़ा।

प्रविधि

पेट के बल भूमि पर लेट जायें। हाथों को दोनों ओर रखें। आपकी हथेलियाँ ऊपर की ओर होनी चाहिए।

आप हाथों को पेट के नीचे भी रख सकते हैं। यह एक दूसरा प्रकार है। हलके से श्वास खींचें (पूरक), आसन करने तक श्वास को रोकें (कुम्भक), फिर श्वास धीरे-धीरे छोड़ दें (रेचक)। पूरे शरीर को तना हुआ रखें और टाँगों को एक हाथ ऊँचा उठायें। शिर को भुजङ्गासन की भाँति उठायें। जङ्घाओं, टाँगों और पैरों की

अँगुलियों को चित्र में दिखाये गये अनुसार रखें। पैरों के तलवों को ऊर्ध्वोन्मुख करें। टाँगों, जङ्घाओं और उदर के अधोवर्ती भाग को उठायें। इस आसन में ५ से ३० सेकण्ड तक रहें; फिर धीरे-धीरे टाँगों को नीचे लायें और अब बहुत ही धीरे-धीरे श्वास छोड़ें।

यह प्रक्रिया आप ६ से ७ बार तक दोहरा सकते हैं। आप अपने हाथों को छाती के पास भूमि पर रख सकते हैं। हथेली भूमि की ओर हो। यह एक दूसरा प्रकार है। इन दोनों प्रकारों में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

लाभ

यह आसन मेरुदण्ड में पश्चमोड़ प्रदान करता है। यह मेरुदण्ड को पीछे की ओर झुकाता है। मेरुदण्ड को पीछे की ओर झुका कर यह एक प्रकार से पश्चिमोत्तानासन, हलासन और सर्वाङ्गासन की विपरीत मुद्रा के रूप में कार्य करता है, जिनमें मेरुदण्ड आगे की ओर झुकता है। मयूरासन की भाँति यह अन्तरुदरीय दबाव को बढ़ाता है। यह भुजङ्गासन का पूरक है। भुजङ्गासन से शरीर के ऊपरी अर्ध भाग का और शलभासन से शरीर के निचले अर्ध भाग का तथा नीचे के अग्राङ्गों का भी विकास होता है। इससे उदर, जङ्घाओं और टाँगों की पेशियाँ स्वस्थ होती हैं। यह उदर में एकत्रित विष्ठा को आरोही मलाशय में, आरोही मलाशय से बृहदन्त्र के अनुप्रस्थ मलाशय में और अनुप्रस्थ मलाशय से अवरोही मलाशय में तथा वहाँ से मलाशय में ले जाता है। शरीर-विज्ञान की कोई प्रारम्भिक पुस्तक पढ़ने से बहुत-कुछ सहायता मिल सकती है।

इस आसन से उदर का अच्छा व्यायाम होता है। कोष्ठबद्धता ठीक हो जाती है। यह उदरीय अन्तराङ्गों—जैसे यकृत, अग्न्याशय, वृक्क आदि—को स्वस्थ बनाता है तथा पेट और आँतों के अनेक प्रकार के रोग दूर करता है। यह यकृत-मान्द्य तथा कमर के कुबड़ेपन को दूर करता है। इससे कटित्रिक अस्थियाँ स्वस्थ हो जाती हैं तथा कटिवात दूर होता है। कटिप्रदेश के सभी प्रकार के पेशी-शूल दूर होते, जठराग्नि प्रदीप्त होती तथा अजीर्ण मिटता है। इस आसन को करने से आपको अच्छी भूख लगने लगेगी।

१३. भुजङ्गासन

भुजङ्ग का अर्थ है सर्प। इस आसन के प्रदर्शन में उठा हुआ शिर और धड़ सर्प के उठे हुए फण से मिलता-जुलता है; इसलिए यह भुजङ्गासन कहलाता है।

प्रविधि

भूमि पर एक कम्बल बिछा लें और पीठ ऊपर करके पेट के बल लेट जायें। सारी मांसपेशियों को ढीला छोड़ दें। सहज भाव से रहें। हथेलियों को कन्धों और कोहनियों के ठीक नीचे भूमि पर रखें। नाभि के नीचे से पैरों की अँगुलियों तक का शरीर भूमि से स्पर्श करता रहे। अब शिर तथा शरीर के ऊपरी भाग को उसी प्रकार धीरे-धीरे उठायें जैसे कि सर्प अपना फण (शिर) उठाता है। मेरुदण्ड को पीछे की ओर झुकायें। अब पृष्ठ तथा कटिप्रदेश की मांसपेशियाँ भली-भाँति तन गयी हैं और अन्तरुदरीय (Intra Abdominal) का दबाव भी बढ़ गया है। अब शिर को, उसकी आद्य स्थिति में, धीरे-धीरे नीचे करते हुए लायें। जब आप सर्वप्रथम मुँह नीचा कर भूमि पर लेटते हैं तो ठोड़ी सीने से दबी होनी चाहिए। ठोड़ी का ताला बनाया जाता है। शिर उठाने और नीचे लाने की प्रक्रिया को स्थिर गति से छः बार दोहरायें। नासिका द्वारा धीरे-धीरे श्वास लें। जब तक आप शिर को उठा और मेरुदण्ड को भली-भाँति झुका नहीं लेते, तब तक श्वास को रोके रखें। तत्पश्चात् आप धीरे-धीरे श्वास निकाल सकते हैं। पुनः शिर को नीचे लाते समय श्वास को रोकें। शिर ज्यों-ही भूमि को स्पर्श करे, आप पुनः धीरे-धीरे श्वास लें।

लाभ

भुजङ्गासन मेरुदण्ड को पीछे की ओर मोड़ता है जबकि सर्वाङ्गासन और हलासन इसे आगे की ओर मोड़ते हैं। इससे कुबड़ापन, पृष्ठशूल, कटिवात तथा पृष्ठपेशी-शूल का शमन होता है। यह आसन अन्तरुदरीय दबाव को बढ़ाता तथा एकत्रित विष्ठा को अनुप्रस्थ मलाशय से मलाशय की ओर नीचे लाता है; अतः इससे मलावरोध का रोग दूर हो जाता है। इससे शरीर का ताप बढ़ता है तथा कई रोग दूर हो जाते हैं। यह मूलाधार-चक्र में सुप्तावस्था में निष्क्रिय पड़ी कुण्डलिनी को जाग्रत करता है। इससे भूख भी बढ़ती है।

भुजङ्गासन विशेषकर स्त्रियों के लिए उनके डिम्बाशय और गर्भाशय को स्वस्थ करने में उपयोगी है। उनके लिए यह एक प्रभावशाली शक्तिवर्धक औषधि का काम करता है। यह अनार्तव, कष्टार्तव, श्वेतप्रदर तथा अन्य विविध गर्भाशय-डिम्बाशय-रोगों से छुटकारा देता है। इस आसन से उन अङ्गों में प्रभावशाली ढङ्ग से रक्त का प्रक्षालन होने लगता है और यह एल्टेरिस

कोआर्डियल से भी अधिक सशक्त है। इस आसन के अभ्यास से प्रसूति सामान्य एवं सरलता से होगी।

१४. धनुरासन

इस आसन के करने पर शरीर का आकार धनुष-जैसा हो जाता है। तनी हुई भुजाएँ और टाँगों के अधोभाग से धनुष की प्रत्यञ्चा बन जाती है। इसमें मेरुदण्ड पीछे की ओर झुकता है। यह भुजङ्गासन का पूरक है। हम यह कह सकते हैं कि यह आसन एक प्रकार से भुजङ्गासन और शलभासन का सम्मिलित रूप है। इसमें इसके साथ ही हाथों से टखनों को पकड़ा भी जाता है। धनुरासन, भुजङ्गासन और शलभासन का संयोजन बहुत ही उपयोगी होता है। इनका अभ्यास सदा अनुक्रमिक रूप से किया जाता है। इनसे आसनों का एक कुलक बन जाता है। यह योग हलासन और पश्चिमोत्तानासन का प्रतिरूप है जिनमें कि मेरुदण्ड आगे को झुकता है।

प्रविधि

मुँह नीचे की ओर करके छाती के बल लेट जायें। सारी मांसपेशियों को ढीला छोड़ दें। हाथों को दोनों ओर रखें। टाँगों को सहज भाव से पीठ की ओर मोड़ लें। हाथों को पीछे की ओर उठायें उनसे टखनों को पकड़ लें। छाती और शिर को ऊपर उठायें। छाती को फैला लें और भुजाओं तथा टाँगों के अधोभाग को बिलकुल सीधा तान कर रखें। अब एक अच्छा उत्तल चाप बन गया। यदि आप टाँगों को तानें तो छाती को ऊपर उठा सकते हैं। इस आसन में आपको बड़ी सावधानी के साथ अपने को सँभालना चाहिए। श्वास को धीमे से रोकें और धीरे-धीरे छोड़ दें। पाँच-छः बार ऐसा करें। इस आसन-मुद्रा में आप जितनी देर आराम से रह सकें, रहें। घुटनों को पास-पास रखें।

इस आसन से पूरा शरीर पेट पर टिका रहता है। इससे उदरीय भाग की अच्छी मालिश होती है। यह आसन खाली पेट करना चाहिए। आप धनुराकार-शरीर को पार्श्व की ओर तथा आगे और पीछे भली प्रकार गति दे सकते हैं। इससे पेट की सम्यक् मालिश हो जायेगी। झूलें, झूमें तथा आनन्द उठायें। ॐ ॐ ॐ का मानसिक जप करें।

लाभ

यह आसन जीर्णमलावरोध, मन्दाग्नि तथा यकृतमान्द्य को दूर करने के लिए

उपयोगी है। इससे कुबड़ापन तथा टाँगों, घुटनों के जोड़ और हाथों की वात-व्याधि दूर होती है। यह चरबी कम करता है, पाचन-क्रिया को शक्ति प्रदान करता है, क्रमाकुञ्चन बढ़ाता है, भूख को वर्धित करता है, उदर के आन्तराङ्गों को रक्त-संकुलता से मुक्त करता तथा उन्हें स्वस्थ भी बनाता है।

जठरान्त्र-रोगों से पीड़ित व्यक्तियों के लिए धनुरासन एक वरदान है। हलासन की भाँति यह भी रीढ़ को लचीली बनाता है। यह समय से पूर्व अस्थियों को कठोर होने से रोकता है। हलासन, मयूरासन और धनुरासन करने वाला व्यक्ति सुस्त अथवा आलसी कभी नहीं हो सकता। उसमें शक्ति, स्फूर्ति और उत्साह हमेशा बना रहता है।

धनुरासन के प्रकार

आकर्षण धनुरासन

इस आसन को धनुरासन कहा जा सकता है। भूमि पर बैठें, पैरों को फैला दें, बायें हाथ से दायें पैर का अँगूठा पकड़ें। धीरे-धीरे बायीं टाँग को झुकायें और उसकी उँगलियों को ठोड़ी के बराबर तक और घुटने को बायीं भुजा की काँख तक ऊपर लायें। अब जङ्घा आपके उदर-भाग को निकट से स्पर्श करेगी। अब बायें पैर के अँगूठे को दायें हाथ से पकड़ें और कोहनी को यथासम्भव पीछे ले जायें। यह पहले प्रकार वाले आसन से अधिक उपयोगी है।

१५. गोमुखासन

इस आसन को करने पर गाय के मुख-जैसी आकृति दिखायी पड़ती है; इसलिए यह सार्थक नाम रखा गया है। गोमुख का अर्थ है—'गाय का मुख'।

प्रविधि

बायें पैर की एड़ी को गुदा के बायें भाग के नीचे रखिए। दायीं टाँग इस प्रकार रखें कि दायाँ घुटना बायें घुटने के ऊपर हो और दायें पैर का तलवा बायीं जङ्घा के पार्श्व के साथ दृढ़तापूर्वक मिला हुआ हो। धीरे-धीरे अभ्यास कर के आपको दायीं एड़ी को बायें नितम्ब से स्पर्श कराना होगा। पूर्णरूपेण तन कर बैठें। अब पीठ की ओर निपुणतापूर्वक दोनों तर्जनियों का ताला-सा बना लें। निःसन्देह इसमें आरम्भ में कुछ कठिनाई होगी। बायाँ हाथ पीठ पीछे ले जायें और बायीं तर्जनी को ऊपर उठायें। दायीं तर्जनी को नीचे की ओर लायें और

बायीं तर्जनी को कस कर पकड़ लें। अब उँगलियों का ताला बना लें। यदि यह छूट जायें तो पुनः प्रयत्न करें और ताले को दो मिनट तक बनाये रखें। धीरे-धीरे श्वास लें। अब यह मुद्रा गाय के मुख-जैसी दिखायी पड़ेगी। उँगलियों का ताला बनाते समय शरीर को मोड़ें मत, एड़ी और सीने को मत झुकायें। धड़ को पूर्णतया सीधा रखें। हाथों तथा पैरों को बारी-बारी से बदलें। स्थूल शरीर वालों को इसमें एड़ी और जङ्घा बिठाने में तथा अँगुलियों का ताला लगाने में कुछ कठिनाई होगी; किन्तु निरन्तर अभ्यास से सब ठीक हो जायेगा।

लाभ

इस आसन से टाँगों का सन्धिवात, गृध्रसी, बवासीर अथवा मस्सा, टाँगों तथा जङ्घाओं की तन्त्रिकार्ति, अपच, अजीर्ण, पीठ का पेशीशूल और प्रबाहुओं की मोच ठीक हो जाते हैं। इससे ब्रह्मचर्य के पालन में और सुन्दर स्वास्थ्य बनाये रखने में सहायता मिलती है। इससे मूल-बन्ध स्वतः लग जाता है और सुविधा से बनाये रखा जा सकता है। अतः यह आसन प्राणायाम-अभ्यास के लिए भी उपयुक्त है। साधारणतया इस आसन में उँगलियों का ताला बनाये बिना हर समय बैठा जा सकता है। इस आसन में देर तक ध्यान में भी बैठा जा सकता है। दुबले-पतले लोगों, जिनकी जङ्घाएँ तथा टाँगें पतली हों, को इस आसन में बैठना अच्छा लगेगा। ज्वालापुर, हरिद्वार के योगी स्वामी स्वरूपानन्द इस आसन के बड़े शौकीन थे। वह सदैव इसी आसन में बैठते थे। यह उनका प्रिय आसन था। यदि आप टाँगों तथा जङ्घाओं में रक्त-संकुलता का अनुभव करने लगें, तो इस आसन को समाप्त करते ही टाँगों तथा जङ्घाओं की अपने हाथों से थोड़ी मालिश करें।

गोमुखासन का एक और प्रकार है। इस प्रकार का आसन करते समय बायें हाथ की कोहनी को ऊपर उठायें और अँगुलियाँ पीठ पर ले जायें। दायाँ हाथ पीठ पर ले जायें और तर्जनी को यथासम्भव ऊपर उठायें तथा तर्जनियों में हुक बनायें।

गोमुखासन के प्रकार

(१) वाम जान्वासन

आपको दायीं जङ्घा और घुटने को बायें के ऊपर रख कर टाँगों को

गोमुखासन की भाँति रखना होगा। हाथों को सीने के पास या घुटनों के अञ्चल पर रखना होगा।

(२) दक्षिण जान्वासन

इस आसन में बायीं जङ्घा और घुटना दायें पर रखे जाते हैं। कुछ लोगों के लिए यह सरल रहता है।

१६. वज्रासन

इस आसन में बैठने वालों की मुद्रा दृढ़ और स्थिर होती है। उन्हें सरलता से हिलाया नहीं जा सकता। घुटने बड़े कठोर हो जाते हैं। मेरुदण्ड दृढ़ तथा पुष्ट हो जाता है। यह आसन कुछ अंश तक नमाज-मुद्रा से मिलता है जिसमें मुसलमान लोग प्रार्थना के लिए बैठते हैं।

प्रविधि

पैरों के तलवों को गुदा के दोनों ओर रखें अर्थात् जङ्घाओं को टाँगों के ऊपर और नितम्बों को तलवों पर रखें। पिण्डलियाँ जङ्घाओं को छूनी चाहिए। पैरों की अँगुलियों से घुटने तक का भाग भूमि को स्पर्श करता हुआ रहना चाहिए। शरीर का पूरा भार घुटनों और गुल्फ पर पड़ना चाहिए। अभ्यास के प्रारम्भ में घुटनों और गुल्फ-सन्धियों में हल्की पीड़ा अनुभव हो सकती है; किन्तु यह शीघ्र ही दूर हो जाती है। पीड़ित अङ्गों और दोनों गुल्फ-सन्धियों की हाथों से मालिश कर लें। आप मालिश में थोड़े आयोडेक्स या अमृताञ्जन का प्रयोग भी कर सकते हैं। पैर और घुटने जमाने के पश्चात् दोनों हाथ घुटनों पर सीधे रखें। घुटने परस्पर पास-पास में हों। अब आप इस प्रकार बैठें कि धड़, गरदन और शिर एक सीधी रेखा में हों। यह बहुत सामान्य आसन है। इस आसन में आप बहुत देर तक आराम से बैठ सकते हैं। योगी जन साधारणतया इसी आसन में बैठते हैं।

लाभ

यदि आप भोजन के तुरन्त बाद आधे घण्टे तक इस आसन में बैठ जायें तो भोजन अच्छी तरह से पच जायेगा। मन्दाग्नि-ग्रस्त लोगों को इससे बहुत अच्छा लाभ होता है। टाँगों तथा जङ्घाओं की स्नायुओं और मांसपेशियों की शक्ति बढ़ती है। घुटनों, टाँगों, पैरों की अँगुलियों तथा जङ्घाओं का पेशी-शूल दूर हो जाता है। गृध्रसी निर्मूल हो जाती है। उदर-वायु दूर हो जाता है। उदर प्रभावशाली ढङ्ग से

कार्य करता है। वज्रासन का अभ्यास कन्द पर उद्दीपक तथा लाभकारी प्रभाव डालता है। यह कन्द गुदा से बारह इञ्च ऊपर स्थित अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अङ्ग है और यहाँ से बहत्तर हजार नाड़ियाँ प्रकट होती है।

वज्रासन के प्रकार

कुछ लोग एड़ियों को पूर्णतया अलग रखते हैं। गुदा और नितम्बों को दोनों जङ्घाओं के पार्श्व में एड़ियों और टाँगों के बीच में रखा जाता है।

(१) कूर्मासन

नितम्बों से पैरों के तलवों को दृढ़तापूर्वक दबायें। शिर, गरदन और धड़ को सीधा रखें और हाथों को दोनों कूल्हों पर या घुटनों पर अथवा छाती के दोनों ओर रखें।

(२) अर्ध कूर्मासन

वज्रासन की पूर्व-मुद्रा में बैठ कर हाथों को चेहरे की सीध में फैलायें। हथेलियाँ आमने-सामने हों। धीरे-धीरे झुकें और भूमि पर अपने हाथों के सहारे लेट जायें।

(३) उत्तान कूर्मासन

इस आसन में गर्भासन की भाँति बैठा जाता है और हाथों को जङ्घाओं और पिण्डलियों के बीच में रखना पड़ता है। गर्भासन में पद्मासन की भाँति पैर जङ्घाओं पर रखे जाते हैं; किन्तु उत्तान कूर्मासन में टखने को एक-दूसरे के ऊपर पास-पास रखा जाता है और हाथों से शिर को नीचे की ओर दबाया जाता है। इन सब आसनों से मोच और पीठ-सम्बन्धी पीड़ाएँ दूर हो जाती हैं।

(४) मण्डूकासन

पैरों को पीछे की ओर ले जायें। पैरों की उँगलियाँ एक-दूसरे से स्पर्श करें। घुटनों को दोनों पार्श्वों में रखें। हाथों को घुटनों पर रखें। यह मण्डूकासन कहलाता है।

(५) अर्ध शवासन

सुप्त वज्रासन पर निर्देश अन्यत्र देखिए।

(६) पादादिरासन

कुछ लोग वज्रासन को ही पादादिरासन कहते हैं। इस आसन में आप हाथों

को घुटनों पर अथवा छाती की सीध में रख सकते हैं। इसमें हथेलियाँ एक-दूसरे के सामने होनी चाहिए।

(७) पर्वतासन

वज्रासन की मुद्रा में बैठ जायें। शरीर एवं हाथों को शिर के ऊपर धीरे-धीरे उठायें। यह पर्वतासन कहलाता है। पर्वतासन के एक दूसरे अच्छे प्रकार को अन्यत्र बताया गया है।

(८) आनन्द-मन्दिरासन

वज्रासन में बैठ कर दोनों हाथों से एड़ियों को पकड़ लें।

(९) अंगुष्ठासन

ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करने के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण आसन है। वज्रासन में बैठ कर धीरे-धीरे घुटनों को उठायें। इसी प्रकार का एक और आसन पादांगुष्ठासन है। पादांगुष्ठासन का वर्णन अन्यत्र देखें।

(१०) सुप्त वज्रासन

यह एक सुप्त मुद्रा और वज्रासन का समन्वित रूप है अथवा अर्ध शवासन है। प्रथम आपको वज्रासन में पूर्णता प्राप्त करनी होगी; तभी आप इस आसन को आरम्भ कर सकेंगे। वज्रासन की अपेक्षा इसमें घुटनों पर अधिक दबाव तथा बल पड़ता है। अर्ध शवासन की भाँति पीठ के बल लेट जायें। उँगलियों का ताला बना लें। शिर को हथेलियों पर टिका लें। उँगलियों का ताला बनाने के बजाय आप हाथों को मत्स्यासन की भाँति भी रख सकते हैं। हो सकता है कि प्रारम्भ में पीठ का पूर्ण भाग भूमि को स्पर्श न करे और उसका निचला भाग भूमि से ऊपर उठा रहे। कुछ दिनों के अभ्यास से आप यह आसन पूर्ण सन्तोषप्रद ढङ्ग से करने लगेंगे।

इस आसन से आपको वज्रासन के सम्पूर्ण लाभ प्राप्त होंगे। इससे कुबड़ापन दूर हो जाता है; क्योंकि इसमें मेरुदण्ड पीछे की ओर झुक जाता है। मेरुदण्ड में लचक भी आती है। इस आसन को करने वाले व्यक्ति के लिए चक्रासन लगाना बड़ा सुकर होता है।

सामान्य सिद्धासन को भी वज्रासन कहा जाता है।

१७. गरुड़ासन

इस आसन को करने से गरुड़-जैसी मुद्रा बन जाती है; इसलिए इसे गरुड़ासन कहते हैं।

प्रविधि

पहले बिलकुल सीधे खड़े हो जायें। दायीं टाँग को भूमि पर सीधा रखें। बायीं टाँग को उठा कर दायीं के चारों ओर लपेट लें। बायीं जङ्घा तथा दायीं जङ्घा से कैंची बना लें। जैसे वृक्ष के चारों ओर बेल चढ़ती है, उसी भाँति बायीं जङ्घा दायीं जङ्घा के चारों ओर घुमा कर ले जायें। हाथों को भी उसी प्रकार रखें अर्थात् एक भुजा दूसरी भुजा के चारों ओर रस्सी की भाँति लपेटें। हथेलियाँ परस्पर स्पर्श करनी चाहिए। अँगुलियों को गरुड़ की चोंच के समान रखें। हाथों को चेहरे के सामने रखें। टाँगों और हाथों को बारी-बारी से बदल लेना चाहिए।

जब आप ऊपर दिये गये निर्देशानुसार खड़े हो जायें, तो स्थिरता के साथ झुकें और लपेटने वाली टाँग के अँगूठे से भूमि को छूने का प्रयत्न करें। तभी आपको इस आसन का अधिकतम लाभ प्राप्त होगा। झुकते समय आप किसी की सहायता ले सकते हैं। दोनों टाँगें झुकानी पड़ती हैं। इस आसन में स्थित हो कर आप वस्ति-क्रिया भी कर सकते हैं।

लाभ

इस आसन से शरीर का पूरा भार एक टाँग पर आता है, जबकि कुक्कुटासन में शरीर का सारा भार दोनों हाथों पर आता है। इस आसन से टाँगों और हाथों की स्नायुएँ तथा अस्थियाँ बलवती होती हैं। हाथ और टाँगें लम्बी हो जाती हैं। इस आसन के अभ्यास से मनुष्य लम्बा हो सकता है। वृक्क की स्नायुएँ भी बलवती होती हैं। गृध्रसी तथा टाँगों और हाथों के सन्धिवात ठीक हो जाते हैं। पृष्ठवंश की अस्थियाँ विकसित हो कर दृढ़ होती हैं जलवृषण और अण्ड-ग्रन्थियों की सूजन ठीक हो जाती है। पिण्डलियों की पेशियाँ विकसित होती हैं। टाँगों और हाथों की स्नायुएँ बलवती होती हैं।

१८. ऊर्ध्व पद्मासन

प्रविधि

पहले बताये अनुसार शीर्षासन करिए। धीरे-धीरे दायीं टाँग को झुका कर

बायीं जङ्घा पर रखिए और फिर इसके बाद बायीं टाँग दायीं जङ्घा पर रखिए। यह बहुत सावधानीपूर्वक धीर-धीरे करना चाहिए। शीर्षासन में १० या १५ मिनट से अधिक खड़े रह सकने पर ही आप इस आसन को करने का अभ्यास कर सकते हैं, अन्यथा आपके गिरने की आशङ्का रहेगी। व्यायाम करने वाला व्यक्ति जो पैरेलल वार्स या भूमि पर अपना सन्तुलन रख सकता है, वही साधक यह आसन सरलतापूर्वक कर सकता है। इस आसन के अभ्यास में कुछ शक्ति का होना आवश्यक है। धीरे-धीरे नासिका द्वारा श्वास लें, मुँह द्वारा कभी श्वास न लें। प्रारम्भ में इस मुद्रा में ५ से १० मिनट तक रहें और धीरे-धीरे समय बढ़ाते जायें।

प्रारम्भ में इस आसन को चार तह किये गये कम्बल पर किसी दीवार के सहारे करें। इस आसन के अन्य प्रकार भी होते हैं; परन्तु वे अधिक उपयोगी नहीं हैं।

कुछ लोगों को प्रथम पद्मासन लगाना सरल होता है। इस आसन को लगाने के बाद वे धीरे-धीरे अपनी टाँगें (आसन) उठाते हैं। आसन में कुशल व्यक्ति पद्मासन की मुद्रा को नीचे भूमि पर ला सकते हैं और पुनः अपनी टाँगों को पूर्ववत् ऊपर ले जा सकते हैं। इस आसन का अभ्यास करने वालों को आसन करने के बाद हलका-सा नाश्ता, एक प्याला दूध या फलों का रस लेना चाहिए। शीर्षासन एवं ऊर्ध्व पद्मासन करने वालों को ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करना चाहिए; तभी वे इससे अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

लाभ

आसन करते हुए यदि किसी भी प्रकार की प्रार्थना या जप किया जाता है, तो यह तप भी हो जाता है। इससे आपको सिद्धियाँ प्राप्त होंगी। प्राचीन काल में तपस्वी लोग बारह वर्ष तक शिर के बल खड़े रह कर अपने इष्टदेवता अथवा गुरु का मन्त्र जपते थे। महाभारत में ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे। ऊर्ध्व पद्मासन अथवा शीर्षासन में जप या ध्यान ईश्वर के हृदय के नितल को स्पर्श करता है और शीघ्र ही वह अपनी कृपा-वृष्टि करता है। इस आसन से अनेक कठिनाइयों का निवारण होता है। ऊर्ध्व पद्मासन से शीर्षासन के सारे लाभ प्राप्त हो जाते हैं। इस आसन का अभ्यास करने वाले व्यक्ति का अपने शरीर पर पूरा नियन्त्रण होता है।

लखीमपुर के पं० श्री सूर्यनारायण वकील इस आसन को करते थे। उनकी स्मरण-शक्ति बहुत बढ़ गयी थी। इस आसन से एम० एस-सी० कक्षा के

विद्यार्थी श्री गङ्गाप्रसाद एवं कलकत्ता मेडिकल कालेज के एक छात्र नरेन्द्र का वीर्यपात अथवा स्वप्नदोष-रोग जाता रहा तथा न्यायाधीश केदारनाथ न्यायालय में दोगुना कार्य निपटाने और कई घण्टों तक पुस्तकें पढ़ने में समर्थ हो गये। आप भी नियमपूर्वक इस आसन का हार्दिक भाव से अभ्यास करके पूर्ण लाभ प्राप्त कर सकते हैं और सर्वथा दीर्घ जीवन यापन कर सकते हैं।

१९. पादांगुष्ठासन

स्थूल शरीर वालों के लिए यह आसन कुछ कठिन प्रतीत होगा। उन्हें कभी एक पार्श्व से दूसरे पार्श्व की ओर तथा कभी आगे और पीछे की ओर हिचकोले खाने पड़ते हैं। थोड़े-से निरन्तर अभ्यास से सब-कुछ ठीक हो जायेगा। प्राचीन काल में गुरुकुलों के नैष्ठिक ब्रह्मचारी प्रतिदिन यह आसन किया करते थे। प्राचीन काल के ऋषिगण वीर्य-रक्षा के लिए ब्रह्मचारियों को शीर्षासन तथा सर्वाङ्गासन के साथ यह आसन निर्दिष्ट किया करते थे।

प्रविधि

बायीं एड़ी को गुदा अथवा मूलाधार, जो कि गुदा एवं जननेन्द्रिय के बीच का स्थान होता है, के ठीक बीच में रखें। शरीर का सारा बोझ पैरों की अँगुलियों पर, विशेषकर बायें अँगूठे पर, रखें। दायाँ पैर घुटने के पास जङ्घा पर रखें और अब सावधानी से सन्तुलन बनाते हुए बैठें। यदि स्वतन्त्र रूप से इस आसन को करने में आप कठिनाई अनुभव करें, तो आप अपने हाथ बेञ्च पर रख कर या दीवार के सहारे बैठ कर बेञ्च अथवा दीवार की सहायता ले सकते हैं। हाथों को कूल्हों के पार्श्व में रखें और श्वास को सुगमता से जितनी देर रोक सकें, रोक लें। धीरे-धीरे श्वास लें। अपने सामने दीवार पर किसी सफेद या काले बिन्दु पर दृष्टि जमा कर देखें और इस आसन को करते समय अपना गुरु-मन्त्र अथवा राम-नाम जपें।

लाभ

मूलाधार-स्थान चार इञ्च चौड़ा होता है। उसके नीचे शुक्र-वाहिनी-नाड़ी अथवा वीर्य-नाड़ी होती है जो वीर्य को अण्डकोष से ले जाती है। इस नाड़ी को एड़ी से दबाने से वीर्य का बाह्य प्रवाह रुक जाता है। इस आसन के निरन्तर अभ्यास से स्वप्नदोष अथवा वीर्यपात को रोक कर साधक ऊर्ध्वरेता योगी अर्थात् वह योगी बन जाता है जिसमें वीर्य की गति ऊपर मस्तिष्क की ओर प्रवाहित हो

कर वहाँ ओजस्-शक्ति अथवा आध्यात्मिक शक्ति के रूप में सञ्चित होती है। शीर्षासन, सर्वाङ्गासन, सिद्धासन, भुजङ्गासन, पादांगुष्ठासन आदि का सामूहिक रूप से अभ्यास ब्रह्मचर्य-रक्षा के लिए अत्यन्त उपयोगी है। प्रत्येक आसन का अपना विशिष्ट प्रभाव होता है। सिद्धासन और भुजङ्गासन का प्रभाव अण्डग्रन्थि एवं उसकी कोशिकाओं पर होता है और शुक्राणुओं की रचना रुकती है। शीर्षासन और सर्वाङ्गासन वीर्य को मस्तिष्क की ओर प्रवाहित होने में योग देते हैं। इसी प्रकार पादांगुष्ठासन शुक्रवाहिका नाड़ियों पर शक्तिशाली प्रभाव डालता है।

२०. त्रिकोणासन

प्रविधि

सीधे खड़े हो जायें। टाँगों को दो फीट की दूरी पर रखें। अब हाथों को कन्धों की समरेखा में पार्श्व की ओर सीधे फैलायें। अब आपकी भुजाएँ भूमि के बिलकुल समानान्तर (parallel) होनी चाहिए। व्यायाम का यह अंश तो आपने सम्भवतः अपने विद्यालयों में व्यायाम-कक्षा में किया होगा। अब धीरे-धीरे दायीं ओर झुकें। बायाँ घुटना सीधा और तना हुआ रखें। ऐसा करना आवश्यक है। दायें पैर के अँगूठे को दायें हाथ की उँगलियों से स्पर्श करें। गरदन को थोड़ा-सा दायीं ओर झुकायें। यह दायाँ कन्धा स्पर्श कर सकती है। अब बायीं भुजा को ऊपर की ओर फैलायें। इस मुद्रा को २ या ३ मिनट रखें। धीरे-धीरे श्वास लें। तत्पश्चात् बायीं ओर से आप अभ्यास कर सकते हैं। बायें हाथ की उँगलियाँ बायें पैर के अँगूठे को स्पर्श करें। अब पहले की भाँति दायीं भुजा को ऊपर की ओर फैलायें। प्रत्येक ओर से ३ से ६ बार तक इस प्रकार अभ्यास करें।

लाभ

यह आसन मेरुदण्ड को बहुत अच्छी पार्श्विक गति प्रदान करता है। यह अर्ध मत्स्येन्द्रासन का पूरक है। यह मत्स्येन्द्रासन को बढ़ा कर पूर्ति प्रदान करता है। श्री मुलर ने भी अपनी प्राकृतिक चिकित्सा व्यायाम-पद्धति में इस आसन का वर्णन किया था। यदि आपका मेरुदण्ड स्वस्थ है, तो आप एक ही आसन में कई घण्टे तक बिना थकान के ध्यान में बैठ सकते हैं। योगी के लिए मेरुदण्ड बहुत आवश्यक अङ्ग हैं; क्योंकि यह सुषुम्ना एवं अनुकम्पी तन्त्र से सम्बन्धित होता है। मेरुदण्ड में ही महत्त्वपूर्ण सुषुम्ना-नाड़ी होती है जिसका कि कुण्डलिनी की ऊर्ध्वगति में महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। यह आसन मेरुदण्ड की स्नायुओं और

उदर के अवयवों को स्वस्थ बनाता, आँतों के क्रमाकुञ्चन को बढ़ाता तथा क्षुधा को तीव्र करता है। मलावरोध से छुटकारा मिलता है। शरीर हलका हो जाता है। जिनकी टाँगें कूल्हे या जङ्घा की हड्डी (ऊर्वास्थि) या टाँगों की हड्डी (अन्तर्जंघिका अथवा बहिर्जंघिका) टूट जाने के कारण छोटी हो जाती हैं, उन्हें इस आसन को करने से लाभ होगा। इससे टाँगें बढ़ती हैं। सीतापुर के वकील कृष्णकुमार भार्गव ने तीन महीने तक इस आसन का अभ्यास किया। इससे उनकी टाँगें बढ़ गयीं और बाद में वे एक या दो मील चल सकते थे।

२१. बद्धपद्मासन

यह पद्मासन का एक प्रकार है।

प्रविधि

टाँगों की कैंची बना कर पद्मासन में बैठ जायें। एड़ियाँ पेट के निचले भाग को स्पर्श करें। फिर अपना दायाँ हाथ पीठ के पीछे ले जायें। दायें हाथ की तर्जनी तथा मध्यमा से दायें पैर का अँगूठा पकड़ें। फिर आप अपना बायाँ हाथ पीछे ले जा कर बायें हाथ की तर्जनी तथा मध्यमा से बायें पैर के अँगूठे को पकड़ें। अब ठोड़ी को सीने पर दबायें, नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमायें और धीरे-धीरे श्वास लें।

कुछ साधकों को दोनों अँगूठे एक-साथ पकड़ने में कठिनाई अनुभव होती है। वे लोग आरम्भ में एक महीने तक अर्ध बद्धपद्मासन का अभ्यास कर सकते हैं। कालान्तर में वे पूर्ण बद्धपद्मासन कर सकते हैं। इस अर्ध बद्धपद्मासन को दायीं ओर से करें और फिर बारी-बारी से बायीं ओर से भी करें। पूरी मुद्रा बनाने में कुछ चतुराई बरतनी चाहिए। पहले एक अँगूठा पकड़ें और जब आप दूसरा अँगूठा पकड़ने का प्रयत्न करें, तो शरीर को थोड़ा आगे की ओर झुकायें। इससे दूसरा अँगूठा पकड़ने में आसानी रहेगी। अर्ध मुद्रा में एक उँगली से पैर के एक अँगूठे को पकड़ लें। इसके बाद फिर दूसरी ओर से करें। अर्ध मुद्रा पूर्ण मुद्रा के लिए एक प्रकार से तैयारी की अवस्था है।

लाभ

यह आसन ध्यान के लिए नहीं है। यह मुख्यतया शारीरिक स्वास्थ्य शक्ति और स्फूर्ति को प्रचुर मात्रा में बढ़ाने के लिए है। इस आसन से पद्मासन के लाभ अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध होते हैं। कम-से-कम छः महीने तक इस आसन का

नियमित अभ्यास करना चाहिए। तभी अधिकतम लाभ का अनुभव होगा। इस आसन में कुछ मिनट तक बैठने मात्र से ही इस आसन के पूर्ण लाभों की आशा नहीं की जा सकती है। इस आसन को कम-से-कम आधा घण्टे तक करना चाहिए। यदि आप इस आसन को घण्टे या डेढ़ घण्टे तक कर सकते हैं, तो निःसन्देह इससे आपको अत्यधिक लाभ प्राप्त होगा। ऐसे भी साधक हैं जो इस आसन को पूरे तीन घण्टे तक कर सकते हैं। ये लोग कितने दृढ़निश्चयी और धैर्यवान् होते हैं! इनका स्वास्थ्य और शक्ति आश्चर्यजनक और जीवन-शक्ति उच्च स्तरीय होती है। इस आसन से कई प्रकार के रोग दूर होते हैं। उदर, यकृत, प्लीहा तथा आँतों के वे अनेक जीर्ण रोग भी, जिन्हें एलोपैथिक डाक्टरों और आयुर्वेद के कविराजों ने असाध्य घोषित कर दिया हो, इस आसन के निरन्तर अभ्यास से ठीक हो जाते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है। उदर-रोग— यथा जीर्ण जठरशोथ, अग्निमान्द्य, उदरवायु, आन्त्रशूल, आमातिसार, जलोदर, मलावरोध, अम्लता, डकार तथा जीर्णकटिवात—दूर हो जाते हैं। क्योंकि इससे मेरुदण्ड सीधा रहता है, इसलिए इस आसन से कुबड़ापन भी दूर होता है। कमर, कूल्हे, पैरों और टाँगों की स्नायुएँ शुद्ध होती हैं। यकृत तथा प्लीहा की अपवृद्धि ठीक हो जाती है। यकृत की निष्क्रियता दूर हो जाती है। इस आसन से नाभि के पीछे स्थित सूर्य-चक्र पर प्रबल प्रभाव पड़ता और यह उसे उद्दीप्त करता है। इससे व्यक्ति को अत्यधिक शक्ति प्राप्त होती है।

पेट को पीछे की ओर ऊपर की ओर खींचें। 'ॐ' अथवा 'राम' का मानसिक जप करें और यह भावना करें कि वीर्यशक्ति ओजशक्ति के रूप में सञ्चित किये जाने हेतु मस्तिष्क की ओर प्रवाहित हो रही है।

यह विशेष अभ्यास प्रतिदिन दश मिनट तक करिए। आपको स्वप्नदोष नहीं होगा। यह प्रक्रिया ब्रह्मचर्य-पालन करने में परम सहायक है।

२२. पादहस्तासन

इस आसन को उत्थित पश्चिमोत्तानासन कहा जा सकता है; क्योंकि इस आसन की विधि वही है। भेद इतना ही है कि इस आसन को खड़े हो कर करना होता है। कुछ लोग इसे 'हस्तपादाङ्गासन' कहते हैं।

प्रविधि

सीधे खड़े हो जायें। हाथ दोनों पार्श्वों से मिले हुए लटके रहें। एड़ियों को

पास-पास और अँगूठों को परस्पर अलग-अलग रखें। हाथों को शिर के ऊपर उठायें और शरीर को धीरे-धीरे नीचे झुकायें। घुटनों को तना हुआ और सीधा रखें। टाँगों को घुटनों पर से मत मोड़ें। कोहनियों को बिना झुकाये हाथों को धीरे-धीरे नीचे लायें और केवल अँगूठे, तर्जनी तथा मध्यमा से पैर के अँगूठे को पकड़ें। झुकते समय श्वास धीरे-धीरे बाहर निकालें और पेट को अन्दर ले आयें। मस्तक को घुटनों के बीच में रखें। चेहरा घुटनों के मध्य रिक्त स्थान में छिप जायेगा। शिर को और ऊपर दोनों जङ्घाओं के बीच में भी धकेला जा सकता है। हाथों तथा पैरों के पारस्परिक परिवर्तन से इस आसन के विभिन्न प्रकार हो जाते हैं। उनके विस्तृत विवरण के लिए यहाँ स्थान नहीं है। इसके अतिरिक्त उनसे कोई विशेष लाभ भी नहीं है। इस आसन को दो से दश सेकण्ड तक रखिए। स्थूल शरीर वालों को प्रारम्भ में इस आसन के अभ्यास में कठिनाई अनुभव होगी। धैर्य एवं अध्यवसाय से वे अल्पकाल में ही यह आसन भली प्रकार करने लगेंगे। पीठ को खींचते समय उदरीय मांसपेशियों और मलाशय को सिकोड़ना होगा।

यदि कूल्हों की मांसपेशियों के कठोर होने एवं पेट में चरबी की अधिकता होने के कारण आपको पैरों की उँगलियों को पकड़ने में कठिनाई होती हो, तो आप घुटनों को थोड़ा झुका सकते हैं। पैरों की उँगलियों को पकड़ने के पश्चात् टाँगों को सीधी करके तान लें। यह एक युक्ति है। इस आसन के करने से पूर्व आप थोड़ी मात्र में जल पी सकते हैं।

लाभ

इस आसन के विविध लाभ हैं। अभ्यास की समाप्ति पर आप अपने को अधिक शक्तिशाली अनुभव करेंगे। बहुत-सा तमस् (भारीपन) नष्ट होने के कारण शरीर हलका हो जाता है। इस आसन से शरीर का मोटापा दूर होता है। टाँगों की हड्डी अथवा ऊर्वस्थि के टूटने के कारण यदि टाँग छोटी हो गयी हो, तो वह भी ठीक हो सकती है। तीन महीने तक इस आसन का अभ्यास करने तथा सरसों के तेल में थोड़ा नमक डाल कर मालिश करने से टाँग कुछ बढ़ जाती है। नमक से तेल शरीर में शीघ्रता से रम जाता है। इस आसन से अपान-वायु के मुक्त रूप से नीचे आने में सहायता मिलती है। सुषुम्ना-नाड़ी शुद्ध हो कर सशक्त बनती है। इस आसन से भी पश्चिमोत्तानासन के लाभ प्राप्त होते हैं।

पादहस्तासन के प्रकार

(१) पादहस्तासन (दूसरा प्रकार)

सीधे खड़े हो जायें। धीरे-धीरे बायीं टाँग उठा कर अपनी उँगलियों से पैर का अँगूठा पकड़ें। दायाँ हाथ कमर पर रखें। टाँगों को झुकने मत दें। कुछ लोग इसको पादहस्तासन कहते हैं।

(२) ताड़ासन (वृक्षासन)

यह विद्यालय के विद्यार्थियों के व्यायाम-वर्ग का सुपरिचित व्यायाम है। एक हाथ को शिर से ऊपर बड़ी शीघ्रता से उठायें। शिर को मत झुकाएँ। फिर उस हाथ को पूर्व-स्थिति में ले आयें। ऐसा ही फिर दूसरे हाथ से करें। जितनी बार कर सकें, इसको दोहरायें। हाथ को एक ही बार में सीधे शिर के ऊपर ले जाने के स्थान में आप उसे जब वह कन्धे की सीध में भूमि के समानान्तर आये, तब थोड़ा रोक सकते हैं। दोनों हाथों को आप साथ-साथ भी ले जा सकते हैं। यह आसन कर चुकने पर हाथ, कन्धों आदि की मांसपेशियों की थोड़ी मालिश कर देनी चाहिए। यह आसन वृक्षासन भी कहलाता है। शीर्षासन को भी वृक्षासन कहते हैं। एक टाँग पर सीधे खड़े हो जायें तथा दूसरी टाँग को दूसरी जङ्घा के मूल पर रखें। यह भी वृक्षासन का एक प्रकार है।

(३) उत्थित विवेकासन

खड़े हो कर जप तथा प्राणायाम करने के लिए यह अत्यन्त उपयोगी है। सीधे खड़े हो जायें। आप अपने हाथों को कोहनी से मोड़ कर सीने के पास रखें।

(४) पूर्णपादासन

यदि हाथों को पार्श्वों में रख कर सीधा खड़ा रहा जाये, तो पूर्णपादासन कहलाता है।

२३. मत्स्येन्द्रासन

जिन्होंने कुछ दिनों तक अर्ध मत्स्येन्द्रासन का अभ्यास कर लिया है, वे अब पूर्ण मत्स्येन्द्रासन कर सकते हैं। अर्ध मत्स्येन्द्रासन की अपेक्षा पूर्ण मत्स्येन्द्रासन कुछ कठिन है। मालसर (गुजरात) के प्रसिद्ध हठयोगी स्वर्गीय श्री माधवदास जी महाराज अपने शिष्यों को सीधे यही आसन सिखाया करते थे। इस आसन का नाम मत्स्येन्द्र ऋषि के नाम पर रखा गया है।

प्रविधि

टाँगे फैला कर सीधे बैठ जायें। बायें पैर को दोनों हाथों से बलपूर्वक दायीं जङ्घा के जोड़ पर और बायें पैर की एड़ी को नाभि पर दबा कर रखें। दायीं टाँग बायें घुटने के पार्श्व में जमीन से स्पर्श करे। बायें हाथ को दायें घुटने के बाहर रखें और इस घुटने को बायीं ओर दबायें। बायें हाथ के अँगूठे, तर्जनी और मध्यमा उँगलियों से दायें पैर के अँगूठे को पकड़ लें। दायाँ पैर दृढ़ रहना चाहिए। दायाँ हाथ पीठ की ओर मोड़ें और उससे बायीं एड़ी को पकड़ें। मुँह और शरीर पीछे की ओर दायें पार्श्व को मुड़ जाते हैं। रीढ़ को मरोड़ें। नासाग्र भाग पर दृष्टि जमाये रखें और धीरे-धीरे श्वास लें। इस आसन में बीस सेकण्ड तक रहें। आप शनैः-शनैः अभ्यास बढ़ाते हुए २ या ३ मिनट तक कर सकते हैं। इस क्रम को कई बार दोहरायें। यह प्रविधि कठिन प्रतीत होती है। आपके सावधानीपूर्वक ध्यान देने तथा एकाग्र चित्त से विचार करने या अपने किसी मित्र को, यह आसन करते हुए एक बार देखने पर यह आसन बहुत स्पष्ट और सरल हो जायेगा।

यह आसन दायें तथा बायें दोनों पार्श्वों से क्रमानुसार करना चाहिए। तभी इस आसन से अधिकतम लाभ प्राप्त होता है। पहले, २ या ३ सप्ताह तक अर्ध मत्स्येन्द्रासन करके फिर मत्स्येन्द्रासन के लिए प्रयत्न करें। इसके बाद मांसपेशियाँ तथा अस्थि-सन्धियाँ अधिक कोमल एवं लचीली हो जायेंगी। यदि सन्तुलन बनाये रखने में कठिनाई हो तो आप अपने हाथ को मोड़ कर पीठ की ओर ले जाने के स्थान में हथेली भूमि पर रख सकते हैं। इससे आपको अच्छा सहारा मिलेगा एवं कार्य सरल हो जायेगा। धीरे-धीरे आप हथेली को भूमि से हटा कर पीठ की ओर ले जा सकते हैं।

लाभ

अर्ध मत्स्येन्द्रासन से होने वाले सभी लाभ इस आसन से अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। अस्थि-सन्धियों का सन्धिरस बढ़ता है तथा अस्थि-सन्धियाँ क्रियाशील होती हैं। सन्धिवात के कारण हुआ आसंजन दूर हो जाता है। यह सुस्वास्थ्य प्रदान करता है। यह प्राण-शक्ति बढ़ाता है जिसके फल-स्वरूप असंख्य रोगों का निवारण होता है। नाभि के ऊपर पड़ने वाले एड़ी के दबाव से रक्त का प्रवाह पीठ की ओर हो जाता है जिससे पीठ की समस्त स्नायुओं को;

विशेषकर पीठ की प्राण-नाड़ियों को; सम्यक् सम्पोषण मिलता है। इससे कुण्डलिनी जाग्रत होती है और चित्त को शान्ति मिलती है। योगी मत्स्येन्द्र धन्य हैं, धन्य हैं, जिन्होंने हठयोग के विद्यार्थियों में सर्वप्रथम इस आसन को प्रवर्तित किया। **ॐ नमः परम ऋषिभ्यः**—महर्षियों को नमस्कार है !

२४. चक्रासन

बहुत से नट लोग इस आसन को सड़कों पर दिखाते हैं। छोटे बच्चे इस आसन को सरलतापूर्वक कर सकते हैं; क्योंकि उनका मेरुदण्ड बहुत लचीला होता है। बड़ी आयु में जब अस्थियाँ सुदृढ़ और अनम्य हो जाती हैं, तब मेरुदण्ड का मुड़ना कठिन हो जाता है। यह आसन चक्र की भाँति होता है; अतः इसे चक्रासन का अर्थगर्भित नाम दिया गया है। वास्तव में यह चक्र की अपेक्षा धनुष से अधिक मिलता-जुलता है।

प्रविधि

खड़े हो कर हाथों को ऊपर आकाश की ओर उठायें। शरीर को मोड़ते हुए धीरे-धीरे पीछे की ओर झुकायें। जब आपके हाथ पीछे की ओर कूल्हों की सीध में आ जायें तब टाँगों को धीरे-धीरे घुटनों पर झुकायें। इससे आपका और अधिक झुक कर अपने हाथों से भूमि को छूने में सहायता मिलेगी। जल्दी मत करें। सन्तुलन ठीक करके इसे धीरे-धीरे करें, अन्यथा गिरने का भय लगा रहता है। भूमि पर एक मोटा कम्बल बिछा कर उसके ऊपर इस आसन का अभ्यास करें। प्रारम्भ में आप यह आसन दीवार के पार्श्व में कर सकते हैं, अथवा आप अपने मित्र से कहें कि वह आपके कूल्हों को दृढ़ता से पकड़े रखे और फिर आप झुकें।

इस आसन को करने की एक और विधि है, जो वृद्ध लोगों के लिए उपयुक्त है। इसमें गिरने की आशङ्का बिलकुल नहीं रहती। पीठ के बल लेट जायें। पाँव के तलवे और हथेलियाँ भूमि पर रखें। आपकी हथेलियाँ आपके शिर के पार्श्व में और कोहनियाँ ऊपर की ओर होनी चाहिए। अब अपनी एड़ियों को भूमि पर हथेलियों के पास लायें और अपने शरीर को ऊपर उठायें। इस प्रकार मेरुदण्ड को चक्राकार मोड़ें। इसके निरन्तर अभ्यास से मेरुदण्ड को अत्यधिक लचीला बनाया जा सकता है। मेरुदण्ड के लचीला होने का तात्पर्य है—सदा युवा बने रहना। जिस व्यक्ति का मेरुदण्ड अनम्य हो, वह प्रारम्भ में अधिक-से-अधिक एक

अर्धवृत्त बना सकता है। दो सप्ताह के अभ्यास से समस्त कठोर अङ्ग लचीले बन जायेंगे। इस आसन को करते समय आप अपने हाथों से एड़ियों को पकड़ सकते हैं।

लाभ

इस आसन का अभ्यास करने वाले व्यक्ति का अपने शरीर पर पूर्ण नियन्त्रण होता है। वह स्फूर्तिवान् और कार्यकुशल हो जाता है और थोड़े समय में अधिक कार्य कर सकता है। इस आसन से शरीर के सभी अङ्गों को लाभ मिलता है। यदि आप देर तक इस आसन को करने में असमर्थ हो जायें, तो भूमि पर चित लेट जायें और पुनः शरीर को ऊपर उठायें। इस आसन में जब आप अपने को उठायें तो आपका शरीर हलका हो जायेगा। आपको तत्काल आत्मोल्लास प्राप्त होगा और आप सक्रिय कार्य करने में तत्पर हो जायेंगे। यदि सर्वाङ्गासन के अभ्यास के पश्चात् गरदन और कन्धों में पीड़ा अनुभव हो, तो तुरन्त कुछ मिनट तक इस आसन को कर लें। इससे पीड़ा दूर हो जायेगी; क्योंकि यह गरदन को पीछे की ओर झुकाता है। इस प्रकार यह सर्वाङ्गासन की विपरीत-मुद्रा है। धनुरासन, शलभासन और भुजङ्गासन के अन्य सब लाभ इस आसन से प्राप्त होते हैं।

२५. शवासन

इस आसन से सभी मांसपेशियों, स्नायुओं आदि को विश्राम मिलता है। यह आसन सब क्रियाओं के अन्त में करना चाहिए। यह अन्तिम आसन है। इसका दूसरा नाम मृतासन है।

प्रविधि

एक नरम कम्बल बिछा लें और पीठ के बल चित लेट जायें। हाथों को अपने दोनों ओर भूमि पर रखें। टाँगों को पूर्णतया सीधा फैला दें। एड़ियों को आपस में मिला लें; पर अँगूठों को अलग-अलग रखें। नेत्र बन्द करके धीरे-धीरे श्वास लें। समस्त मांसपेशियों, स्नायुओं, अङ्गप्रत्यङ्गों आदि को ढीला छोड़ दें। ढीला करने की प्रक्रिया पैर के अँगूठों से प्रारम्भ करके पिण्डलियों की मांसपेशियों, पीठ, सीना, भुजाएँ, हाथ, गरदन, मुँह आदि की मांसपेशियों तक लायें। ध्यान रखें कि पेट के अङ्ग, हृदय, छाती, मस्तिष्क भी शिथिल हो रहे हों। नाड़ी-जाल को भी शिथिल कर दें। अब ॐ ॐ ॐ का मानसिक जप करें।

आत्मा अथवा राम का ध्यान करें। सोयें मत। पन्द्रह मिनट तक ध्यान करते रहें। आपको पूर्ण शान्ति, सहजता, विश्राम और चैन की अनुभूति होगी। आप सभी को इसमें आनन्द की प्राप्ति होगी। शब्द अपूर्ण हैं। वे भावनाओं की यथेष्ट अभिव्यक्ति नहीं कर सकते।

लाभ

शवासन में मुद्रा एवं ध्यान दोनों शामिल होते हैं। इससे न केवल शरीर को, अपितु मस्तिष्क एवं आत्मा को भी आराम मिलता है। इससे सुख, सुविधा एवं आराम प्राप्त होता है। शिथिलता लाना मांसपेशियों के व्यायाम में महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। यह तो आप भली-भाँति जानते हैं कि हलासन, सर्वाङ्गासन, पश्चिमोत्तानासन, धनुरासन एवं अर्ध-मत्स्येन्द्रासन में पीठ की समस्त मांसपेशियाँ (Lettissimus Dorsi), कटिलंकिनी-पेशी (Psoasmagnus), चतुरस्रा-पेशी (Quadratus), अनुकण्डरिका-पेशी (Lumborum), ऋजुपेशी (Rectus), उदरीय-पेशी (Abdominis), प्रधान-वक्षीय अंसचक्र (Pectoralis major of the chest), द्विशिरस्क-पेशी (Biceps), त्रिशिरस्क-पेशी (Triceps), भुजाओं की अंसछद-पेशी (Deltoid of the arm), जङ्घाओं की अन्तःकोचि-पेशी (Sartorius) प्रचुर मात्रा में तनती तथा सिकुड़ती हैं। मांसपेशियों की तीव्र क्रिया के समय चयापचय (Metabolism) में वृद्धि होती है। चयापचय शरीर में होने वाला उपचयी (Anabolic) तथा अपचयी (Catabolic) परिवर्तन—शरीर में घटित होने वाला विघर्षण तथा दारण—है। उपचयी परिवर्तन रचनात्मक तथा अपचयी परिवर्तन ध्वंसात्मक होता है। चयापचय-काल में मांसपेशियों के सभी ऊतकों (Tissue) को केशिकास्राव (Capillary oozing) से स्वच्छ ओषजनित रक्त (Oxygenated blood) अथवा प्लाविका (Plasma) प्राप्त होती है तथा प्राङ्गार-द्विजारेय (Carbon-dioxide) को शिराओं (Veins) से हो कर दक्षिण हृदयालिन्द (Right auricle of the heart) में वापस लाया जाता है। इसे ऊतक-श्वसन (Tissue-respiration) कहते हैं। जिस प्रकार फेफड़ों में ओषजन (Oxygen) तथा प्राङ्गार-द्विजारेय (कार्बन-डाइआक्साइड) की परस्पर अदला-बदली होती है उसी प्रकार ऊतकों में भी प्राङ्गार-द्विजारेय तथा ओषजन की अदला-बदली होती है। शरीर के अद्‌भुत सर्जन तथा उसकी आन्तरिक यन्त्रावली की कार्यप्रणाली पर ध्यान दें। यह यन्त्र कितना आश्चर्यजनक है! क्या कोई वैज्ञानिक एक भी परमाणु का, एक भी कोशाणु का अथवा शरीर के एक भी अङ्ग का

निर्माण कर सकता है! इस अद्भुत शरीर-यन्त्र के स्रष्टा को करबद्ध नमस्कार करें। **'ॐ राम'** का जप करें। शान्ति में निमग्न हो जायें। उनके प्रसाद से आपको सृष्टि का समस्त रहस्य ज्ञात हो जायेगा।

जिन मांसपेशियों पर अधिक जोर पड़ता है, उन्हें शिथिल करने तथा आराम देने की आवश्यकता होती है। एकमात्र शवासन ही उन्हें तत्काल निपुणतापूर्वक पूर्ण शिथिलता तथा विश्राम सुनिश्चित रूप से प्रदान करता है।

चतुर्थ अध्याय

विविध आसन

२६. जानुशीर्षासन

प्रविधि

बैठ जायें। बायीं एड़ी से मूलाधार-स्थान को दबाते हुए दायीं टाँग को पूरी फैला दें। इसे बिलकुल सीधी रखें और पैर को दोनों हाथों से पकड़ लें। श्वास बाहर निकालें, पेट को अन्दर ले जायें। धीरे-धीरे शिर को झुकायें और माथे से दायाँ घुटना स्पर्श करायें। इस मुद्रा को ५ से १० सेकण्ड तक रखें। धीरे-धीरे यह समय बढ़ाते जायें। निरन्तर अभ्यास से आप इस आसन को आधा घण्टे तक कर सकते हैं।

फिर शिर को पूर्व सामान्य स्थिति में ऊपर ले आयें और कुछ मिनट विश्राम करें। पुनः यह आसन करें। इस प्रकार इस आसन को पाँच-छः बार करें। क्रमानुसार पार्श्व बदलते रहें। अभ्यास करते समय गुदा की स्नायुओं को ऊपर की ओर रखें। यह अनुभव करें कि वीर्य-शक्ति मस्तिष्क की ओर प्रवाहित हो कर ओज-शक्ति में परिणत हो रही है। आप अपने मस्तिष्क की भावना-शक्ति का प्रयोग करें। जो इस आसन का अभ्यास करते हैं, उनके लिए पश्चिमोत्तानासन करना सरल हो जाता है।

एड़ी को मूलाधार पर ले जाने के स्थान में आप इसे जङ्घा पर भी रख सकते हैं। यह आसन पहले वाले से कुछ अधिक कठिन है। इस आसन को शौच आदि से निवृत्त होने के बाद करना चाहिए।

लाभ

इस आसन से जठराग्नि तीव्र होती है तथा पाचन-शक्ति को सहायता मिलती है। यह सूर्य-चक्र को उद्दीपित करता है तथा ब्रह्मचर्य के पालन में सहायता प्रदान करता है। समस्त मूत्र-रोग दूर होते हैं। यह आसन आन्त्रशूल में बहुत उपयोगी है। इससे कुण्डलिनी जाग्रत होती है तथा सुस्ती और दुर्बलता समाप्त हो जाती है। इस आसन को करने से आपको बहुत स्फूर्ति का अनुभव

होगा। टाँगें शक्तिशाली हो जाती हैं। पश्चिमोत्तानासन में वर्णित किये गये सारे अन्य लाभ इस आसन से भी प्राप्त होते हैं।

२७. तोलांगुलासन

इस आसन में तुला (तराजू)-जैसी मुद्रा हो जाती है; इसलिए इसका नाम तोलांगुलासन है।

प्रविधि

मत्स्यासन की भाँति पद्मासन में लेट जायें। हथेलियों को नितम्बों के नीचे रखें। यदि आपको हथेलियों को नितम्बों के नीचे रखना कठिन अनुभव होता हो, तो आप अनुक्रमिक रूप से झुक कर अपनी दोनों कोहनियों के सहारे धीरे-धीरे टिक जायें। शिर और शरीर का ऊपरी भाग भूमि से ऊपर उठायें। अब पूरा शरीर नितम्बों तथा प्रबाहुओं पर टिक जायेगा। ठोड़ी को सीने पर दबायें। यह जालन्धर-बन्ध है, जो कि इस आसन में किया जा सकता है। जितनी देर आराम से श्वास को रोक सकते हों, रोकें। तत्पश्चात् श्वास को धीरे-धीरे छोड़ें। इसे आप पाँच से तीस मिनट तक कर सकते हैं।

लाभ

इस आसन से उदरवायु दूर होता है। मेरुदण्ड बढ़ता तथा विकसित होता है। पेट के खिंचने के कारण मल बृहदान्त्र से मलाशय की ओर धकेला जाता है। इस आसन से सीना पर्याप्त रूप से विस्तृत होता है। कपोतवक्ष-दोष दूर हो जाता है तथा सीना विशाल और सुन्दर हो जाता है। इस आसन से पद्मासन के पूरे लाभ प्राप्त होते हैं। पेशियों और भुजाओं की स्नायुओं तथा प्रबाहुओं को अधिक मात्रा में रक्त प्राप्त होता है। अतएव वे शक्तिशाली हो जाती हैं।

२८. गर्भासन

इस आसन को करते समय गर्भ-स्थित बालक-जैसी मुद्रा हो जाती है; इसलिए इसे गर्भासन कहते हैं।

प्रविधि

आगे कुक्कुटासन में वर्णन किये अनुसार, दोनों हाथों को जङ्घाओं तथा

पिण्डलियों के बीच में सन्निविष्ट करें। दोनों हाथों की कोहनियों को बाहर निकालें। दाहिने हाथ से दाहिना कान और बायें हाथ से बायाँ कान पकड़ लें। आपको इस आसन का अन्तिम चरण बड़ी सावधानी से करना चाहिए; क्योंकि हाथों से कानों को पकड़ने की कोशिश करते समय आपके पीछे की ओर गिरने की आशङ्का रहती है। शरीर को गिरने से रोके रखने के लिए आपके पास कोई हाथ नहीं होगा, आप निरवलम्ब हो जायेंगे; किन्तु अभ्यास से आप धीरे-धीरे नितम्बों पर शरीर का सन्तुलन रख सकते हैं। कुछ दिनों के अभ्यास के बाद आपका शरीर स्थिर हो जायेगा। यदि इस आसन को करने में आपको कठिनाई प्रतीत हो, तो आप पद्मासन के बिना ही यह आसन कर सकते हैं। जङ्घाओं के पीछे से भुजाओं को निकाल कर कान अथवा गरदन पकड़ें। इस किञ्चित् परिवर्तित मुद्रा से टाँगें नीचे की ओर फैलेंगी। इस आसन में दो-तीन मिनट तक रहें और इसे पाँच बार करें।

लाभ

इस आसन को करने से पाचन-शक्ति बढ़ती है, भूख तीव्र होती है और शौच खुल कर तथा साफ होता है। अनेक आन्त्र-रोग दूर हो जाते हैं। हाथ और पैर सुदृढ़ हो जाते हैं।

२९. ससाङ्गासन

प्रविधि तथा लाभ

टाँगों को झुका कर पैरों के अँगूठों और घुटनों के बल खड़े हो जायें। हथेलियों को तलवों के पार्श्व में रखें। पीठ को पूरी तरह चक्राकार मोड़ें तथा अपने शिर को भूमि की ओर झुकायें। हाथों को मत झुकायें। उन्हें सीधा रखें। यह आसन धनुरासन-जैसा ही है। आप इसे उत्थित-मुद्रा में धनुरासन या चक्रासन कह सकते हैं। इस मुद्रा में धनुरासन के सम्पूर्ण लाभ प्राप्त होते हैं।

३०. सिंहासन

प्रविधि तथा लाभ

दोनों एड़ियों को अण्डकोष के नीचे या गुदा और अण्डकोष के बीच में रखें। बायीं एड़ी दायीं ओर तथा दायीं एड़ी बायीं ओर रहे। हाथों को जङ्घाओं

के बीच में रखें। मुँह खोल लें। यह रोगों का विनाशक है। योगी लोग इसका अभ्यास करते हैं। इस आसन से बन्धों का अभ्यास भली प्रकार किया जा सकता है।

३१. कुक्कुटासन

संस्कृत में कुक्कुट का अर्थ मुरगा है। इस आसन के प्रदर्शन में कुक्कुट-जैसी मुद्रा होती है।

प्रविधि

प्रथम पद्मासन लगायें। दोनों भुजाओं को एक-एक करके कोहनी के जोड़ तक पिण्डलियों के बीच वाले स्थान में सन्निविष्ट करें। हथेलियों को भूमि पर इस प्रकार रखें कि उँगलियाँ सामने की ओर रहें। अब शरीर को भूमि से ऊपर उठायें जैसा चित्र में दिखाया गया है। पैरों का ताला कोहनियों के जोड़ तक आना चाहिए। यदि आप पद्मासन में थोड़ा ऊपर उठें, तो हाथों को सन्निविष्ट करना सरल हो जाता है। स्थूल शरीर वाले साधकों के लिए जङ्घा और पिण्डलियों के बीच में हाथ सन्निविष्ट करना कठिन होता है। जितनी देर तक इस आसन में रह सकें, रहें।

लाभ

पद्मासन के सम्पूर्ण लाभ इस आसन से अधिकतम मात्रा में प्राप्त हो सकते हैं। आलस्य दूर होता है। नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं। भुजाओं की द्विशिरस्क पेशियों, कन्धों के अंसछद, बृहद् तथा लघु अंसचक्र आदि का भली-भाँति विकास होता है। इस आसन से वक्षस्थल विशाल तथा भुजाएँ प्रवर्धित होती हैं।

३२. गोरक्षासन

प्रविधि

बैठ जायें तथा पैरों को सामने की ओर इस प्रकार फैलायें कि तलवे एक-दूसरे को भली प्रकार स्पर्श करते रहें। पैरों को घुटनों से मोड़ें तथा तलवों को पास-पास रखते हुए उन्हें (तलवों को) शरीर की ओर लायें। एड़ियों को ऊरु-मूलों के पास रखें। अब शरीर को ऊपर की ओर उठायें और

मूलाधार-प्रदेश को एड़ियों पर रखें। हाथों को घुटनों पर रखें। दायें हाथ से दायें घुटने को तथा बायें हाथ से बायें घुटने को फर्श की ओर दबायें। मेरुदण्ड सीधा रखें। नासिका के अग्रभाग पर देखें।

३३. कन्दपीड़ासन

प्रविधि

यह आसन मोटी जङ्घाओं और पिण्डलियों की मांसपेशियों वालों के लिए कुछ कठिन है। पतले-दुबले लोग इसे बड़े सुन्दर ढङ्ग से कर सकते हैं। एड़ियों और पैरों की उँगलियों को मिला कर भूमि पर बैठ जायें अर्थात् पैरों के तलवे एक-दूसरे के सामने हों। धीरे-धीरे पैरों को मोड़ कर एड़ियों को कन्द-स्थान पर तथा पैरों की उँगलियों को पीछे की ओर गुदा पर रखें। अब शरीर केवल दोनों घुटनों और पैरों के पार्श्वों पर टिकेगा। हाथों को घुटनों पर रखें। सीधे बैठ जायें। इस आसन को करने की एक अन्य विधि भी है। भूमि पर इस प्रकार बैठें कि पैरों के तलवे परस्पर विपरीत दिशा में हों। वे दोनों आमने-सामने भी होने चाहिए। दोनों हाथों से एक पैर की उँगलियों को पकड़ कर पैर को धीरे-धीरे पेट पर लाने का प्रयत्न करें। इसी भाँति दूसरा पैर भी पेट पर ले आयें। अब आप इस आसन को अलग-अलग पैरों से करने लगें, तब आप इसे दोनों पैरों से एक-साथ करने का प्रयत्न करें। इस आसन को धीरे-धीरे तथा बहुत सावधानी से करें। यदि इसे आप बलपूर्वक जल्दी-जल्दी करेंगे तो आपकी टाँगों, घुटनों, उँगलियों आदि में पीड़ा होगी। आसन पूर्ण होने पर तलवे भिन्न दिशाओं में होंगे और पैरों के पृष्ठ भाग एक-दूसरे के सामने होंगे।

लाभ

सब प्रकार के घुटनों के रोग, टाँगों का सन्धिवात, गृध्रसी और पैरों की उँगलियों की गठिया (गाउट) ठीक हो जाते हैं। पिण्डलियों और टाँगों की स्नायुओं में शक्ति-सञ्चार होता है। स्थूल शरीर वाले व्यक्तियों के लिए यह आसन करना कठिन प्रतीत होता है।

३४. सङ्कटासन

प्रविधि

दायें पैर पर खड़े हो जायें। बायीं टाँग उठा कर उससे दायीं टाँग को लपेट लें। हाथों को घुटनों पर रखें। यह सङ्कटासन है। गरुड़ासन-मुद्रा को भी इसी नाम से पुकारते हैं।

३५. योगासन

प्रविधि

दायें पैर को बायीं जङ्घा पर और बायें पैर को दायीं जङ्घा पर रखें। तलवे ऊपर की ओर रहें। हाथों को अपनी बगल में भूमि पर रखें। हथेलियों को उपरिमुखी रखें। दृष्टि को नासिका के अग्रभाग पर केन्द्रित करें तथा चिरकाल तक ध्यान लगायें।

३६. उत्कटासन

प्रविधि तथा लाभ

खड़े हो जायें। पैरों को मिला कर रखें और हाथों को कूल्हों पर— एक हाथ एक ओर एक कूल्हे पर तथा दूसरा हाथ दूसरी ओर दूसरे कूल्हे पर—रखें। फिर शरीर को धीरे-धीरे नीचे लायें। शरीर को नीचे लाते समय आपको कुछ कठिनाई अनुभव होगी। प्रारम्भ में सहायता हेतु दोनों दरवाजों के किनारों को अपने कूल्हों की बराबर ऊँचाई पर पकड़ सकते हैं और फिर उनके आश्रय से शरीर को नीचे लायें। आप कुरसी के दोनों पार्श्वों का भी आश्रय ले सकते हैं। जो व्यक्ति प्राणायाम करते हैं वे इस आसन को बड़ी आसानी से कर सकते हैं। इस आसन में अधिक बल की आवश्यकता नहीं है। व्यक्ति को शरीर का सन्तुलन रखना सीखना चाहिए। अति-दुबला-पतला मनुष्य इस आसन को बड़ी सुन्दरता से कर सकता है। शरीर को नीचे लाने में बहुत सम्भव है, आप सन्तुलन खो बैठें और आपका शरीर आगे-पीछे अथवा पार्श्वों की ओर हिचकोले खाने लगे; किन्तु कुछ दिनों के अभ्यास से आप मुद्रा को स्थिर रख सकेंगे। इस आसन को पूर्ण रूप से करने पर पैरों की उँगलियों से ले कर घुटनों तक आपकी टाँगें तथा नितम्बों से ले कर शिर तक शरीर के

भाग भूमि से लम्ब रेखा में होंगे और आपकी जङ्घाएँ भूमि से समानान्तर रेखा में होंगी। प्रारम्भ में जब आप इस आसन का अभ्यास करें तो आप कुरसी पर बैठ सकते हैं। शरीर को कुरसी से दो या तीन इञ्च ऊपर उठाइए और सन्तुलन रखने का प्रयास कीजिए। कुछ दिनों के पश्चात् आप अपने मित्र से कह कर कुरसी चुपचाप हटवा दें और सन्तुलन बनाये रखने का प्रयत्न करें। पैरों की उँगलियों के बल पर बैठें। शरीर का पूरा भार केवल उँगलियों पर ही रहे। नितम्ब एड़ियों को स्पर्श करें। इस आसन के करने से कटिवात दूर होता है। कलाई और पैरों की उँगलियाँ पुष्ट होती हैं। यह श्लीपद-रोग के लिए बहुत लाभदायी है। आप शरीर को और भी अधिक नीचे ला सकते हैं। इस आसन का उपयोग वस्तिक्रिया के लिए किया जाता है।

३७. ज्येष्टिकासन

प्रविधि

यह शवासन की भाँति विश्राम करने का आसन है। इसे भी समस्त आसनों के अन्त में करना चाहिए। यह शवासन-जैसा ही है। इस आसन में हाथ अपने शिर के दोनों ओर भूमि पर रखे जाते हैं जबकि शवासन में हाथ पार्श्व में रखे जाते हैं।

३८. अद्वासन

प्रविधि तथा लाभ

पेट तथा छाती के बल भूमि पर लेट जायें। इसमें आपके हाथ पार्श्व में तथा हथेलियाँ भूमि की ओर होंगी। शरीर को अच्छी तरह फैलायें। यह शवासन से विपरीत मुद्रा है; परन्तु इसके लाभ वही हैं। कुछ देर तक अपना दायाँ गाल और कुछ देर तक बायाँ गाल भूमि पर रखें।

३९. ऊर्ध्वपादासन

यह 'उत्तानपादासन' का दूसरा नाम है। निर्देशों के लिए हलासन का विवरण देखें।

४०. उष्ट्रासन

प्रविधि तथा लाभ

नीचे मुँह करके भूमि पर लेट जायें। टाँगों को मोड़ कर जङ्घाओं पर रखें और हाथों से पैरों के अँगूठों अथवा गुल्फों को पकड़ें। शिर को थोड़ा ऊपर उठा सकते हैं। यह भी धनुरासन के समान है; किन्तु इस आसन में जङ्घाएँ भूमि पर रखी जाती हैं। धनुरासन और शलभासन के लाभ इस आसन से मिल सकते हैं।

४१. मकरासन

प्रविधि

अद्वासन की भाँति मुँह नीचे करके भूमि पर लेट जायें। हाथों से शिर को पकड़ लें।

४२. भद्रासन

प्रविधि तथा लाभ

आराम से बैठ जायें। शरीर को सीधा तना हुआ रखें। दोनों एड़ियों को मूलाधार की बगलों में अथवा गुदा पर दृढ़ता से दबायें। दृष्टि को नासिकाग्रभाग पर रखें। इस आसन से समस्त रोग एवं विष-प्रभाव दूर हो जाते हैं।

४३. वृश्चिकासन

प्रविधि तथा लाभ

जो लोग शीर्षासन तथा हस्तवृक्षासन को काफी देर तक कर सकते हैं, वे इस आसन के लिए चेष्टा कर सकते हैं। इस आसन में आप हाथ और कोहनियों को भूमि पर रखें। प्रारम्भ में इस आसन का अभ्यास दीवार के सहारे करें। अब टाँगों को दीवार पर डाल दें और फिर पाँवों को दीवार से दो इञ्च दूर कर के सन्तुलन बनाये रखने का प्रयत्न करें। कुछ दिन तक इस प्रकार से अभ्यास कर जब आप सन्तुलन रखने लग जायें, तब शनैः-शनैः टाँगों को घुटनों पर और कूल्हों को पीठ की ओर झुकायें और पैरों के तलवों अथवा

उँगलियों को अपने शिर पर रखें। शीर्ष, चक्र और धनुर्-आसनों के सारे लाभ आपको इस आसन के अधिक मात्रा में प्राप्त होंगे।

४४. योगनिद्रासन

प्रविधि

शवासन की भाँति लेट जायें। स्थूलकाय व्यक्ति इस आसन को नहीं कर सकते; अतः उन्हें इसकी चेष्टा नहीं करनी चाहिए। टाँगें पकड़ कर पैरों को गरदन या शिर के नीचे जमा दें। फिर धीरे-धीरे नितम्बों को उठायें। हथेलियों को नितम्बों या कूल्हों के नीचे भूमि पर टिका दें।

४५. अर्ध-पादासन

प्रविधि

भूमि पर बैठ कर दायीं एड़ी दायें नितम्ब के पास और बायाँ गुल्फ बायें घुटने पर रखें। हाथों को नितम्बों से कुछ इञ्च की दूरी पर भूमि पर रखें। इसी प्रकार यह आसन दूसरी टाँग से भी करें।

४६. कोकिलासन

प्रविधि

समासन अथवा सिद्धासन में बैठें। हाथों को बाहुकक्षों में दृढ़ता से रखें। अब कोहनियाँ एक-सीध में हो जायेंगी। धीरे-धीरे झुकें और कोहनियों को अपने सामने की भूमि पर टेकें। सम्पूर्ण शरीर का भार दोनों नितम्बों और कोहनियों पर रहेगा। यह आसन एक कम्बल पर करें। अन्यथा कोहनियों को चोट पहुँचेगी।

४७. कर्णपीड़ासन

प्रविधि

हाथों को पीछे की ओर भूमि पर रख कर हलासन करें। अब धीरे-धीरे घुटनों पर टाँगों को मोड़ें तथा घुटनों को कन्धों से स्पर्श करायें। इस आसन में घुटनों से ले कर उँगलियों तक टाँगें भूमि के समानान्तर रहेंगी।

४८. वातायनासन

प्रविधि

सीधे खड़े हो जायें। दायाँ पैर पकड़ लें तथा उसकी एड़ी को दृढ़ता से जङ्घा के मूल में अथवा जननेन्द्रिय के मूल पर रख कर एक टाँग पर खड़े हो जायें। धीरे-धीरे बायीं टाँग झुका कर दायें घुटने से भूमि को स्पर्श करें। यह वातायनासन है।

४९. पर्यंकासन

साधारण सुप्त-वज्रासन को इस नाम से भी पुकारा जाता है। सुप्त-वज्रासन का वर्णन अन्यत्र किया गया है।

५०. मृतासन

यह शवासन का दूसरा नाम है। इसके लिए निर्देश अन्यत्र देखें।

विशेष निर्देश

(१) आसनों का अभ्यास एक अच्छे सुसंवातित, स्वच्छ कमरे में करना चाहिए जहाँ शुद्ध ताजा वायु की निर्बाध गति हो। कमरे का फर्श समतल हो। नदियों के रेतीले पृष्ठतल पर, खुले हुए हवादार स्थानों पर तथा समुद्री तटों पर भी आसनों का अभ्यास किया जा सकता है। यदि आप कमरे में आसनों का अभ्यास करते हैं तो ध्यान रखें कि कमरा इतना भरा हुआ नहीं हो कि जिसमें आप स्वच्छन्द रूप से हाथ-पैर और शरीर को न हिला-डुला सकें।

(२) आसन प्रातःकाल खाली पेट अथवा भोजन करने के कम-से-कम तीन घण्टे बाद करने चाहिए। प्रातःकाल आसनों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय है।

(३) प्रातः चार बजे सो कर उठते ही जप और ध्यान आरम्भ करना सदैव अच्छा होता है। इस समय मन पूर्णतया शान्त एवं स्फूर्त रहता है। इस समय आप बड़ी सरलता से ध्यानशील चित्त-वृत्ति को अपना सकते हैं। ध्यान अधिक महत्त्वपूर्ण है। प्रातःकाल बिस्तर से उठने पर मन स्वच्छ स्लेट की भाँति होता है, वह सांसारिक विचारों से मुक्त रहता है; अतः इस समय बिना किसी प्रयत्न अथवा सङ्घर्ष के ही मन ध्यान-स्थिति में प्रवेश कर जाता है।

(४) अधिकांश लोग प्रातःकाल के अपने अमूल्य समय को अकारण ही नष्ट कर देते हैं। ये लोग आधा घण्टा मल-त्याग में तथा आधा घण्टा दन्त-धावन में लगा देते हैं; अतः उनके ध्यान में बैठने के पूर्व ही सूर्य निकल आता है। यह बुरी आदत है। साधकों को पाँच मिनट में मलोत्सर्ग से निवृत्त हो जाना चाहिए। दूसरे पाँच मिनट में अपने दाँत साफ कर लेने चाहिए। यदि आपको मलावरोध की शिकायत हो तो बिस्तर से उठने के बाद तत्काल ही पाँच मिनट तक शलभासन, भुजङ्गासन और धनुरासन का सशक्त अभ्यास करें। यदि आप दिन में विलम्ब से मल-त्याग करने के अभ्यस्त हैं तो आप ऐसा आसन, प्राणायाम, जप और ध्यान के बाद कर सकते हैं।

(५) प्रातः चार बजे उठें। मल-मूत्र त्याग करें। अपना मुँह धोयें। इसके बाद अपने आसन, प्राणायाम तथा ध्यान का अभ्यास करें। यह क्रम लाभदायक है। यदि आप प्रातः ४ बजे से ६ बजे के बीच ध्यान करने के लिए विशेष रूप से

उत्सुक हों तो आप १० से १५ मिनट तक शीर्षासन करके ध्यान के लिए बैठ सकते हैं। ध्यान की समाप्ति पर आप अन्य आसन कर सकते हैं। यदि आप प्रातः जल्दी शौचादि से निवृत्त होने के अभ्यस्त नहीं हैं तो आप शौचादि से निवृत्त होने के पूर्व भी आसनों का अभ्यास कर सकते हैं। आसन और ध्यान के बाद आप शौचालय जा सकते हैं। उस समय शौच भी साफ होगा।

(६) जिन्हें जीर्ण मलावरोध हो, वे गणेश-क्रिया कर सकते हैं। साबुन या तेल से चिकनी की गयी मध्यमा उँगली मलाशय में डाल कर मल निकालने की क्रिया गणेश-क्रिया कहलाती है। कभी-कभी भरे-पेट को रिक्त करने के लिए वस्तिक्रिया भी लाभप्रद होती है।

(७) भूमि पर एक कम्बल बिछा दें और उस पर आसनों का अभ्यास करें। शीर्षासन तथा उसके विभिन्न प्रकारों का अभ्यास करने के लिए तकिया या चौहरा कम्बल उपयोग में लायें।

(८) आसन करते समय लँगोटी या कौपीन पहनें। आप शरीर पर बनियान धारण कर सकते हैं।

(९) आसन करते समय चश्मा (उपनेत्र) न पहनें। चश्मा पहने रहने पर उसके टूटने तथा उससे आँख में चोट लगने की आशङ्का रहती है।

(१०) जो साधक अधिक समय तक शीर्षासन आदि का अभ्यास करते हैं, उन्हें आसन की समाप्ति पर अल्पाहार लेना अथवा अथवा एक प्याला दूध पीना चाहिए।

(११) यदि आप अकेले शीर्षासन करने में ही आधा घण्टा या अधिक समय लगा सकते हों तो अन्य आसनों का समय कम कर दें।

(१२) आपको नियमित रूप से अभ्यास करना-चाहिए। मनमौजी ढङ्ग से आसन करने वाले व्यक्ति को कोई लाभ नहीं होता है।

"मिताहारं विना यस्तु योगारम्भं तु कारयेत्।
महारोगो भवेत्तस्य किञ्चिद् योगो न सिध्यति ॥"

(घेरण्डसंहिता)

—जो मिताहार न करके योगारम्भ करता है, उसको कुछ भी योग सिद्ध नहीं होता है और उसमें नाना रोग उत्पन्न होते हैं।

(१३) आसनों का अभ्यास आरम्भ करने से पूर्व, रात्रि को सोते समय एक या दो ग्राम वर्म सैण्टोनिन पाउडर की खुराक तथा प्रातः उठ कर दो औंस अरण्डी का तेल ले लें। तेल को पिपरमिन्ट के पानी, चाय या काली मिर्च के पानी में मिला कर पीयें। यदि आपको पसन्द हो तो केवल तेल ही पी सकते हैं। योगाभ्यास करने से पूर्व आँतों का भली प्रकार साफ होना आवश्यक है।

(१४) प्रारम्भ में आसन कम-से-कम समय तक करें; फिर धीरे-धीरे समय को बढ़ायें। जितनी देर तक आसन-मुद्रा को सुविधापूर्वक स्थिर रख सकते हों, उतनी देर तक आसन करें।

(१५) आसन अष्टाङ्गयोग का तृतीय अङ्ग है। आसन में भली प्रकार स्थिर होने के पश्चात् ही आप प्राणायाम से लाभान्वित हो सकते हैं।

(१६) आसन और प्राणायाम के अभ्यास के साथ यदि जप भी किया जाये तो इससे अधिकतम लाभ होता है।

(१७) यदि भवन की नींव पक्की नहीं डाली गयी तो ऊपर की बनायी हुई इमारत शीघ्र गिर जायेगी। इसी प्रकार यदि योग के साधक ने आसन पर विजय प्राप्त नहीं की तो वह योगाभ्यास के अपने उच्चतर मार्ग में सफलतापूर्वक आगे नहीं बढ़ सकता।

(१८) आसनों से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए नियमित रूप से अभ्यास करना अत्यावश्यक है। साधारणतया लोग प्रारम्भ में दो महीने तक तो बड़ी रुचि और समुत्साह से आसनों का अभ्यास करते हैं; फिर अभ्यास करना छोड़ देते हैं। यह बड़ी भारी भूल है। वे चाहते हैं कि यौगिक शिक्षक सदा उनके पास रहे। उनमें स्त्री-सुलभ पराश्रित रहने की मनोवृत्ति होती है। वे आलसी, निष्क्रिय एवं सुस्त होते हैं।

(१९) आजकल मैदान में खेले जाने वाले खेल बड़े मँहगे हो गये हैं। जाल, रैकट, गेंद तथा पम्प बार-बार खरीदने पड़ते हैं। आसनों के अभ्यास के लिए कुछ भी व्यय नहीं करना पड़ता।

(२०) शारीरिक व्यायाम प्राण को बाहर खींचते हैं। आसन प्राण को भीतर खींचते हैं और उसका सारे शरीर और विभिन्न संस्थानों में सम विभाजन कर देते हैं। आसन न केवल शारीरिक अपितु आध्यात्मिक उत्थान भी करते हैं; क्योंकि इनसे मूलाधार-चक्र में सोयी हुई कुण्डलिनी-शक्ति जाग्रत होती है। यह पतञ्जलि

महर्षि के अष्टाङ्ग राजयोग का तृतीय अङ्ग है। विशेष प्रकार के आसन के अभ्यास से विशेष रोग का निवारण होता है।

(२१) आसन केवल शारीरिक व्यायाम मात्र ही नहीं हैं; बल्कि इनमें कुछ और विशेषता भी है। इनका आध्यात्मिक आधार है। इन्द्रियों, मन और शरीर को नियन्त्रित करने में इनसे अत्यधिक योग मिलता है। इनसे शरीर-शुद्धि और नाड़ी-शुद्धि होती है तथा कुण्डलिनी जाग्रत होती है जो साधक को आनन्द, शक्ति और योग-समाधि प्रदान करती है। यदि आप दण्ड-बैठक (केवल शारीरिक व्यायाम) प्रतिदिन ५०० बार अथवा समानान्तर छड़ों पर चलने वाला व्यायाम प्रतिदिन ५० बार करके पाँच वर्षों तक अभ्यास करें तब भी इससे इस रहस्यमयी शक्ति, कुण्डलिनी को जाग्रत नहीं कर सकेंगे। क्या अब आपने साधारण शारीरिक व्यायाम और आसनों के व्यायाम के अन्तर को जान लिया?

(२२) स्त्रियों को भी आसनों का अभ्यास करना चाहिए। इससे उनसे स्वस्थ तथा बलवान् सन्तान उत्पन्न होगी। यदि माताएँ स्वस्थ एवं बलवती होगीं तो निश्चय ही उनके बच्चे भी स्वस्थ और बलवान् होंगे। नवयुवतियों के पुनरुत्थान का तात्पर्य है अखिल विश्व का पुनरुत्थान। यदि स्त्रियाँ रुचि एवं ध्यान के साथ नियमपूर्वक आसनों का अभ्यास करें तो इसमें सन्देह नहीं कि उनके स्वास्थ्य एवं जीवन-शक्ति में अद्भुत वृद्धि होगी। आशा है कि वे मेरी हार्दिक प्रार्थना को धैर्यपूर्वक सुन कर इन यौगिक पाठों को पढ़ते ही यौगिक आसनों का अभ्यास आरम्भ कर देंगी। वे नव-महिला शिक्षार्थी धन्य हैं जो योग के मार्ग पर चलती हैं। योगिनी महिलाओं से उत्पन्न हुई सन्तान भी योगी ही होगी।

(२३) योगासनों के साथ-साथ जप और प्राणायाम भी चलने चाहिए। तभी जा कर यथार्थ योग होता है।

(२४) प्रारम्भ में आप कुछ आसनों को पूर्ण रूप से नहीं कर पायेंगे। नियमित अभ्यास से पूर्णता आ जायेगी। इसके लिए धैर्य और अध्यवसाय की, सच्चाई और तत्परता की आवश्यकता है।

(२५) शीर्ष, सर्वाङ्ग, पश्चिमोत्तान, धनुर् और मयूर आसनों का अच्छा सङ्घटन होता है। शीर्ष, सर्वाङ्ग और पश्चिमोत्तान त्रयासन हैं। यदि आपके पास समय नहीं है तो आप आसनों की संख्या को कम कर सकते हैं। यह आसन-त्रय करने से ही आपको अन्य आसनों के गुण तथा लाभ प्राप्त हो जायेंगे।

(२६) जप तथा ध्यान के लिए चार आसन निर्धारित हैं। ये हैं पद्म, सिद्ध, स्वस्तिक और सुखासन। अधिकांश लोगों के लिए पद्मासन सर्वश्रेष्ठ है। जो ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहते हैं, उन्हें सिद्धासन का अभ्यास करना चाहिए।

(२७) आसनों को कभी न बदलें। एक कुलक बना लें और उसका दृढ़ता से अभ्यास करें। यदि आप एक आसन-कुलक को आज और दूसरे को कल करते हैं, तो इस प्रकार के आसनों के करने से आपको विशेष लाभ नहीं होगा।

(२८) आप आसनों में जितना स्थिर रहेंगे उतना ही अधिक आप अपना ध्यान केन्द्रित तथा मन को एकाग्र कर सकेंगे। आप स्थिर आसन के बिना ध्यान भली प्रकार नहीं कर सकते।

(२९) सम्पूर्ण अभ्यास-काल में आपको अपनी सहज बुद्धि का सदैव उपयोग करना चाहिए। यदि आपको एक प्रकार का भोजन अनुकूल न पड़े तो भली प्रकार विचार कर अथवा अपने गुरु से परामर्श कर के उसे बदल दें। यदि कोई विशेष आसन अनुकूल न पड़े, तो अन्य आसन चुन लेना चाहिए। इसे युक्ति कहते हैं। जहाँ युक्ति है, वहाँ सिद्धि, भुक्ति और मुक्ति हैं।

(३०) यदि आप किसी विशेष आसन को पूर्ण सन्तोषप्रद ढङ्ग से न कर सकें, तो निराश मत हों। जहाँ चाह है, वहाँ राह है। हथेली पर दही नहीं जमता। ब्रूस और मकड़ी की कहानी याद रखें और पुनः-पुनः अभ्यास करें। निरन्तर अभ्यास से सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

(३१) कुण्डलिनी जाग्रत हुए बिना समाधि अथवा परम चेतनावस्था की स्थिति सम्भव नहीं है। कुण्डलिनी कई प्रकार से जाग्रत की जा सकती है, उदाहरणार्थ आसन, मुद्रा, बन्ध, प्राणायाम, भक्ति, गुरुकृपा, जप, शक्तिशाली विश्लेषणात्मक सङ्कल्प-शक्ति तथा विचार-शक्ति। जो लोग कुण्डलिनी जाग्रत करने की चेष्टा करें, उनमें मन, वाणी और कर्म की पूर्ण शुद्धि होनी चाहिए। उनको मानसिक और शारीरिक ब्रह्मचर्य रखना चाहिए। तभी वे समाधि के लाभ प्राप्त कर सकते हैं। कुण्डलिनी जाग्रत होने पर पुराने संस्कार नष्ट हो जाते हैं और अज्ञानता-रूपी हृदय-ग्रन्थि छिन्न-भिन्न हो जाती है। व्यक्ति अन्ततः संसार-चक्र (जन्म-मरण) से मुक्त हो कर अमर सच्चिदानन्द-स्थिति को प्राप्त कर लेता है।

(३२) आसनों के अभ्यास में लघु कुम्भक (श्वास को रोकना) से आसनों की

प्रभावोत्पादकता में वृद्धि होती है तथा योगाभ्यास करने वाले व्यक्ति को अधिक शक्ति एवं क्षमता प्राप्त होती है।

(३३) जापक आसनों के अभ्यास-काल में अपना मन्त्र-जप कर सकते हैं। जब आप छः मास तक मन्त्रोच्चारण करते रहेंगे तो आपकी एक आदत बन जायेगी और संस्कारों के प्रभाव से आप स्वतः ही आसन करते समय भी निर्बाध रूप से जप करते रहेंगे। इसमें कोई कठिनाई नहीं होगी। व्यापारीगण, जिनको बहुत कम समय मिलता है, आसनों के मध्य जप कर सकते हैं। यह कुछ ऐसा है जैसा कि एक पत्थर फेंकने से चार फल प्राप्त करना। इससे आपको कई सिद्धियाँ प्राप्त होंगी।

(३४) जो लोग शीर्षासन और उसके विभिन्न प्रकारों का अभ्यास करते हैं, उन्हें आसन समाप्त करने के बाद अल्पाहार, एक प्याला दूध या फलों का रस पी लेना चाहिए। पर्याप्त देर तक अभ्यास करने वालों के लिए उपाहार परम आवश्यक है। उन्हे दृढ़ता के साथ ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना चाहिए।

(३५) प्रत्येक साधक को अपनी प्रकृति, क्षमता, सुविधा, अवकाश तथा आवश्यकतानुसार कुछ आसनों को अभ्यास हेतु चुन लेना चाहिए।

(३६) यह उचित है कि योग के साधक मल-त्याग के पश्चात् समस्त आसन करें। यदि आपको अपराह्न अथवा सायङ्काल में ही शौच-शुद्धि की आदत हो तो किसी प्रकार इस आदत को बदल देना चाहिए। प्रतिदिन प्रातःकाल बिस्तर से उठते ही एक बार शौच साफ होना चाहिए। प्रातः ४ बजे नियम से थोड़े समय के लिए एक बार शौचालय में जा कर बैठें। हो सकता है कि कुछ दिन तक आप उस समय मल-त्याग न कर सकें; किन्तु कुछ समय बाद आपको नियमित रूप से शौच साफ होने लगेगा और आपकी एक आदत बन जायेगी। योगीजन तुरन्त किसी भी पुरानी आदत को छोड़ कर नयी आदत डाल सकते हैं। रात्रि को सोते समय और प्रातः उठते ही ठण्ढा अथवा मन्दोष्ण जल पियें। भोजन भी नियमित तथा व्यवस्थित करें। प्रातः उठते ही आप पहले ध्यान करें; फिर आसन कर सकते हैं।

(३७) यदि आप अपने भोजन, आसन और ध्यान के विषय में सावधान रहें तो थोड़े समय में ही आपके नेत्र सुन्दर तथा चमकीले, वर्ण सुन्दर तथा चित्त शान्त होगा। हठयोग साधकों को सौन्दर्य, स्वास्थ्य, शक्ति, चिरायु आदि की प्राप्ति कराता है।

(३८) अनावश्यक चिन्ताओं से बचते रहना चाहिए। परेशान नहीं होना चाहिए। चिन्तित नहीं होना चाहिए। सुस्त मत बनें तथा अपना समय नष्ट मत करें। यदि आपकी उन्नति में देर लगे, तो अपने को परेशान मत करें, शान्ति से प्रतीक्षा करें। यदि आपमें हार्दिक भावना है, तो निश्चय ही आपको सफलता मिलेगी।

(३९) अपनी साधना में एक भी दिन न चूकें।

(४०) शरीर को अनावश्यक मत हिलायें। शरीर को बार-बार हिलाने से मन भी विक्षुब्ध हो जाता है। शरीर को थोड़ी-थोड़ी देर बाद मत खुजलायें। आसन चट्टान की भाँति दृढ़ होना चाहिए।

(४१) श्वास धीरे-धीरे लें। स्थान बार-बार मत बदलें। प्रतिदिन एक समय में एक ही स्थान पर बैठें। अपने गुरु द्वारा बताये अनुसार उपयुक्त मनोवृत्ति बनायें।

(४२) सांसारिक वासना, जिसका कि निर्माण गत सैकड़ों जीवनों के अभ्यास से हुआ है, कभी नष्ट नहीं होती। इसका विनाश केवल चिरकाल तक योगाभ्यास करने से ही हो सकता है।

(४३) सिद्धियों की कभी परवाह मत करें। उनसे निष्ठुरतापूर्वक दूर रहें। उनसे आपका पतन होगा।

(४४) यम और नियम योग के आधार हैं। इनमें पूर्ण रूप से स्थिर हो जाने पर समाधि स्वतः ही लग जायेगी।

(४५) मन के साथ उदारता नहीं बरतनी चाहिए। यदि आज मन को एक विलास-वस्तु देंगे, तो वह कल दो की माँग करेगा। इस प्रकार प्रतिदिन विलास-वस्तुओं की संख्या बढ़ती जायेगी। मन की दशा अधिक लाड़-प्यार में बिगड़े हुए बच्चे के समान हो जायेगी। कहावत भी है, 'दण्ड से बचाना बच्चे को बिगाड़ना है। यही बात मन पर भी लागू होती है। मन बच्चे से भी अधिक बुरा है। आपको प्रत्येक गम्भीर भूल के लिए मन को व्रत (उपवास) आदि के द्वारा दण्डित करना होगा। महात्मा गान्धी ऐसा ही किया करते थे; अतः वे शुद्ध हो गये। उन्होंने अपनी इच्छा-शक्ति को शुद्ध, बलवान् और अप्रतिरोध्य बना लिया था। अपने अङ्गों को उनके उपयुक्त स्थानों पर रखें। इन्हें इञ्च-भर भी मत हिलने दें। अभ्यास से चित्त को एकाग्र बनायें।

(४६) यदि आप अपने दोषों पर सावधानी से दृष्टि रखें तथा यदि आपमें हार्दिक भाव हैं और यदि आप सङ्घर्ष करें, तो ये दोष कभी-न-कभी नष्ट हो जायेंगे। मलिनताओं को एक-एक करके, थोड़ा-थोड़ा करके पूर्णतया नष्ट कर दें।

(४७) मुँह के द्वारा जल पी कर पेट और छोटी आँतों में ले जायें और फिर इसे तुरन्त एनीमे की भाँति मल-द्वार से बाहर निकाल दें। हठयोग में इसे शंखप्रक्षालन-क्रिया कहते हैं। मल-द्वार के द्वारा सिगरेट का धुआँ तक बाहर निकाला जा सकता है। किष्किन्धा के ब्रह्मचारी शम्भुनाथ जी इसे करते थे। वाराणसी के योगी त्रिलिङ्ग स्वामी शंखप्रक्षालन में अति-दक्ष थे। शंखप्रक्षालन में नौलि और बस्ति क्रियाओं की सहायता अपेक्षित है। हार्दिक भावना से अभ्यास करने वालों के लिए योग-मार्ग में कठिनाई बिलकुल नहीं है।

(४८) मुंह या नासिका द्वारा एक लीटर पानी पी लें और उसे २० सेकण्ड तक रोके रखें। फिर धीरे-धीरे बाहर निकाल दें। यह कुञ्जर-क्रिया या कुञ्जर-योग कहलाता है। यह आमाशय को साफ करने की प्रक्रिया है। यह पेट के लिए निर्मूल्य मृदु विरेचक का काम करती है। पेट में जितनी विकृत सामग्री सड़ रही होगी, वह निकल जायेगा। आपको फिर पेट का कोई रोग नहीं होगा। इसे कभी-कभी करें। इसे आदत मत बनायें। यह एक हठयोग-क्रिया है।

(४९) लोग निःस्वार्थ सेवा द्वारा मल तथा उपासना द्वारा विक्षेप दूर नहीं करना चाहते, वे तुरन्त कुण्डलिनी को जाग्रत करने तथा ब्रह्माकार-वृत्ति को विकसित करने को कूद पड़ते हैं। इससे वे अपनी टाँगें तोड़ बैठते हैं। सेवा और उपासना करें, पुरुषार्थ करें; फिर ज्ञान या मोक्ष स्वतः ही प्राप्त हो जायेगा, कुण्डलिनी स्वयं ही जाग्रत हो जायेगी।

(५०) व्यक्ति एक-साथ १३ घण्टे बिना हिले-डुले एक आसन में बैठ सकता है, फिर भी वह कामनाओं से परिपूर्ण हो सकता है। यह सरकस के करतब या नट की कलाबाजी की भाँति एक शारीरिक व्यायाम है। कोई मनुष्य बिना नेत्र बन्द किये, बिना पुतली फेरे, बिना पलक झपकाये तीन घण्टे तक त्राटक कर लेता है; फिर भी वह इच्छाओं एवं अहंभाव से पूर्ण रहता है। यह भी एक दूसरे प्रकार का शारीरिक व्यायाम है। इसका आध्यात्मिकता से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस प्रकार का अभ्यास करने वालों को जो देखते हैं वे धोखे में आ जाते हैं। चालीस दिन तक उपवास करना भी भौतिक शरीर का एक अन्य प्रकार का प्रशिक्षण है।

(५१) युवावस्था में ही आध्यात्मिकता का बीज बोयें। अपने वीर्य को नष्ट

मत करें। इन्द्रिय और मन को अनुशासित करें। साधना करें। चित्त एकाग्र करें, अपने-आपको शुद्ध करें, ध्यान करें, सेवा करें, प्रेम करें, सबके साथ करुणा-भाव रखें और आत्मसाक्षात्कार करें। वृद्ध होने पर आप चिन्ता और मृत्यु के भय से मुक्त रहेंगे। वृद्धावस्था में किसी तरह की कठोर साधना करना बड़ा कठिन है; अतएव किशोरावस्था में ही सचेत हो जायें।

(५२) सांसारिक मामलों के विषय में अधिक सोच-विचार मत करें। कर्तव्य-पालन के लिए जितना आवश्यक हो, उतना ही सोचें। अपना कर्तव्य करें और शेष ईश्वर पर छोड़ दें।

(५३) थोड़े ही समय में आप विशेष प्रकार की साधना से विशिष्ट लाभ प्राप्त होता अनुभव करेंगे।

(५४) जप और ध्यान प्रारम्भ करने से पूर्व आसनों का अभ्यास अति-सुन्दर और सहायक होता है। इससे शरीर एवं मन का आलस्य और तन्द्रापन दूर होता है। यह मन को स्थिर कर, उसमें नयी शक्ति और शान्ति प्रदान करता है।

(५५) केवल नौलि और उड्डीयान आपको मोक्ष नहीं दे सकते। ये केवल स्वास्थ्य को सुन्दर रखने के साधन मात्र हैं। इन्हें ही अपना परम लक्ष्य मत समझ बैठें। जीवन का परमार्थ आत्मसाक्षात्कार है। चित्त को शुद्ध करें, धारणा और ध्यान करें।

(५६) आपके अन्दर ज्ञान के लिए तथा योगी अथवा ज्ञानी होने के लिए समस्त उपादान हैं। अभ्यास करें। आत्म-विकास करें, अपना अधिकार बतायें और आत्मसाक्षात्कार करें।

(५७) यदि कोई व्यक्ति जीवन में उन्नति करना चाहता है, तो उसे जूआ, मद्यपान, अत्यधिक निद्रा, आलस्य, क्रोध, अकर्मण्यता और दीर्घसूत्रता छोड़ देने चाहिए।

(५८) जब आपका आध्यात्मिक अभ्यास बहुत आगे बढ़ जाये, तब आपको २४ घण्टे के लिए लगातार कठोरता से मौन-व्रत का पालन करना चाहिए। यह कुछ महीनों तक चालू रहना चाहिए।

(५९) खान-पान, निद्रा और अन्य सभी बातों में संयम करें। मध्यम मार्ग अपनाना सदैव अच्छा एवं सुरक्षित रहता है। स्वर्णिम मध्यम मार्ग का पालन करें, तब आप शीघ्र ही योगी बन सकेंगे।

(६०) सदाचार, सद्विचार और सत्सङ्ग योगाभ्यास-काल में आवश्यक हैं।

(६१) सभी प्रकार के अम्ल, तीव्र और तीक्ष्ण भोजन छोड़ने, दूध और रस पीने में आनन्द लेने, ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करने, भोजन में मिताहार बरतने और योग में सदा प्रवृत्त रहने से योगी वर्ष-भर से कुछ ही अधिक समय में सिद्ध हो जाता है।

(६२) आसन और प्राणायाम के अभ्यास-काल में सात्त्विक भोजन करना आवश्यक है। दूध, घी, मीठा दही, फल, बादाम, मलाई आदि का सेवन करें। लहसुन, प्याज, मांस, मछली, धूमपान, मादक पेय और खट्टी तथा चरपरी चीजें छोड़ दें। अत्यधिक नहीं खाना चाहिए। मिताहारी बनें। भोजन नियमित और समयानुसार करने का अभ्यास डालें। योगी के लिए हर समय हर प्रकार की चीजें खाना अत्यधिक हानिकर है।

(६३) आपको अपने भोजन के लिए कुछ चुनी हुई वस्तुओं; जैसे दाल, घी, गेहूँ का आटा, आलू या दूध तथा फलों; का ही सेवन करना चाहिए।

(६४) भोजन में नियम रखना चाहिए। जिह्वा पर नियन्त्रण का अर्थ है मन पर नियन्त्रण रखना। आपको अपनी जिह्वा को अनियन्त्रित नहीं होने देना चाहिए।

(६५) ब्रह्मचर्य-पालन अत्यावश्यक है। आपका भोजन सात्त्विक होना चाहिए। आपको मिर्च, इमली, गर्म कढ़ी, चटनी आदि के सेवन से बचना चाहिए।

(६६) ब्रह्मचर्य अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। कुविचार व्यभिचार का आरम्भ है। मन में काम का विचार तक नहीं आना चाहिए। यम, नियम, विवेक और वैराग्य के बिना आप योग-मार्ग में कुछ भी नहीं कर सकते। आप आस्था, विश्वास, रुचि और अवधान को बनाये रखें। निःसन्देह आपको सफलता मिलेगी।

(६७) कामिनी-कञ्चन से छुटकारा पाये बिना तथा मानसिक ब्रह्मचर्य, सत्य और अहिंसा में प्रतिष्ठित हुए बिना आप कभी भी भगवत्प्राप्ति नहीं कर सकते।

(६८) एक धार्मिक पति और सांसारिक वृत्ति वाली पत्नी सदा परस्पर विपरीत दिशाओं में चलते हैं। वे सुखी परिवार का आनन्द नहीं ले सकते। इसमें यदि पति ऊपर चढ़ता है, तो पत्नी उसे नीचे गिरा देती है। उनमें एक प्रकार से सदा रस्साकशी-सी चलती रहती है। इससे योग के मार्ग में प्रगति के लिए कोई सम्भावना नहीं रहती।

(६९) जो पुत्र, पत्नी, भूमि और धन में आसक्त है, वह कण-भर भी लाभ

नहीं उठा सकता। व्यर्थ ही में अपना अमूल्य जीवन और शक्ति नष्ट कर रहा है। जो अनन्त साधना में रत हैं, वे धर्मपरायण मानव हैं।

(७०) मनुष्य सोचता है कि पत्नी के बिना वह अपूर्ण है। विवाह के बाद वह फिर सोचने लगता है कि जब तक एक पुत्र तथा एक पुत्री न हो, वह अपूर्ण ही है। चाहे भौतिक रूप से मनुष्य को कितनी ही उपलब्धियां क्यों न हो, जायें, उसे सदा कुछ-न-कुछ अभाव तथा असन्तोष का अनुभव होता रहेगा। यह सार्वजनीन अनुभव है।

(७१) अतएव हम ऐसी वस्तु प्राप्त करने का प्रयत्न क्यों न करें, जो अधिक सन्तोष प्रदान करने वाली और सतत रहने वाली हो? या फिर शारीरिक प्रकृति की माँगों को पूरा करते हुए दासता और बन्धन के जीवन यापन से सन्तुष्ट होते रहें! प्रत्येक विवेकशील मनुष्य के हृदय में अन्ततोगत्वा यह प्रश्न अवश्य उठेगा। प्रत्येक को इस प्रश्न का उत्तर देना चाहिए। समस्त धर्मों का यह प्रारम्भिक बिन्दु है।

(७२) यदि आपमें वैराग्य की भावना प्रबल हो जाये, यदि आप अपनी इन्द्रियों, इन्द्रिय-सुखों और संसार के विषय-भोगों को विष्ठा तथा विष समझ कर दबा दें (क्योंकि उनमें कष्ट, पाप, भय, इच्छा, दुःख, रोग, बुढ़ापा और मृत्यु मिश्रित हैं), तो आपको इस दुनिया में कोई वस्तु आकर्षित नहीं कर सकती। तब आपको शाश्वत शान्ति और अनन्त सुख प्राप्त होंगे। आपको स्त्री और संसार के अन्य पदार्थों में कोई आकर्षण नहीं रहेगा। काम-वासना आपको छू नहीं सकेगी।

(७३) काम-वासना इस पृथ्वी पर सबसे बड़ा शत्रु है। यह मनुष्य को निगल जाती है। सम्भोग के पश्चात् भारी अवसाद अनुभव होता है। अपनी पत्नी को प्रसन्न करने और उसकी आवश्यकताओं एवं विलास-वस्तुओं की पूर्ति हेतु धनोपार्जन के लिए आपको बहुत परिश्रम करना पड़ता है। धनोपार्जन करने में आप कई प्रकार के पाप करते हैं। आपको पत्नी के दुःख, सन्ताप और चिन्ताओं में भागीदार बनना पड़ता है। वीर्य का अधिक पतन होने से आपको अनेक प्रकार के रोग हो जायेंगे। आपको अवसाद, दुर्बलता और प्राण-शक्ति का ह्रास अनुभव होने लगेगा। आपकी अकाल-मृत्यु होगी। आप दीर्घायु को देख ही नहीं पायेंगे। इसलिए आप अखण्ड ब्रह्मचारी बनें।

(७४) यदि ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए एक प्रकार की साधना सहायक न हो, तो आप विभिन्न साधनाओं की सम्मिलित पद्धति जैसे प्रार्थना,

ध्यान, प्राणायाम, सत्सङ्ग, सात्त्विक भोजन, एकान्तवास, शुद्ध विचार, आसन, बन्ध, मुद्रा इत्यादि का आश्रय लें। तब कहीं आप ब्रह्मचर्य में स्थित हो सकेंगे।

(७५) सड़क पर चलते समय बन्दर की भाँति इधर-उधर मत देखें। अपने पैर के अँगूठे के अग्रभाग को देखते हुए शान्तिपूर्वक चलें अथवा भूमि को देखते हुए चलें, इससे ब्रह्मचर्यपालन में अत्यन्त सहयोग मिलेगा।

(७६) चित्त-वृत्तियों तथा मनोविकारों का पूर्ण रूप से दमन या नियन्त्रण ही योग है।

(७७) 'योग' शब्द अपने गौण अर्थ में योग के उन अङ्गों और विविध क्रियाओं को भी सूचित करता है जो योग को सङ्घटित करती हैं, क्योंकि योग की पूर्णता के लिए ये साधन हैं और परोक्ष रूप से मुक्ति की ओर अग्रसर करते हैं। जप, प्रार्थना, प्राणायाम, सत्सङ्ग और स्वाध्याय—ये सब योग हैं। ये गौण हैं।

(७८) आसन और प्राणायाम सब प्रकार के रोगों को दूर करके स्वास्थ्य में सुधार करते हैं, पाचन-शक्ति को बढ़ाते हैं, नाड़ियों को पुष्टि प्रदान करते है, सुषुम्ना नाड़ी को सीधी करते हैं और रजोगुण को दूर करके कुण्डलिनी को जाग्रत करते हैं। आसन-प्राणायाम के अभ्यास से स्वास्थ्य सुन्दर बनता और चित्त स्थिर होता है। जिस प्रकार अच्छे स्वास्थ्य के बिना कोई साधना सम्भव नहीं है, उसी प्रकार स्थिर चित्त के बिना कोई ध्यान सम्भव नहीं है। ध्यानयोगी, कर्मयोगी, भक्त और वेदान्ती—सभी के लिए हठयोग अत्यधिक उपयोगी है।

(७९) योगी प्रकृति की सारी शक्तियों पर आधिपत्य प्राप्त कर लेता है और उनका इच्छानुसार उपयोग कर सकता है। उसे पञ्चतत्त्वों पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है।

आसनों का उपयोग

प्रयोजन	आसन
१. ध्यान और स्वाध्याय	पद्मासन, सिद्धासन अथवा सुखासन
२. कामवासना का उदात्तीकरण, उपदंश, शुक्रपात, दन्तपूय, सूजाक, वन्ध्यता, कुण्डलिनी-जागरण, स्मरणशक्ति का ह्रास, मधुमेह, यक्ष्मा, दमा, वृक्क-शूल, सन्धिवात, कान, नाक, नेत्र के रोग आदि	सिद्धासन, शीर्षासन, सर्वाङ्गासन, मत्स्यासन अथवा अर्ध मत्स्येन्द्रासन
३. अनार्तव, कष्टार्तव, श्वेतप्रदर, गर्भाशय तथा अण्डाशय-सम्बन्धी रोग	सर्वाङ्गासन, शलभासन, पश्चिमोत्तानासन और भुजङ्गासन (गर्भावस्था में ये आसन वर्जित हैं)
४. जीर्णश्वासनलीशोथ	मत्स्यासन तथा शलभासन
५. पाचन	सर्वाङ्गासन, वज्रासन, पश्चिमोत्तानासन और बद्धपद्मासन
६. प्लीहा तथा यकृत-अपवृद्धि	सर्वाङ्गासन, हलासन, मयूरासन और बद्धपद्मासन
७. जीर्णमलावरोध	हलासन, मयूरासन, धनुरासन, मत्स्यासन और पादहस्तासन

प्रयोजन	आसन
८. जलवृषण, श्लीपद, टाँगों और हाथों का छोटा होना	गरुड़ासन, त्रिकोणासन और उत्कटासन
९. अर्श	सिद्धासन, पश्चिमोत्तानासन, शीर्षासन, गोमुखासन और महामुद्रा
१०. आमातिसार तथा रक्तातिसार	बद्धपद्मासन और कुक्कुटासन
११. पेशीशूल और सन्धिवात	वृश्चिकासन, शीर्षासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्वाङ्गासन आदि
१२. कुष्ठरोग	शीर्षासन और महामुद्रा
१३. विश्राम	शवासन
१४. सर्वरोगनिवारक और दीर्घायु-प्रदायक	पद्मासन, शीर्षासन, सर्वाङ्गासन तथा पश्चिमोत्तानासन

नोटः— यदि आप किन्हीं पुराने रोगों से ग्रसित हों तो आपको आसनों के साथ मुद्रा, प्राणायाम और जप भी संयुक्त करने होंगे। यदि इनमें से कोई विशेष विषय आपकी प्रकृति को उपयुक्त न हो तो आप अपने आध्यात्मिक गुरु से परामर्श करें। आपको सच्चाईपूर्वक धैर्य से दीर्घकाल तक इनका अभ्यास करना होगा।

पञ्चम अध्याय

महत्त्वपूर्ण मुद्राएँ और बन्ध

मुद्रा और बन्ध के अनेक प्रकार हैं—जैसे महामुद्रा, महावेध, नभोमुद्रा, खेचरीमुद्रा, विपरीतकरणीमुद्रा, योनिमुद्रा, शाम्भवीमुद्रा, अश्विनीमुद्रा, पाशिनीमुद्रा, मातङ्गीमुद्रा, काकीमुद्रा, भुजङ्गिनीमुद्रा; और योगमुद्रा तथा महाबन्ध, जालन्धरबन्ध, उड्डीयानबन्ध और मूलबन्ध।

इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण मुद्राओं एवं बन्धों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है। इनमें से आपको जो उपयोगी लगे, उसे चुन कर नियमित रूप से अभ्यास कीजिए। इनसे खाँसी, श्वास का रोग, प्लीहा तथा यकृत की अपवृद्धि, कामवासना की उत्तेजना, रतिजरोग, यक्ष्मा, जीर्णमलावरोध, कुष्ठरोग एवं सभी असाध्य रोग भी दूर हो जाते हैं। इन मुद्राओं और बन्धों से मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है; क्योंकि—

"नास्ति मुद्रासमं किञ्चित् संसिद्धये क्षितिमण्डले।"

अर्थात् पृथ्वी पर मुद्राओं के समान सिद्धि दिलाने वाला और कुछ भी नहीं है।

१. महामुद्रा

बाँयीं एड़ी से गुदा को सावधानीपूर्वक दबायें। दायीं टाँग को आगे फैला लें। दोनों हाथों से पैर के अँगूठे को पकड़ लें। श्वास ले कर उसे रोकें (कुम्भक)। ठोड़ी को सीने पर दृढ़ता से दबायें (जालन्धरबन्ध)। दृष्टि को त्रिकुटी पर जमायें (अर्थात् भ्रूमध्यदृष्टि)। जितनी देर हो सके, इस मुद्रा को टिकाये रखें। पहले बायीं टाँग से और फिर दायीं टाँग से अभ्यास करें। इससे यक्ष्मा, अर्श अथवा बवासीर, प्लीहा की अपवृद्धि, अपच, गुल्म, कुष्ठ, मलावरोध, ज्वर आदि रोग दूर होते हैं तथा आयु बढ़ती है। यह मुद्रा अभ्यास करने वाले साधक को सिद्धियाँ प्रदान करती है। इस मुद्रा को करने पर प्रायः जानुशीर्षासन-जैसी आकृति बन जाती है।

२. योगमुद्रा

पद्मासन में बैठ कर हथेलियों को एड़ियों पर रखें। धीर-धीरे श्वास बाहर

निकालें तथा आगे को झुकें और मस्तक से भूमि को स्पर्श करें। यदि आप इस मुद्रा को देर तक टिकाये रखते हैं, तो सामान्य रूप से श्वास ले और निकाल सकते हैं अथवा आप पूर्वावस्था में आ कर पुनः श्वास ले सकते हैं। हाथों को एड़ियों पर रखने के स्थान में उन्हें पीठ की ओर ले जा सकते हैं। अपनी बायीं कलाई को दायें हाथ से पकड़ें। इस मुद्रा से समस्त प्रकार के उदर-रोग दूर होते हैं।

३. खेचरीमुद्रा

'खे' का अर्थ है 'आकाश में' और 'चर' का अर्थ है 'चलना'। योगी आकाश में चलता है; इसलिए इसे खेचरीमुद्रा कहते हैं।

इस मुद्रा को केवल वही व्यक्ति कर सकता है जिसने अपना प्रारम्भिक अभ्यास ऐसे गुरु के साक्षात् मार्गदर्शन में किया हो जो स्वयं खेचरीमुद्रा करते हों। इस मुद्रा का प्रारम्भिक अंश जिह्वा को इतनी लम्बी बनाना है कि उसका अग्रभाग भृकुटि के मध्य वाले स्थान को स्पर्श कर सके। प्रति सप्ताह गुरु जिह्वा के नीचे के तन्तु को थोड़ा-थोड़ा करके स्वच्छ तथा तीक्ष्ण धार वाले यन्त्र (छुरी) से काटता रहेगा। नमक और हल्दी-चूर्ण लगाने से कटे हुए तन्तु फिर से नहीं जुड़ते। जिह्वा को ताजा मक्खन लगा कर बाहर खींचें। उँगलियों से जिह्वा को पकड़ कर इधर-उधर घुमायें। जिह्वा के दोहन का अर्थ है उसे पकड़ कर इस प्रकार खींचना जिस प्रकार गाय का दूध निकालते समय उसके थनों को पकड़ कर दूध निकाला जाता है।

जिह्वा के नीचे वाले तन्तु को नियमित रूप से सप्ताह में एक बार काटना चाहिए। यह कार्य ६ माह से ले कर २ वर्ष तक किया जाना चाहिए। इन सब विधियों से आप जिह्वा को इतनी लम्बी कर सकते हैं कि वह मस्तक को स्पर्श कर लेगी। खेचरीमुद्रा का यह प्रारम्भिक अंश है।

इसके पश्चात् सिद्धासन में बैठ कर जिह्वा को ऊपर और पीछे की ओर इस प्रकार मोड़ें कि वह तालु को स्पर्श कर ले और जिह्वा से नाक के पश्च-द्वार को बन्द कर दें। आप अपनी दृष्टि को भ्रूमध्य में स्थिर करें। श्वासोच्छ्वास रुक जायेगा। जिह्वा अमृत-कूप के मुँह पर है। यह खेचरीमुद्रा है।

इस मुद्रा के अभ्यास से योगी मूर्च्छा, क्षुधा, पिपासा और आलस्य से मुक्त हो जाता है। वह रोग, क्षीणता, वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्त हो जाता है। इस मुद्रा से व्यक्ति ऊर्ध्वरेता योगी बनता है। चूँकि योगी का शरीर अमृत से पूर्ण हो

जाता है; अतः वह घातक विष से भी नहीं मरता। यह मुद्रा योगियों को कायसिद्धि प्रदान करती है। खेचरी सर्वश्रेष्ठ मुद्रा है।

४. वज्रोलीमुद्रा

यह हठयोग में एक महत्त्वपूर्ण यौगिक क्रिया है। इस क्रिया में पूर्ण सफल होने के लिए आपको कठिन परिश्रम करना पड़ेगा। इस क्रिया में बहुत कम साधक दक्ष होते हैं। योग के विद्यार्थी विशेष प्रकार की बनवायी हुई १२ इञ्च लम्बी चाँदी की एक नली को मूत्र-मार्ग में प्रवेश करा कर इसके द्वारा पहले पानी और फिर दूध, तेल, मधु आदि खींचते हैं। अन्त में वे पारा खींचते हैं। कुछ समय बाद वे बिना नली के सहारे मूत्र-मार्ग द्वारा इन तरल पदार्थों को खींच लेते हैं। ब्रह्मचर्य में सुस्थित होने के लिए यह क्रिया अत्युपयोगी है। प्रथम दिन मूत्र-मार्ग में केवल १ इञ्च नली ही प्रवेश करायें, दूसरे दिन २ इञ्च, तीसरे दिन ३ इञ्च; इसी प्रकार इसे बढ़ाते जायें। जब तक १२ इञ्च नली भीतर प्रवेश न कर ले, तब तक क्रमशः अभ्यास करते रहें।

राजा भर्तृहरि इस क्रिया को बहुत दक्षता से कर लेते थे। इस मुद्रा को करने वाले योगी का एक बूँद वीर्य भी बाहर नहीं निकल सकता और यदि निकल भी जाये तो वह इस मुद्रा द्वारा उसे वापस ऊपर खींच सकता है। जो योगी वीर्य को ऊपर खींच कर सुरक्षित रख सकता है, वह मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर लेता है। उसके शरीर से सुगन्ध निकलती है। भगवान् कृष्ण इस मुद्रा में बड़े कुशल थे; इसलिए अनेक गोपियों के मध्य रहते हुए भी वे नित्य-ब्रह्मचारी कहलाते थे।

५. विपरीतकरणीमुद्रा

भूमि पर लेट कर टाँगों को सीधे ऊपर उठायें। नितम्बों को हाथों से सहारा दें। कोहनियाँ भूमि पर टेक लें। स्थिर बने रहें। नाभि के मूल में सूर्य का और तालु-मूल में चन्द्रमा का निवास है। जिस प्रक्रिया से सूर्य को ऊपर की ओर तथा चन्द्रमा को नीचे की ओर ले जाया जाता है, वह विपरीतकरणीमुद्रा कहलाती है। इस मुद्रा में सूर्य और चन्द्रमा की स्थिति को पलट दिया जाता है। प्रथम दिन इसे एक मिनट तक करें। धीरे-धीरे इसे तीन घण्टे तक बढ़ा दें। छः महीने में आपके चेहरे की झुर्रियाँ और श्वेत बाल लुप्त हो जायेंगे। जो योगी इसे प्रतिदिन तीन घण्टे तक करते हैं, वे मृत्यु पर विजय प्राप्त कर लेते हैं। चूँकि इससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है, अतः जो लोग इस मुद्रा का अभ्यास देर तक करते हैं, उन्हें इस

क्रिया की समाप्ति पर अल्पाहार—जैसे दूध आदि—ले लेना चाहिए। शीर्षासन की मुद्रा भी विपरीतकरणीमुद्रा कहलाती है।

६. शक्तिचालनमुद्रा

एकान्त कमरे में सिद्धासन में बैठें। बलपूर्वक श्वास को अन्दर खींच कर उसे अपान के साथ जोड़ें। वायु के सुषुम्ना में प्रवेश करने तक मूलबन्ध लगायें। वायु को रोकने से कुण्डलिनी का दम घुटने के कारण वह जाग्रत हो जाती है और सुषुम्ना में हो कर ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचती है। इस मुद्रा के अभ्यास से व्यक्ति सिद्ध बन जाता है।

सिद्धासन में बैठें। गुल्फ के पास से पैर को पकड़ कर धीरे-धीरे पैर से कन्द को पीड़ित करें। यह ताड़न-क्रिया है। इस पद्धति से भी कुण्डलिनी जाग्रत की जा सकती है।

७. महावेध

अन्यत्र वर्णन किये अनुसार महाबन्धमुद्रा में बैठें। धीरे-धीरे श्वास खींच कर उसे रोकें और ठोड़ी को सीने पर दबायें (जालन्धर-बन्ध)। हथेलियों को भूमि पर रखें। शरीर को हथेलियों पर टिका दें। नितम्बों को धीरे-धीरे उठा कर हलके से भूमि पर पटक दें। नितम्बों को ऊपर उठाते समय आसन अक्षत तथा दृढ़ होना चाहिए। यह क्रिया जरा तथा मृत्यु का उच्छेदन करती है। योगी मन पर नियन्त्रण तथा मृत्यु पर विजय प्राप्त करता है।

८. महाबन्ध

बायीं एड़ी से गुदा को दबायें तथा दायाँ पैर बायीं जङ्घा पर रखें। गुदा एवं योनि या मूलाधार की पेशियों को शिकोड़ें। अपान-वायु को ऊपर की ओर खींचें। धीरे-धीरे श्वास को खींच कर जालन्धर-बन्ध द्वारा उसे यथाशक्ति रोकें। फिर धीरे-धीरे श्वास को बाहर निकाल दें। मन को सुषुम्ना पर स्थिर करें। प्रथम बायीं ओर से और फिर दायीं ओर से अभ्यास करें। सामान्यतया योगी लोग महामुद्रा, महाबन्ध एवं महावेध साथ-साथ करते हैं। इन तीनों का एक अच्छा सङ्घटन बनता है। ऐसा करने से ही सर्वाधिक लाभ प्राप्त होता है। योगी आप्तकाम हो जाता है तथा सिद्धियाँ प्राप्त करता है।

९. मूलबन्ध

बायीं एड़ी से योनि को दबायें। गुदा को सिकोड़ें। अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे अपान-वायु को बलपूर्वक खींचें। दायीं एड़ी को जननेन्द्रिय पर रखें। इसे मूलबन्ध कहते हैं जो जरा और मृत्यु का विनाशक है।

प्राणायाम के अभ्यास में सिद्धि अथवा पूर्णता बन्धों की सहायता से प्राप्त होती है। इस मूलबन्ध के अभ्यास से ब्रह्मचर्य में सहायता मिलती है, धातु पुष्ट होती है, मलावरोध दूर होता है और जठराग्नि प्रदीप्त होती है। मूलबन्ध का अभ्यास करने वाला योगी सदा युवा बना रहता है। उसके बाल सफेद नहीं होते।

अपान-वायु जो मल को बाहर निकालने का कार्य करती है, स्वभावतः नीचे की ओर जाती है। मूलबन्ध के अभ्यास से गुदा को सिकोड़ने और अपान-वायु को बलपूर्वक ऊपर की ओर खींचने से वह ऊपर की ओर सञ्चारित होने लगती है। प्राण-वायु का अपान-वायु से संयोग होता है और वह संयुक्त प्राण-अपान-वायु सुषुम्ना-नाड़ी अथवा ब्रह्म-नाड़ी में प्रवेश कर जाती है। तब योगी योग में पूर्णता प्राप्त करता है। यह योग का एक रहस्य है। तब योगी इस संसार के लिए मर जाता है। वह अमृतसुधा का पान करता है। वह सहस्रार में शिवपद का आनन्द-लाभ करता है। उसे समस्त दिव्य विभूतियाँ और ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं।

जब अपान-वायु प्राण-वायु से मिलती है, तब योगी को अनाहतनाद अथवा विभिन्न प्रकार के अन्तर्नाद सुस्पष्ट रूप से सुनायी पड़ते हैं; क्योंकि अब बाहरी संसार के शब्द उसे नहीं सुनायी देते हैं। उसे गम्भीर एकाग्रता प्राप्त हो जाती है। प्राण, अपान, नाद और बिन्दु मिल जाते हैं। योगी योग में पूर्णता प्राप्त कर लेता है।

१०. जालन्धरबन्ध

गले को सिकोड़ें। ठोड़ी को दृढ़ता से सीने पर दबायें। यह बन्ध पूरक के अन्त में और कुम्भक के आरम्भ में किया जाता है। इस बन्ध के अभ्यास से प्राण-वायु सही मार्ग में होती है। वह अपान-वायु से मिल जाती है। इड़ा और पिङ्गला नाड़ियाँ बन्द हो जाती हैं। नाभि-चक्र में स्थित जठराग्नि उस अमृत को भस्म करती है जो तालु-रन्ध्र द्वारा सहस्रार से टपकता रहता है। इस अमृत को

इस प्रकार नष्ट होने से बचाने के लिए योग के विद्यार्थी को इस बन्ध का अभ्यास करना चाहिए। योगी अमृत-पान करके अमरता प्राप्त करता है।

११. उड्डीयानबन्ध

बलपूर्वक जोर से श्वास को बाहर निकाल कर फेफड़ों को खाली कर लें। फिर आँतों और नाभि को सिकोड़ लें और उन्हें बलपूर्वक पीठ की ओर अन्दर खींचें जिससे उदर ऊपर उठ कर शरीर के पीछे की ओर वक्षीय गुहा (Thoracic cavity) में चला जाये। इस बन्ध का निरन्तर अभ्यास करने वाला साधक मृत्यु पर विजय प्राप्त करता तथा सदा युवा बना रहता है। इससे ब्रह्मचर्य धारण करने में अधिक सहायता प्राप्त होती है। सभी बन्ध कुण्डलिनी जाग्रत करते हैं। उड्डीयानबन्ध का अभ्यास कुम्भक के अन्त में और रेचक के आरम्भ में किया जाता है। जब आप इस बन्ध का अभ्यास करते हैं तो उरःप्राचीर (जो कि वक्षीय गुहा एवं उदर के मध्य मांसपेशी का एक भाग होता है) ऊपर उठ जाता है और पेट की दीवार पीछे चली जाती है। उड्डीयान करते समय अपने धड़ को आगे की ओर झुकायें। उड्डीयान बैठे हुए और खड़े हुए दोनों अवस्थाओं में किया जा सकता है। खड़े हो कर करते समय हाथों को घुटनों या घुटनों से थोड़ा ऊपर रखें। टाँगों को थोड़ा दूर-दूर रखें।

उड्डीयान मानव के लिए वरदान है। अभ्यास करने वाले को यह सुन्दर स्वास्थ्य, शक्ति, ओज और जीवन-शक्ति प्रदान करता है। नौलि-क्रिया को, जो पेट के मल को मथ डालती है, इसके साथ मिला देने से यह एक शक्तिशाली जठरान्त्रीय बलकारक औषधि (Gastro-intestinal Tonic) का काम करता है। मलावरोध, आँतों के क्रमाकुञ्चन की दुर्बलता तथा आहार-तन्त्र के जठरान्त्र-विकार से सङ्घर्ष करने के लिए योगी के पास ये दो महत्त्वपूर्ण अस्त्र हैं। इन दो यौगिक व्यायामों से ही आप उदर के आन्तराङ्गों की मालिश तथा पुष्ट करने का काम ले सकते हैं।

जो नौलि का अभ्यास करना चाहें, उन्हें आरम्भ में उड्डीयान करना चाहिए। उड्डीयान पेट की वसा को कम करता है। पेट के व्यायामों में उड्डीयान और नौलि की बराबरी का कोई अन्य व्यायाम नहीं है। प्राच्य और पाश्चात्य दोनों देशों में सम्पूर्ण भौतिक व्यायाम-पद्धतियों में ये दोनों व्यायाम अनुपम, अद्वितीय और अभूतपूर्व हैं।

१२. योनिमुद्रा

सिद्धासन में बैठ जायें। दोनों अँगूठों से कान को, तर्जनियों से आँखों को, मध्यमा से नासा-रन्ध्रों को, अनामिका से ऊपर के ओष्ठ को तथा कनिष्ठिका से अधरोष्ठ को बन्ध करें। जप करने के लिए यह सुन्दर मुद्रा है। बड़ी गहराई में चले जायें और षट्-चक्रों और कुण्डलिनी पर ध्यान लगायें। अन्य मुद्राओं की भाँति यह सबके लिए बिलकुल सरल नहीं है। इसमें सफलता प्राप्त करने के लिए आपको प्रचुर श्रम करना पड़ेगा। यदि आप इस मुद्रा में निश्चयपूर्वक सफलता प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा। इसमें सफलता प्राप्त करना **'देवानामपि दुर्लभा'**—देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। अतः इस मुद्रा की महत्ता को अनुभव करें। इसका अभ्यास बड़ी सावधानीपूर्वक करें।

षष्ठ अध्याय

प्राणायाम-विज्ञान*

कुम्भक आठ प्रकार के हैं :

(१) सूर्यभेद	(५) भस्त्रिका
(२) उज्जायी	(६) भ्रामरी
(३) सीत्कारी	(७) मूर्च्छा
(४) शीतली	(८) प्लावनी

कुछ पुस्तकों में प्लावनी-प्राणायाम को आठवाँ कुम्भक कहा गया है। कुछ में केवल-कुम्भक को आठवाँ प्रकार कहा गया है। यद्यपि कपालभाति षट्-कर्म से सम्बन्धित है, फिर भी मैंने इसका वर्णन यहाँ किया है; क्योंकि यह प्राणायाम-व्यायाम का ही एक भेद है।

प्राण वह वायु है, जो शरीर में सञ्चालित होता है और जब इसे शरीर के भीतर रोक लिया जाता है, तो यह कुम्भक कहलाता है। यह दो प्रकार का होना है—'सहित' और 'केवल'। कोई भी व्यक्ति हठयोग के बिना राजयोग में पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता। कुम्भक के अन्त में आपको अपने मन को सभी विषयों से हटा लेना चाहिए। धीरे-धीरे और निरन्तर अभ्यास से आप राजयोग में प्रतिष्ठित हो जायेंगे।

अभ्यास संख्या १

पद्मासन में बैठ जायें। अपने नेत्रों को बन्द कर लें और त्रिकुटी पर ध्यान जमायें। दायें नासिका-छिद्र को अपने दायें हाथ के अँगूठे से बन्द कर लें।

फिर धीरे-धीरे बायें नासिका-छिद्र से आरामपूर्वक जितनी देर श्वास अन्दर खींच सकते हैं, खींचें। श्वास अन्दर खींचते समय किसी प्रकार का शब्द न करें; फिर धीर-धीरे श्वास निकाल दें। अपने इष्टमन्त्र का मानसिक जप करते रहें। यह क्रिया बारह बार करें। इससे एक चक्र बनता है।

---

* विस्तृत एवं पूर्ण निर्देशों के लिए मेरी पुस्तक 'प्राणायाम-साधना' का अवलोकन करें।

फिर बायें नासिका-छिद्र को अपनी दायीं अनामिका और कनिष्ठिका से बन्द करके दायें नासिका-छिद्र से श्वास अन्दर लें। पहले की भाँति दायें नासिका-छिद्र से धीरे-धीरे श्वास खींचें और बायें नासिका-छिद्र को बन्द करके श्वास छोड़ें। इस प्रकार बारह बार करें।

अभ्यास के दूसरे सप्ताह में दो चक्र और तीसरे सप्ताह में तीन चक्र करें। एक चक्र पूरा होने पर पाँच मिनट तक विश्राम करें। एक चक्र के पूर्ण होने पर यदि आप सामान्य तौर पर कुछ श्वास लेते हैं, तो इससे भी आपको पर्याप्त विश्राम मिलेगा और दूसरा चक्र करने के लिए स्फूर्ति आयेगी। इसमें कुम्भक नहीं करना होता है।

अभ्यास संख्या २

आसन पर बैठें। दायें नासारन्ध्र को अपने दायें अँगूठे से बन्द करें। फिर धीरे-धीरे अपने बायें नासारन्ध्र से श्वास अन्दर खींचें। बायें नासारन्ध्र को अपनी दाहिनी अनामिका और कनिष्ठिका से बन्द करें और फिर दायाँ अँगूठा हटा कर दायाँ नासारन्ध्र खोल दें। इसके बाद दायें नासारन्ध्र से धीरे-धीरे श्वास निकाल दें।

अब दायें नासारन्ध्र से जितनी देर आरामपूर्वक आप धीरे-धीरे श्वास अन्दर खींच सकते हैं, खींचें। फिर बायें नासारन्ध्र से दायीं अनामिका एवं कनिष्ठिका को हटा कर श्वास छोड़ दें। इस प्राणायाम में कुम्भक नहीं है। इसे बारह बार करें। इससे एक चक्र बनता है।

१. कपालभाति

इस प्राणायाम से साधक भस्त्रिका-प्राणायाम करने के लिए तैयार होता है। यह हठयोग में वर्णित षट्-क्रियाओं में से एक क्रिया है। जो लोग कपालभाति में दक्ष हैं, वे भस्त्रिका-प्राणायाम बड़ी सरलता से कर सकते हैं।

पद्मासन लगा कर बैठ जायें। हाथों को घुटनों पर रखें। फिर लोहार की धौंकनी की भाँति तीव्रता से पूरक और रेचक करें। यह कपालभाति कहलाता है। यह अभ्यास बहुत तेजी से करना चाहिए। इससे बहुत पसीना आयेगा। इस अभ्यास में कुम्भक नहीं है। इसमें रेचक की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। इसमें तीव्र अनुक्रम से एक प्रश्वास के पश्चात् दूसरा प्रश्वास निकलता है। यह शक्तिशाली

अभ्यास है। इसके अभ्यास से समस्त ऊतक, कोशाणु, स्नायु, कण्डरा तथा अणु प्रभावपूर्ण ढङ्ग से दोलायमान होते हैं।

प्रारम्भ में आप प्रति सेकण्ड एक प्रश्वास की गति रख सकते हैं। धीरे-धीरे गति बढ़ा कर आप प्रति सेकण्ड दो प्रश्वास निकाल सकते हैं। प्रारम्भ में प्रातःकाल कपालभाति का केवल एक चक्र करें, जिसमें केवल दश प्रश्वास होंगे। दूसरे सप्ताह में प्रातः एक चक्र और सायं एक चक्र करें। तीसरे सप्ताह में दो चक्र प्रातः और दो चक्र सायं करें। चौथे सप्ताह में तीन चक्र प्रातः और तीन चक्र सायं करें। एक चक्र पूरा होने पर कुछ सामान्य श्वास ले कर थोड़ा आराम कर लें। इससे आप बड़ी आसानी से विश्राम प्राप्त करेंगे। बाद में जब आपका अभ्यास पर्याप्त रूप से बढ़ जाये, तो प्रत्येक चक्र में १० प्रश्वास बढ़ाते-बढ़ाते इतना कर लें कि प्रत्येक चक्र में १२० प्रश्वास हो जाये।

इसके अभ्यास से कपाल, श्वास-प्रणाली तथा नासा-मार्ग स्वच्छ हो जाते हैं। यह कफरोग को दूर करता है। यह श्वासनली की ऐंठन को दूर करता है जिसके फलस्वरूप दमा के रोगी को आराम मिलता है और रोग दूर हो जाता है। फेफड़ों के शीर्ष भाग को प्रचुर प्राणप्रद वायु (आक्सीजन) मिलती है। इससे क्षयरोगजनक कीटाणुओं को अनुकूल प्रजनन-स्थान नहीं मिल पाता। अतः इसके अभ्यास से क्षयरोग भी ठीक हो जाता है और फेफड़े पर्याप्त विकसित होते हैं। इससे विषैली वायु (कार्बन डाई आक्साइड) बहुत अधिक मात्रा में शरीर से निकल जाती है, रक्त शुद्ध हो जाता है, रक्त का मल शरीर से बाहर निकल जाता है और ऊतक एवं कोशाणु बड़ी मात्रा में प्राणप्रद वायु (आक्सीजन) अवशोषण करते हैं। हृदय ठीक-ठीक काम करने लगता है। इससे रक्तवह-तन्त्र; श्वसन-तन्त्र एवं पाचन-तन्त्र यथेष्ठ अंश तक पुष्ट हो जाते हैं।

२. सूर्यभेद

पद्मासन अथवा सिद्धासन में बैठ जायें। नेत्र बन्द कर लें। दायें हाथ की अनामिका और कनिष्ठिका से बायाँ नासारन्ध्र बन्द कर लें। बिना शब्द किये श्वास को जितनी देर आराम से खींच सकें, दायें नासारन्ध्र से धीरे-धीरे अन्दर की ओर खींचें। फिर ठोड़ी को सीने पर दबा कर (जालन्धरबन्ध) श्वास को रोक लें (कुम्भक)। जब तक नाखूनों के सिरे से और बालों की जड़ों से पसीना न टपकने लगे, तब तक श्वास को रोके रखें। आरम्भ में इस स्थिति तक नहीं पहुँचा जा

सकता। आपको कुम्भक की अवधि धीरे-धीरे बढ़ानी पड़ेगी। यह सूर्यभेद के अभ्यासक्षेत्र की पराकाष्ठा है। अब दायाँ नासारन्ध्र अँगूठे से बन्द कर बहुत धीरे-धीरे किसी प्रकार का शब्द किये बिना बायें नासारन्ध्र से श्वास को बाहर निकाल दें। बलपूर्वक श्वास को ऊपर ले जा कर कपाल को शुद्ध करने के उपरान्त उसे निकाल दें। इससे आँतों के कीड़े नष्ट होते हैं और रोग दूर हो जाते हैं। यह वायु से उत्पन्न चार प्रकार के दोषों को दूर करता है। वात-रोग ठीक हो जाता है। इससे नासार्ति (Rhinitis), शीर्षार्ति (Cephalagia) तथा विविध प्रकार की तन्त्रिकार्तियाँ (Neuralgia) दूर होती हैं। इससे ललाट के शिरानालों में पाये जाने वाले कृमि भी नष्ट हो जाते हैं। यह जरा एवं मृत्यु को नष्ट करता तथा कुण्डलिनी-शक्ति को जाग्रत करता है।

३. उज्जायी

पद्मासन या सिद्धासन में बैठें। मुँह बन्द रखें। दोनों नासारन्ध्रों द्वारा हलका-हलका समरूप से धीरे-धीरे श्वास लें, जब तक कि गले से हृदय तक का स्थान श्वास आवाज करते हुए भर न दे। जितनी देर श्वास को आराम से रोक सकें, रोकें और फिर दायें नासारन्ध्र को दायें अँगूठे से बन्द करके धीरे-धीरे बायें नासारन्ध्र से श्वास छोड़ें। श्वास लेते समय सीने को फैलायें। कण्ठद्वार (Glottis) के आंशिक रूप से बन्द होने के कारण श्वास लेते समय एक विचित्र-सी ध्वनि निकलती है। श्वास खींचते समय उत्पन्न ध्वनि बहुत हलकी और एक-समान होनी चाहिए और यह अविच्छिन्न भी होनी चाहिए। इस कुम्भक का अभ्यास चलते समय अथवा खड़े रहते समय भी किया जा सकता है। बायें नासारन्ध्र से श्वास छोड़ने के बजाय, आप दोनों नासारन्ध्रों से धीरे-धीरे श्वास निकाल सकते हैं।

इससे मस्तिष्क की गरमी दूर होती है, अभ्यास करने वाला अति-सुन्दर हो जाता है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है तथा दमा, क्षय-रोग और सब प्रकार की फुप्फुसीय (Pulmonary) बीमारियाँ दूर होती हैं। जरा और मृत्यु को नष्ट करने के लिए उज्जायी करें।

४. सीत्कारी

जिह्वा को इस प्रकार मोड़ें कि उसका अग्रभाग ऊपरी तालु को स्पर्श करे। फिर सी-सी-सी की ध्वनि करते हुए वायु को मुँह द्वारा अन्दर खींचें। तब घुटन अनुभव किये बिना, जितनी देर श्वास रोक सकें, रोकें और फिर धीरे-धीरे दोनों

नासारन्ध्रों द्वारा उसे निकाल दें। दाँतों की दोनों पंक्तियों को भींच लें और फिर पहले की भाँति मुँह के द्वारा श्वास लें। यह एक थोड़ा परिवर्तन है।

इस प्राणायाम के अभ्यास से साधक का सौन्दर्य बढ़ता है और शारीरिक स्फूर्ति बढ़ती है। इससे भूख, प्यास, सुस्ती और नींद का निवारण होता है। जब प्यास लगे तो इसका अभ्यास करें; आपकी प्यास तुरन्त शान्त हो जायेगी।

५. शीतली-प्राणायाम

जिह्वा को होठों से बाहर निकाल कर उसको नली की भाँति मोड़ लें। सी-सी की ध्वनि करते हुए मुँह से श्वास को अन्दर की ओर खींचें। जितनी देर आराम से श्वास को रोक सकें, रोकें। फिर धीरे-धीरे नासारन्ध्रों द्वारा श्वास को बाहर निकाल दें। नित्यप्रति प्रातः १५ से ३० मिनट तक इसका अभ्यास करें। आप यह प्राणायाम पद्मासन अथवा सिद्धासन में कर सकते हैं।

इस प्राणायाम से रक्त शुद्ध होता है, भूख और प्यास शान्त होती है और शरीर शीतल होता है। इससे गुल्म, प्लीहा, अनेक पुराने चर्म-रोग, ज्वर, यक्ष्मा, अजीर्ण, पित्त-दोष, कफ और अन्य रोग दूर होते हैं। रक्त-विकार ठीक हो जाता है। यदि आप कहीं जङ्गल में या अन्य किसी ऐसे स्थान पर हों, जहाँ जल न मिले और वहाँ प्यास लगे तो यह प्राणायाम कर लें, तुरन्त प्यास शान्त हो जायेगी। इस प्राणायाम का अभ्यास करने वाले पर सर्प या बिच्छू के विष का प्रभाव नहीं होता।

६. भस्त्रिका-प्राणायाम

संस्कृत में भस्त्रिका का अर्थ भाथी है। भस्त्रिका की एक प्रमुख विशेषता है—तीव्र गति से बलपूर्वक निरन्तर श्वास निकालना। जिस प्रकार लोहार अपनी भाथी को तेजी से धौंकता है, उसी प्रकार आपको भी इस अभ्यास में अपने श्वास को तीव्र गति से चलाना चाहिए। पद्मासन में बैठ जायें। धड़, गरदन तथा शिर को तना हुआ रखें। हथेलियों को घुटनों पर या गोद में रखें। मुँह बन्द रखें। अब लोहार की भाथी के समान ५ से १० बार तीव्र गति से श्वास-प्रश्वास लें। निरन्तर फेफड़ों को फुलायें और पिचकायें। जब आप इस प्राणायाम का अभ्यास करेंगे तो सिसकार का शब्द होगा। अभ्यास करने वाले साधक को प्रारम्भ में तीव्र क्रम और तेज गति से एक के बाद दूसरा श्वास निकालना चाहिए। जब एक चक्र के लिए आवश्यक संख्या—यथा १०—पूरी हो जाये, तो अन्तिम चक्र के बाद एक

गहरा श्वास अन्दर लीजिए और आराम से जितनी देर तक श्वास को रोका जा सके, रोकिए। इस गम्भीर प्रश्वास से भस्त्रिका का एक चक्र पूरा होता है। एक चक्र पूरा होने पर कुछ सामान्य श्वास लेते हुए थोड़ा विश्राम कर लें। इससे आपको विश्राम मिलेगा और आप दूसरा चक्र आरम्भ कर सकने में सक्षम बन सकेंगे। नित्य प्रातः तीन चक्र करें। तीन चक्र सायङ्काल को भी कर सकते हैं। व्यस्त व्यक्ति, जिन्हें भस्त्रिका के तीन चक्र नित्य-प्रति करना कठिन लगता हो, केवल एक चक्र कर सकते हैं।

यह भी साधक को स्वस्थ रखता है। भस्त्रिका एक शक्तिशाली व्यायाम का रूप है। कपालभाति और उज्जायी के संयुक्त रूप से भस्त्रिका होता है।

कुछ लोग थकान होने तक अभ्यास चालू रखते हैं। इसके अभ्यास से पसीना खूब आता है। यदि थोड़ा-सा भी चक्कर-सा आने लगे, तो अभ्यास रोक कर सामान्य श्वास लें और फिर चक्कर ठीक होने पर अभ्यास चालू कर दें। शीतकाल में प्रातः और सायं दोनों समय भस्त्रिका किया जा सकता है। ग्रीष्मकाल में इसे केवल प्रातःकाल ठण्ढे समय में ही करना चाहिए।

भस्त्रिका से गले की सूजन ठीक होती, जठराग्नि प्रदीप्त होती और कफ नष्ट होता है। यह नाक और सीने के रोगों को दूर करके दमा, यक्ष्मा आदि रोगों को समूल नष्ट करता है। यह क्षुधा को बढ़ाता है और ब्रह्म-ग्रन्थि, विष्णु-ग्रन्थि तथा रुद्र-ग्रन्थि—इन तीनों ग्रन्थियों को खोल देता है। सुषुम्ना अर्थात् ब्रह्म-नाड़ी के द्वार को बन्द रखने वाला कफ भी भस्त्रिका के अभ्यास से नष्ट हो जाता है। बात, पित्त और कफ़दोष-जन्य सभी रोग भस्त्रिका करने से दूर हो जाते हैं। यह शरीर को उष्णता प्रदान करता है। जब कभी किसी ठण्ढे प्रदेश में पहुँच जायें और वहाँ यदि शीत से रक्षा करने के लिए आपके पास गरम कपड़े कम हों, तो इस प्राणायाम का अभ्यास करें। शीघ्र ही आपके शरीर में पर्याप्त गरमी आ जायेगी। इसके अभ्यास से नाड़ियाँ पर्याप्त शुद्ध हो जाती हैं। यह सभी कुम्भकों में अत्यधिक लाभप्रद है। भस्त्रिका-कुम्भक का विशेष रूप से अभ्यास करना चाहिए; क्योंकि इसके अभ्यास से प्राण सुषुम्ना में दृढ़तापूर्वक स्थित उपर्युक्त तीनों ग्रन्थियों के भेदन में समर्थ बनता है। इससे कुण्डलिनी शीघ्र जाग जाती है। इसका अभ्यास करने वाला साधक सदा स्वस्थ रहता है।

अभ्यासकर्ता की शक्ति एवं क्षमता के अनुसार ही भस्त्रिका में निश्वास-संख्या या चक्र-संख्या निश्चित की जाती है। अभ्यास करने में आपको

अति नहीं बरतनी चाहिए। कुछ साधक ६ चक्र और कुछ १२ चक्र भी करते हैं। अभ्यास-काल में ॐ का भाव तथा अर्थ के साथ निरन्तर मानसिक जप करते रहना चाहिए। भस्त्रिका के कुछ ऐसे प्रकार हैं, जिनमें श्वास के लिए केवल एक ही नासारन्ध्र का उपयोग किया जाता है।

जो पूरे समय के साधक हैं और पूर्ण गम्भीरता से भस्त्रिका का अभ्यास करना चाहते हैं, उन्हें अभ्यास से पूर्व प्रातः वस्ति द्वारा पेट साफ कर लेना चाहिए। तभी उन्हें अभ्यास करना चाहिए और इसके बाद उन्हें केवल पर्याप्त घी-मिश्रित खिचड़ी का सेवन करना चाहिए.।

७. भ्रामरी

पद्मासन या सिद्धासन में बैठ कर दोनों नासारन्ध्रों से तीव्र गति से इस प्रकार श्वास-प्रश्वास लें कि भ्रमर के गुञ्जन-जैसा शब्द हो।

जब तक आपका शरीर पसीने में तर न हो जाये, इस अभ्यास को चालू रखें। अन्त में दोनों नासारन्ध्रों से खूब गहरी श्वास लें और जितनी देर आराम से श्वास रोक सकते हों, रोकें। इसके बाद श्वास को दोनों नासारन्ध्रों से धीरे-धीरे निकालें। इस कुम्भक को करने में साधक को जो आनन्द आता है, वह असीम और अवर्णनीय होता है। अभ्यास के आरम्भ में रक्त का सञ्चार बढ़ने से शरीर में गरमी बढ़ती है; किन्तु अन्त में शरीर की गरमी पसीना आने से कम हो जाती है। इस भ्रामरी-कुम्भक-प्राणायाम में सफलता प्राप्त कर योगी समाधि में सफल होता है।

८. मूर्च्छा

आसन लगा कर श्वास ग्रहण करें। श्वास को यथाशक्ति रोके रहें। ठोड़ी को सीने से सटा कर जालन्धरबन्ध करें। श्वास तब तक रोके रहें, जब तक कि मूर्च्छा आने-जैसी आशङ्का उत्पन्न होने लगे। जब मूर्च्छा आने लगे, तब धीरे-धीरे श्वास बाहर निकाल दें। यह मूर्च्छा-कुम्भक होता है; क्योंकि यह मस्तिष्क को संज्ञाहीन बना कर उसे आनन्द प्रदान करता है।

९. प्लावनी

इस प्राणायाम के अभ्यास में साधक की ओर से चतुराई बरतने की आवश्यकता है। जो प्लावनी-कुम्भक का अभ्यास कर सकता है, वह जलस्तम्भ

कर सकता है और किसी भी समय तक पानी पर तैरता रह सकता है। इस कुम्भक के एक अभ्यासकर्ता लगातार १२ घण्टे तक जल पर लेटे रह सकते थे। जो लोग इस प्लावनी-कुम्भक का अभ्यास करते हैं, वे कुछ दिनों तक बिना भोजन के रह कर वायु पर निर्वाह कर सकते हैं। इसमें साधक वस्तुतः जल की भाँति धीर-धीरे वायु को पीता है और उसे पेट में पहुँचाता है। वायु के भरने से पेट थोड़ा फूल जाता है। जब पेट वायु से भरा रहता है, तब उसे थपथपाने पर नगाड़े का शब्द निकलता है। इसके लिए धीरे-धीरे अभ्यास करने की आवश्यकता है। जो लोग इस प्राणायाम का अभ्यास भली प्रकार करना जानते हैं, उन लोगों से सहायता प्राप्त करना भी आवश्यक है। साधक पेट से सारी वायु को डकार के द्वारा अथवा उड्डीयानबन्ध करके बाहर निकाल सकता है।

१०. केवल-कुम्भक

कुम्भक दो प्रकार के होते हैं—सहित-कुम्भक और केवल-कुम्भक। पूरक और रेचक के संयोग वाले कुम्भक को सहित-कुम्भक कहते हैं। जिस कुम्भक में ये दोनों क्रियाएँ नहीं होती हैं, उसे केवल-कुम्भक कहा जाता है। जब तक आप केवल-कुम्भक में पूर्णता प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक सहित-कुम्भक का अभ्यास करें।

केवल-कुम्भक के अभ्यास से कुण्डलिनी का ज्ञान होता है। केवल-कुम्भक में पूरक और रेचक के बिना ही श्वास को अचानक रोक दिया जाता है। इस कुम्भक द्वारा साधक स्वेच्छानुसार देर तक अपने श्वास को रोक सकता है। वह राजयोग की अवस्था प्राप्त करता है। केवल-कुम्भक द्वारा कुण्डलिनी जाग्रत की जाती है तथा सुषुम्ना सब प्रकार की बाधाओं से मुक्त हो जाती है। इससे साधक हठयोग के अभ्यास में पूर्ण हो जाता है। इससे सब प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं और साधक की आयु दीर्घ होती है।

आप इस कुम्भक को दिन में आठ बार, प्रत्येक तीन घण्टे में एक बार अथवा दिन में पाँच बार जिसमें एक बार प्रातः, एक दोपहर को, एक सायं, एक अर्धरात्रि और फिर एक रात्रि के चौथे प्रहर में कर सकते हैं। अथवा आप इसे दिन में तीन बार भी अर्थात् प्रातः, सायं और रात्रि में कर सकते हैं।

जो केवल-कुम्भक का ज्ञान रखता है, वह वास्तविक योगी है। जिसने केवल-कुम्भक में सिद्धि प्राप्त कर ली, वह तीनों लोकों में क्या नहीं कर सकता!

ऐसे सिद्ध महात्माजन धन्य हैं ! धन्य हैं ! उनका आशीर्वाद सब साधकों को प्राप्त हो !

प्राणायाम के लाभ

प्राणायाम से शरीर शक्तिशाली तथा स्वस्थ हो जाता है, शरीर की अत्यधिक चर्बी कम हो जाती है, चेहरा कान्तिमान प्रतीत होने लगता है, नेत्र हीरे की भाँति चमकने लगते हैं तथा साधक अति सुन्दर दिखायी देने लगता है। उसकी वाणी मधुर और सुरीली हो जाती है। उसे अन्तर-नाद (अनाहत-शब्द) सुस्पष्ट रूप से सुनायी देने लगता है। इस साधना का साधक समस्त रोगों से मुक्त हो जाता है। वह पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य में स्थित हो जाता है। रजोगुण और तमोगुण दूर हो जाते हैं। मन धारणा तथा ध्यान के लिए तैयार हो जाता है। मल-मूत्र का उत्सर्जन अल्प मात्रा में होता है।

प्राणायाम के निरन्तर अभ्यास से आन्तरिक आध्यात्मिक शक्ति जाग्रत होती है और इससे परम आनन्द, दिव्य प्रकाश और मानसिक शान्ति प्राप्त होती है। साधक ब्रह्मचर्य में इतना दृढ़ हो जाता है कि अप्सराओं के प्रलोभन देने पर भी वह अडिग बना रहता है। यह उसे ऊर्ध्वरेता योगी बना देता है। साधना में आगे बढ़ने पर योगी अणिमा, महिमा, गरिमा आदि अष्ट सिद्धियाँ और ३६ ऋद्धियाँ प्राप्त कर लेता है।

यदि आप ब्रह्मचर्य-पालन एवं आहार-संयम के बिना, दीर्घ काल तक भी आसन-प्राणायाम करते रहें तो भी अधिक लाभ नहीं होगा। साधारण स्वास्थ्य के लिए आप थोड़ा-सा प्राणायाम कर सकते हैं।

प्राणायाम-सम्बन्धी सङ्केत

(१) शुष्क एवं हवादार कमरे में प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। अभ्यास के समय कमरे में अकेले ही रहना उचित है।

(२) प्रातः ४ बजे उठ कर आधा घण्टा ध्यान अथवा जप करें और फिर आसन करें। इसके बाद २० से ३० मिनट तक विश्राम करें और फिर शारीरिक व्यायाम करें। फिर थोड़ा विश्राम ले कर प्राणायाम का अभ्यास करें। शारीरिक व्यायाम आसनों के साथ सामञ्जस्यपूर्ण रूप से किये जा सकते हैं। प्रातः और सायं दोनों समय अभ्यास करें। जप या ध्यान के लिए बैठने से ठीक पूर्व

प्राणायाम का अभ्यास किया जा सकता है। इससे आपका शरीर हलका होगा और आपको ध्यान के अभ्यास में आनन्द प्राप्त होगा।

(३) पेट भारी होने पर प्राणायाम नहीं करना चाहिए। अभ्यास के समय पेट खाली अथवा हलका होना चाहिए। अभ्यास के १० मिनट बाद एक प्याला दूध ले लेना चाहिए।

(४) सात्त्विक भोजन—जैसे दूध, फल, साग, दाल, पराँठा, लौकी आदि—का सेवन करें। चरपरी कढ़ी, चटनियाँ, आचार, मिर्च, तेल, प्याज, लहसुन, मांस, मछली, मदिरा तथा धूमपान का सेवन छोड़ दें।

(५) अभ्यास में नियमित और व्यवस्थित रहें। किसी भी दिन नागा मत करें।

(६) प्राणायाम के तुरन्त बाद स्नान न करें; आधा घण्टा विश्राम कर लें।

(७) पसीना आने पर तौलिये से मत पोंछें, अपने हाथों से रगड़ें। पसीना आने पर शरीर को शीत वायु के झोंकों से बचा कर रखें।

(८) ग्रीष्म-काल में केवल एक वार प्रातःकाल ही अभ्यास करें। यदि मस्तिष्क या शिर में गरमी प्रतीत हो तो स्नान से पूर्व आँवले का तेल या मक्खन शिर पर मलें। जल में मिश्री घोल कर मिश्री-शरबत बना कर पियें। इससे आपके सम्पूर्ण शरीर को तरावट मिलेगी।

(९) शीतली-प्राणायाम भी करें। इससे आपके ऊपर गरमी का प्रभाव नहीं होगा।

(१०) छः महीने अथवा एक वर्ष तक ब्रह्मचर्य-व्रत का पूर्णतया पालन करना चाहिए। इससे निश्चय ही आप अभ्यास में प्रगति करेंगे, साथ ही आध्यात्मिक विकास भी होगा। महिलाओं से बातचीत न करें, उनसे हँसी-मजाक भी न करें। कम-से-कम साधना-काल में तो उनका साथ बिलकुल त्याग दें।

(११) श्वासोच्छ्वास सदैव बहुत धीरे-धीरे करें। श्वास-प्रश्वास के समय कोई ध्वनि न करें। कपालभाति और भस्त्रिका में तीव्र ध्वनि न करें।

(१२) थकान की दशा में प्राणायाम मत करें। अभ्यास-काल में और उसके अन्त में भी सदैव आनन्द और आत्मोल्लास की अनुभूति होनी चाहिए। अभ्यास के बाद आपमें पूर्ण स्फूर्ति और ताजगी होनी चाहिए। अपने को अत्यधिक नियमों से बद्ध मत रखें।

(१३) अत्यधिक बातें करने, खाने, सोने, मित्रों से सम्पर्क रखने तथा श्रम करने से पूर्णतया बचते रहें।

(१४) शनैः-शनैः कुम्भक की अवधि को बढ़ाते जायें। प्रथम सप्ताह में चार सेकण्ड तक, दूसरे सप्ताह में आठ सेकण्ड तक और तीसरे सप्ताह में बारह सेकण्ड तक रखें और जब तक कि आप श्वास को ६४ सेकण्ड तक न रोक सकें, इसी प्रकार अवधि को बढ़ाते जायें।

(१५) पूरक, कुम्भक और रेचक करते समय ॐ अथवा गायत्री का मानसिक जप करते रहें। ऐसा भाव रखें कि अन्दर श्वास लेते समय दया, क्षमा, प्रेम आदि समस्त दैवी सम्पत्तियाँ प्रवेश कर रही हैं और बाहर श्वास निकालते समय काम, क्रोध, लोभ आदि आसुरी सम्पत्तियाँ बाहर निकल रही हैं। श्वास लेते समय यह भी अनुभव करें कि दिव्य स्रोत विश्व-प्राण से आपको शक्ति प्राप्त हो रही है और आपका आपादमस्तक सारा शरीर प्रचुर नवीन शक्ति से सन्तृप्त हो रहा है। जब शरीर अधिक रोगी हो, तो अभ्यास बन्द कर दें।

(१६) नये सीखने वाले साधक को कुछ दिनों तक बिना कुम्भक के ही पूरक तथा रेचक करना चाहिए।

(१७) आप पूरक, कुम्भक और रेचक का इस सुन्दर ढङ्ग से समायोजन करें कि प्राणायाम की किसी भी अवस्था में आपको दम घुटने-जैसी अथवा कष्ट की अनुभूति न हो।

(१८) प्रश्वास (रेचक) की अवधि अनावश्यक रूप से नहीं बढ़ानी चाहिए। यदि आप रेचक का समय बढ़ायेंगे तो उसके बाद श्वास शीघ्रता से लेनी होगी और लयबद्धता टूट जायेगी।

(१९) पूरक, कुम्भक और रेचक को इस प्रकार सावधानी से व्यवस्थित करें कि आप न केवल एक प्राणायाम बल्कि पूर्ण आवश्यक क्रम पूर्ण सुविधा से सुचारु रूप से कर सकें। इसे आपको प्रायः दोहराना होगा। अनुभव और अभ्यास से आप ठीक हो जायेंगे, दृढ़सङ्कल्प बने रहें।

(२०) प्राणायामों के दो आनुक्रमिक चक्रों के बीच में आपको कुछ सामान्य श्वास लेने की आवश्यकता कभी अनुभव नहीं होनी चाहिए। पूरक, कुम्भक और रेचक की अवधि समुचित रूप से रखनी चाहिए। उचित सावधानी और ध्यान से काम लेना चाहिए। तब साधना सफल और सरल हो जायेगी।

(२१) ध्यान देने योग्य अन्य महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कुम्भक के अन्त में आपको फेफड़ों पर यथेष्ट नियन्त्रण रखना चाहिए जिससे कि आप रेचक सरलता से और पूरक के अनुपात में कर सकें।

(२२) पूरक, कुम्भक और रेचक का अनुपात क्रमशः १:४:२ होना चाहिए। एक ॐ उच्चारण करने तक श्वास लें और चार ॐ उच्चारण करने तक श्वास को रोकें और दो ॐ का उच्चारण करने तक श्वास को निकालें। प्रति-सप्ताह यह अनुपात २:८:४, ३:१२:६ के क्रम में उस समय तक बढ़ाते जायें जब तक कि अनुपात १६:६४:३२ न हो जाये। ॐ की गिनती अपने बायें हाथ की उँगलियों पर करें। जब आप सुखपूर्वक यथाशक्ति श्वास लेते, रोकते और निकालते हैं तो यह अनुपात स्वतः बन जाता है। जब आपका अभ्यास बढ़ जाये तो गिनती करने की आवश्यकता नहीं रहती। स्वभाववश आपका सहज अनुपात स्वतः ही होने लगेगा।

(२३) आरम्भ में साधारण भूलें हो सकती हैं। कोई बात नहीं। इससे अनावश्यक भयभीत न हों और न ही अभ्यास छोड़ें। आप स्वयं ही पूरक, कुम्भक और रेचक की तीनों प्रक्रियाओं में भली प्रकार सामञ्जस्य करना सीख जायेंगे। इस मार्ग में आपको विवेक, सहज बोध और आत्मा की कर्णभेदी अन्तर्वाणी सहायता देगी। अन्त में प्रत्येक कार्य सहज भाव से होने लगेगा। इसी क्षण पूर्ण गम्भीरतापूर्वक अभ्यास आरम्भ कर दें और सच्चे योगी बनें। प्रयत्न करें, कठोर सङ्घर्ष करें और लक्ष्य को प्राप्त करें।

(२४) सूर्यभेद और उज्जायी गरमी उत्पन्न करते हैं। सीत्कारी और शीतली शीतलकारी हैं। भस्त्रिका सामान्य तापमान को बनाये रखता है। सूर्यभेद वातदोष को, उज्जायी कफदोष को, सीत्कारी तथा शीतली पित्तदोष को तथा भस्त्रिका इन तीनों दोषों को नष्ट करता है।

(२५) सूर्यभेद और उज्जायी का शीतकाल में, सीत्कारी और शीतली का ग्रीष्मकाल में तथा भस्त्रिका का सभी ऋतुओं में अभ्यास किया जा सकता है। जिन लोगों के शरीर शीतकाल में भी गरम रहते हैं, वे शीतकाल में शीतली और सीत्कारी का अभ्यास कर सकते हैं।

टिप्पणी— आसनों के लिए दिये गये बहुत से निर्देशों का पालन प्राणायाम में भी किया जाना चाहिए।

योग-परिशिष्ट

कुण्डलिनी

कुण्डलिनी एक सर्पाकार दिव्य प्रसुप्त शक्ति है जो कि समस्त प्राणियों में निष्क्रियावस्था में पड़ी रहती है। गुदा से दो अंगुल ऊपर तथा जननेन्द्रिय से दो अंगुल नीचे मूलाधार-चक्र होता है। यहीं पर महादेवी कुण्डलिनी अवस्थित है। यह सर्प की तरह साढ़े तीन कुण्डल बनाये हुए होती है; इसलिए इसका नाम 'कुण्डलिनी-शक्ति' रखा गया है। यह सुषुम्ना-नाड़ी के मुँह में अधोमुखी अवस्था में रहती है। यह संसार की सृजन-शक्ति को अभिव्यक्त करती है तथा सृजन-कार्य में सदा व्यस्त रहती है। तीन कुण्डलियाँ प्रकृति के तीन गुणों अर्थात् सत, रज और तम को अभिव्यक्त करती हैं। इसमें अर्ध कुण्डली विकृतियों को (जो कि प्रकृति के विकार हैं) अभिव्यक्त करती है। कुण्डलिनी-शक्ति के जाग्रत होने तथा उसके सहस्रार-चक्र में शिव से मिलने से समाधि एवं मोक्ष की अवस्था प्राप्त होती है। इससे योगी ८ सिद्धियाँ एवं ३२ ऋद्धियाँ प्राप्त कर सकता है और मनोवाञ्छित काल तक जीवित रह सकता है।

इड़ा, पिङ्गला, सुषुम्ना एवं षट्-चक्र

इड़ा और पिङ्गला नाड़ियाँ मेरुदण्ड को पार कर एक तरफ से दूसरी तरफ जाती हैं और सुषुम्ना के साथ त्रिबन्ध—जिसे त्रिवेणी कहते हैं—बनाती हैं।

इड़ा नासिका के बायें रन्ध्र से तथा पिङ्गला नासिका के दायें रन्ध्र से चलती है। सुषुम्ना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नाड़ी है। यह ब्रह्मनाड़ी के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह एक सूक्ष्म मार्ग है जो कि नीचे मूलाधार से मेरु-रज्जु के मध्य से निकलता है और ब्रह्मरन्ध्र तक जाता है। जब नियमित प्राणायाम द्वारा चक्र शुद्ध हो जाते हैं तो श्वास स्वतः सुषुम्ना-नाड़ी के मुँह में बलपूर्वक प्रवेश करता है। जब श्वास सुषुम्ना-नाड़ी में हो कर निकलता है तो मन स्थिर हो जाता है।

टिप्पणी—नाड़ियों और चक्रों के कार्यों तथा उनसे सम्बन्धित निर्देशों के लिए मेरी पुस्तक 'कुण्डलिनी-योग' का अवलोकन कीजिए।

अभ्यास-क्रम एवं दिनचर्या

व्यस्त लोगों के लिए प्रारम्भिक अभ्यास-क्रम 'क'

	घं॰मि॰	कब से	कब तक
जप-ध्यान	०-४५	प्रातः ४-००	४-४५
शीर्षासन	०-०५		
सर्वाङ्गासन	०-०५		
मत्स्यासन	०-०३	प्रातः ४-४५	५-१०
पश्चिमोत्तानासन	०-०५		
अन्य आसन	०-०५		
शवासन	०-०२		
विश्राम	०-१५	प्रातः ५-१०	५-२५
भस्त्रिका-प्राणायाम	०-०५	प्रातः ५-२५	५-३५
अन्य प्राणायाम	०-०५		
विश्राम	०-०५	प्रातः ५-३५	५-४०
स्वाध्याय	०-४५	प्रातः ५-४०	६-२५
प्रातःकालीन भ्रमण	०-३५	प्रातः ६-२५	७-००
आसन, प्राणायाम जप और ध्यान (विलोम-क्रम)	१-३०	सायं ६-१५	७-४५
भजन (कीर्तन)	०-३०	सायं ७-४५	८-१५
भोजन तथा विश्राम	०-१५	रात्रि ८-१५	८-३०
स्वाध्याय	१-००	रात्रि ८-३०	९-३०
शयन	६-००	रात्रि ९-३०	३-३०

व्यस्त लोगों के लिए उच्चतर अभ्यास-क्रम 'ख'

	घं॰मि॰	कब से	कब तक
जप तथा ध्यान	१-३०	प्रातः ३-३०	५-००
शीर्षासन	०-३०	प्रातः ५-००	५-३०
सर्वाङ्गासन, मयूरासन, पश्चिमोत्तानासन इत्यादि	०-३०	प्रातः ५-३०	६-००
भस्त्रिका तथा अन्य प्राणायाम	०-३०	प्रातः ६-००	६-३०
स्वाध्याय	०-३०	प्रातः ६-३०	७-००
आसन, प्राणायाम, जप और ध्यान	३-००	रात्रि ६-१५	९-१५
भोजन	०-१५	रात्रि ९-१५	९-३०
स्वाध्याय	०-३०	रात्रि ९-३०	१०-००
शयन	५-००	रात्रि १०-००	३-००

पूर्णकालिक साधकों के लिए अभ्यास-क्रम 'ग'

	घं॰मि॰	कब से	कब तक
जप और ध्यान	३-३०	प्रातः ३-३०	७-००
आसन और प्राणायाम	२-००	प्रातः ७-००	९-००
आसन और प्राणायाम	२-००	सायं ५-००	७-००
जप और ध्यान	२-००	रात्रि ७-००	९-००
भजन	१-००	रात्रि ९-००	१०-००
शयन	५-००	रात्रि १०-००	३-००

अभ्यास-क्रम 'क' और 'ख' के लोगों के लिए समान कार्यक्रम

	घं॰मि॰	कब से	कब तक
विश्राम, अल्पाहार या दुग्ध	०-१५	प्रातः ७-००	७-१५
निष्काम कर्म और गृह-कार्य	१-१५	प्रातः ७-१५	८-३०
स्नान, धुलाई तथा प्रातराश आदि	१-००	प्रातः ८-३०	९-३०
कार्यालय, पत्रलेखन	३-००	पूर्वाह्न १०-००	१-००
मध्याह्न-भोजन, लोगों से समालाप	१-००	अपराह्न १-००	२-००
कार्यालय	३-००	अपराह्न २-००	५-००
सायङ्कालीन भोजन और विश्राम	०-१५	सायं ५-००	५-१५
सायङ्कालीन भ्रमण २ मील, सत्सङ्ग-श्रवण	१-१५	सायं ५-१५	६-३०

अन्य समय मौन, निष्काम कर्म, कीर्तन, स्वाध्याय, स्नान, भोजन आदि के लिए भली प्रकार निर्धारित कर लेना चाहिए। साधकों को अपने विकास, क्षमता और सुविधा के अनुसार अपना कार्यक्रम निश्चित कर लेना चाहिए।

महत्त्वपूर्ण संकेत

(१) योग के प्रत्येक जिज्ञासु का एक ही अभ्यास-क्रम होना चाहिए। आप समय में इधर-उधर थोड़ा हेर-फेर कर सकते हैं; किन्तु उसमें अभ्यास-क्रम का प्रत्येक विषय रहना चाहिए। आध्यात्मिक मार्ग में वेदान्तिक गपशप करने मात्र से काम नहीं चलेगा। समयानुवर्ती होने के लिए आपको अति-नियमनिष्ठ होना पड़ेगा। किसी भी मूल्य पर अभ्यास-क्रम के प्रत्येक विषय का पालन किया जाना चाहिए। ध्यान, जप, आसन तथा प्राणायाम का निर्धारित समय धीरे-धीरे बढ़ा देना चाहिए।

(२) सो कर उठते ही सर्वप्रथम शौच जायें। यदि आप स्नान न कर सकें तो हाथ-पैर, मुँह तथा शिर धो कर ध्यान और योगाभ्यास के लिए बैठ जायें।

(३) कुछ दिनों के नियमित अभ्यास के बाद यदि आप आसन, प्राणायाम और ध्यान का समय बढ़ा देते हैं, तो आपको पारिवारिक कार्यों और प्रातःकालीन भ्रमण के लिए निर्धारित समय में से कुछ समय कम करना होगा। छुट्टियों (अवकाश) के दिन आध्यात्मिक साधना के लिए अधिक समय का उपयोग करना चाहिए।

(४) प्रातःकालीन स्वाध्याय के समय गीता, उपनिषद्, रामायण आदि पढ़ें और रात्रि के समय स्वाध्याय-काल में कोई अन्य दर्शन-सम्बन्धी पुस्तकें अथवा पत्रिकाएँ पढ़ सकते हैं। ये दोनों विषय विद्यार्थियों के विस्तृत तथा अविस्तृत पाठ्यक्रम की भाँति हैं। लोगों से मिलने तथा पत्र लिखने के समय को आप कुछ रोचक पुस्तकें पढ़ने में लगा सकते हैं।

(५) सायङ्काल में आप कुछ अन्य शारीरिक व्यायामों एवं प्राणायाम के चक्रों को भी लाभकारी रूप से सम्मिलित कर सकते हैं। प्राणायाम-अभ्यास के समय तथा अन्य कार्यों के बीच में भी मानसिक जप करते रहना चाहिए।

(६) रात्रि को कीर्तन करें, तो परिवार के अन्य सदस्यों, मित्रों, पड़ोसियों तथा अपने कर्मचारियों को भी सम्मिलित करें। अन्त में प्रसाद वितरण करें।

(७) निष्काम कर्म के अन्तर्गत रोगियों की चिकित्सा अथवा सेवा-शुश्रूषा

सर्वोत्तम है। यदि आप यह नहीं कर सकते हैं, तो निर्धन विद्यार्थियों को अवैतनिक शिक्षण दें अथवा दान करें।

(८) यदि अपरिहार्य परिस्थितिवश अभ्यास-क्रम का कोई विषय न कर पायें तो उस समय का उपयोग मौन, स्वाध्याय अथवा बागवानी में करें। मन को सदा इसी प्रकार के उपयोगी कार्य में व्यस्त रखें।

(९) प्रारम्भिक अभ्यास-क्रम 'क' में आसन और प्राणायाम पहले तथा जप और ध्यान इसके बाद में किये जा सकते हैं। उच्चतर अभ्यास-क्रम 'ख' में आसन और प्राणायाम जप तथा ध्यान के बाद में करने चाहिए; क्योंकि प्रातःकाल का समय (ब्राह्ममुहूर्त) ध्यान के लिए सर्वश्रेष्ठ होता है। तन्द्रा दूर करने के लिए जप तथा ध्यान से पूर्व १० मिनट शीर्षासन अथवा भस्त्रिका का अभ्यास कर सकते हैं।

(१०) यदि इनमें से किसी भी विषय को न कर सकें, तो प्रिय बन्धु ! समझ लें कि आपने अपने अमूल्य जीवन का एक दिन नष्ट कर दिया। यदि आप संसार में किसी बाधा डालने वाले तत्त्व का अनुभव करें, तो निर्ममतापूर्वक बिना किसी हिचक के संसार को छोड़ दें और एकान्तवास का आश्रय लें तथा अपने गुरु के चरण-कमलों में रह कर अहर्निश आध्यात्मिक साधना में रत रहें। यदि आप धीर, कृतोद्यम तथा निष्कपट हैं, तो छः महीने में ही आपको अनिर्वचनीय आनन्द, मानसिक शान्ति और विशुद्ध सुख प्राप्त होंगे। आपके मुख-मण्डल पर कान्ति तथा ज्योति प्रकट होंगी। निश्चय ही ऐसा व्यक्ति अखिल विश्व के लिए एक वरदान है। इस प्रकार की साधना ही आपको शाश्वत सन्तोष और सुख प्रदान कर सकती है। यदि आप थोड़े से अदरक के बिस्कुट, थोड़ा धन तथा स्त्री पर ही अपना सुख आधारित रखेंगे, तो वृद्धावस्था में आपको पछताना पड़ेगा।

योगासनों की विस्तृत सूची

१. अंगुष्ठासन
२. अद्‌वासन
३. अधोमुख श्वासासन
४. अर्ध कूर्मासन
५. अर्ध चन्द्रासन
६. अर्ध त्रिकोणासन
७. अर्ध धनुरासन
८. अर्ध नावासन
९. अर्ध पद्म पश्चिमोत्तानासन
१०. अर्ध पद्मासन
११. अर्ध पवनमुक्तासन
१२. अर्ध पादासन
१३. अर्ध भुजा पीड़ासन
१४. अर्ध मण्डूकासन
१५. अर्ध मत्स्येन्द्रासन
१६. अर्ध वृक्षासन
१७. अर्ध वृश्चिकासन
१८. अर्ध शलभासन
१९. अर्ध शवासन
२०. अर्धासन
२१. आकर्षण धनुरासन

२२. आनन्द मन्दिरासन

२३. उग्रासन

२४. उत्कटासन

२५. उत्तमाङ्गासन

२६. उत्तान कूर्मासन

२७. उत्तान पादासन

२८. उत्तान मण्डूकासन

२९. उत्थित पद्मासन

३०. उत्थित पार्श्वकोणासन

३१. उत्थित विवेकासन

३२. उत्थित समकोणासन

३३. उत्थितासन

३४. उपविष्ट कोणासन

३५. उपविष्ट शीर्षासन

३६. उष्ट्रासन

३७. ऊर्ध्व त्रिकोणासन

३८. ऊर्ध्व धनुरासन

३९. ऊर्ध्व पद्मासन

४०. ऊर्ध्व पश्चिमोत्तानासन

४१. ऊर्ध्व पादासन

४२. ऊर्ध्व भुजङ्गासन

४३. ऊर्ध्व मुक्त श्वासनासन

४४. ऊर्ध्व शीर्ष एकपाद चक्रासन
४५. ऊर्ध्व शीर्षासन
४६. ऊर्ध्व सम्मुक्त पद्मासन
४७. ऊर्ध्व सम्मुक्तासन
४८. ऊर्ध्व सर्वाङ्गासन
४९. ऊर्ध्व हस्त जानु बलासन
५०. एक पाद वृक्षासन
५१. एक पादासन
५२. एक हस्त भुजासन
५३. एक हस्त मयूरासन
५४. ओंकारासन
५५. कन्दपीड़ासन
५६. कपाल्यासन
५७. कपिलासन
५८. कर्णपीड़ासन
५९. कर्ण पृष्ठ जानु पद्मासन
६०. कश्यपासन
६१. कष्टासन
६२. कामदहनासन
६३. कार्मुकासन
६४. कुक्कुटासन
६५. कुब्जिकासन

६६. कूर्मासन

६७. कृष्णासन

६८. कोकिलासन

६९. क्षेमकोणासन

७०. क्षेमासन

७१. गरुड़ासन

७२. गर्भासन

७३. गुप्तासन

७४. गोमुख पश्चिमोत्तानासन

७५. गोमुखासन

७६. गोरक्षासन

७७. ग्रन्थि पीड़ासन

७८. चकोरासन

७९. चक्रासन

८०. चतुर्मुख कोणासन

८१. चतुष्पादासन

८२. चित्त विवेकासन

८३. चित्तासन

८४. जानु पार्श्वासन

८५. जानु शीर्षासन

८६. जान्वासन

८७. ज्येष्टिकासन

८८. टिट्टिभासन
८९. ताड़ासन
९०. तिर्यक्मुख व्युत्थानासन
९१. तिर्यक्स्तम्भनासन
९२. तोलांगुलासन
९३. त्रिकोणासन
९४. त्रिशूलासन
९५. दक्षिण अंगुष्ठासन
९६. दक्षिण अर्धपादासन
९७. दक्षिण जान्वासन
९८. दक्षिण त्रिकोणासन
९९. दक्षिण धीरासन
१००. दक्षिण पवनमुक्तासन
१०१. दक्षिण पाद पश्चिमोत्तानासन
१०२. दक्षिण पाद शीर्षासन
१०३. दक्षिण पादासन
१०४. दक्षिण भुजासन
१०५. दक्षिण वक्रासन
१०६. दक्षिण सिद्धासन
१०७. दक्षिण हस्त चतुष्कोणासन
१०८. दक्षिण हस्त भयङ्करासन
१०९. दक्षिणार्ध पाद पद्मासन

११०. दक्षिणासन

१११. दण्डासन

११२. दधि मन्थनासन

११३. दुर्वासासन

११४. द्विपाद पार्श्वासन

११५. द्विपाद शीर्षासन

११६. धनुरासन

११७. धीरासन

११८. नटराज आसन

११९. नमस्कारासन

१२०. नागासन

१२१. नावासन

१२२. नासिका पृष्ठासन

१२३. निरालम्ब शीर्षासन

१२४. निश्चलासन

१२५. निश्वासासन

१२६. निष्ठासन

१२७. पद्म मयूरासन

१२८. पद्मासन

१२९. परिवर्तन पादासन

१३०. परिसारित पाद व्युत्थानासन

१३१. पर्यङ्कासन

१३२. पर्वतासन

१३३. पवनमुक्तासन

१३४. पश्चिमोत्तानासन

१३५. पाद कोणासन

१३६. पाद जानुशीर्षासन

१३७. पाद पद्मासन

१३८. पाद पीड़ासन

१३९. पाद वृक्षासन

१४०. पाद हस्तासन

१४१. पादांगुष्ठासन

१४२. पादादिरासन

१४३. पार्श्व भूनमनासन

१४४. पूर्णपाद त्रिकोणासन

१४५. पूर्ण पादासन

१४६. पूर्ण हस्त भुजासन

१४७. पृष्ठ स्कन्धासन

१४८. पृष्ठ हस्त दण्डासन

१४९. प्राणासन

१५०. प्रार्थनासन

१५१. प्रौढ़ पादासन

१५२. प्रौढ़ासन

१५३. फणीन्द्रासन

१५४. बकासन

१५५. बद्धपद्मासन

१५६. बद्धयोन्यासन

१५७. बुद्धासन

१५८. भद्रासन

१५९. भुजङ्गासन

१६०. भुजासन

१६१. भैरवासन

१६२. मकरासन

१६३. मण्डूकासन

१६४. मत्स्यासन

१६५. मत्स्येन्द्र पद्मासन

१६६. मत्स्येन्द्र सिद्धासन

१६७. मत्स्येन्द्रासन

१६८. मयूरासन

१६९. मरीच्यासन

१७०. मर्कटासन

१७१. महामेघासन

१७२. मुक्त पद्मासन

१७३. मुक्त हस्त वृक्षासन

१७४. मुक्त हस्त शीर्षासन

१७५. मुक्तासन

१७६. मृतासन
१७७. योग डण्डासन
१७८. योग निद्रासन
१७९. योगासन
१८०. योन्यासन
१८१. लोलासन
१८२. वज्रासन
१८३. वातायनासन
१८४. वाम जान्वासन
१८५. वाम त्रिकोणासन
१८६. वामनासन
१८७. वाम पवनमुक्तासन
१८८. वाम पाद धीरासन
१८९. वाम पाद पवनमुक्तासन
१९०. वाम पीड़ासन
१९१. वाम पृष्ठ जानु वृक्षासन
१९२. वाम वक्रासन
१९३. वाम श्वास कामनासन
१९४. वाम हस्त भयङ्करासन
१९५. वाम हस्त भुजङ्गासन
१९६. वामांगुष्ठासन
१९७. वामार्ध पद्मासन

१९८. वामार्ध पादासन
१९९. विपरीतकरणी
२००. विपरीत दण्डासन
२०१. विपरीत धनुरासन
२०२. विरामासन
२०३. विवेकासन
२०४. विस्तृत पाद पार्श्व-भूनमनासन
२०५. वीरासन
२०६. वीर्य स्तम्भनासन
२०७. वृक्षासन
२०८. वृश्चिकासन
२०९. व्युत्थित हस्त पद्मासन
२१०. शलभासन
२११. शवासन
२१२. शाखासन
२१३. शीर्ष पाद हस्तकोणासन
२१४. शीर्ष बद्ध हस्त त्रिकोणासन
२१५. शीर्षासन
२१६. शुण्डासन
२१७. श्वसनासन
२१८. सङ्कटासन
२१९. समानासन

२२०. सम्पूर्ण भुजासन

२२१. सर्वतोभद्रासन

२२२. सर्वाङ्ग पद्मासन

२२३. सर्वाङ्ग हलासन

२२४. सर्वाङ्गासन

२२५. ससाङ्गासन

२२६. सालम्ब शीर्षासन

२२७. साष्टाङ्गासन

२२८. सिंहासन

२२९. सिद्धासन

२३०. सुखासन

२३१. सुप्त कोणासन

२३२. सुप्त पार्श्व पादांगुष्ठासन

२३३. सुप्त वज्रासन

२३४. सुप्तोत्थित परिवर्तन पादासन

२३५. सुप्तोत्थित पाद जानुशीर्षासन

२३६. स्कन्दासन

२३७. स्थिरासन

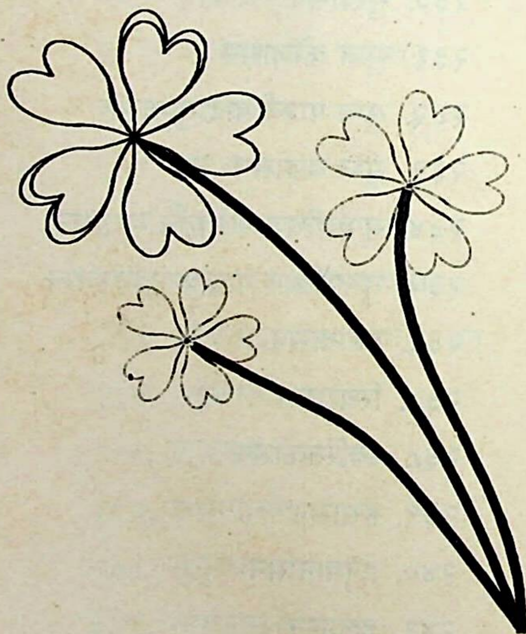
२३८. स्वस्तिकासन

२३९. हंसासन

२४०. हनुमानासन

२४१. हलासन

२४२. हस्त चतुष्कोणासन
२४३. हस्त पाद अंगुष्ठासन
२४४. हस्त पाद शीर्षासन
२४५. हस्त पार्श्व चालनासन
२४६. हस्त भयङ्करासन
२४७. हस्त भुजासन
२४८. हस्त वृक्षासन
२४९. हस्तासन
२५०. हृदय कमल मुक्तासन
२५१. हृदय कमलासन

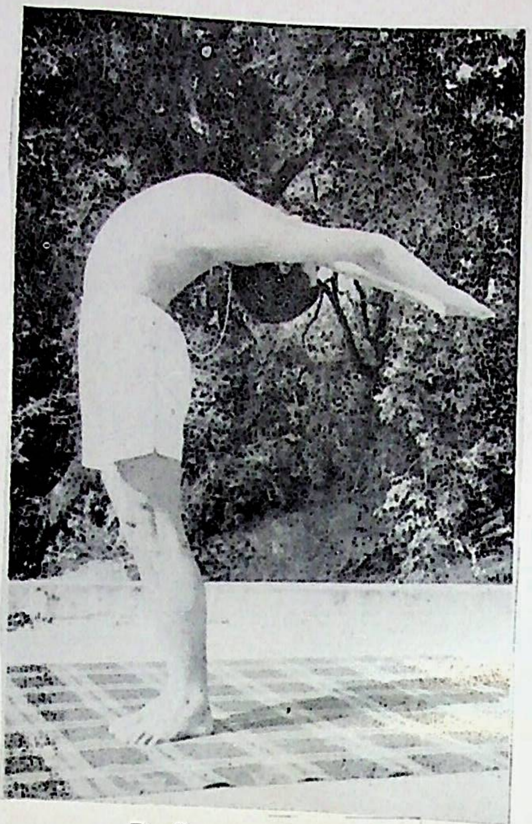


सूर्य-नमस्कार

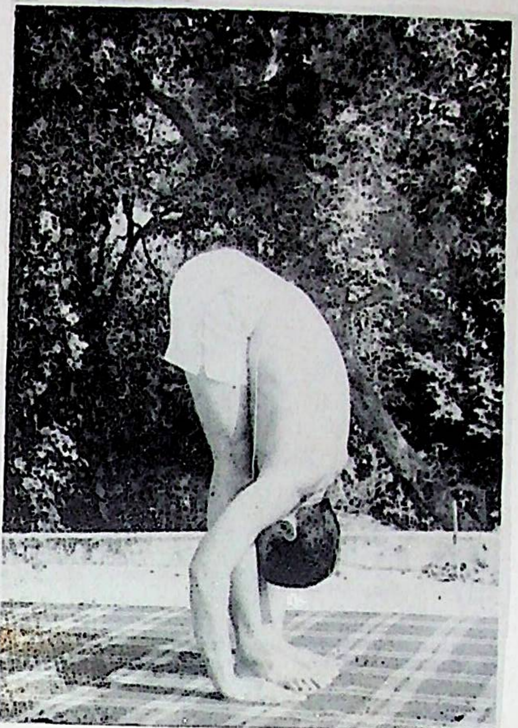
१२ स्थितियों में



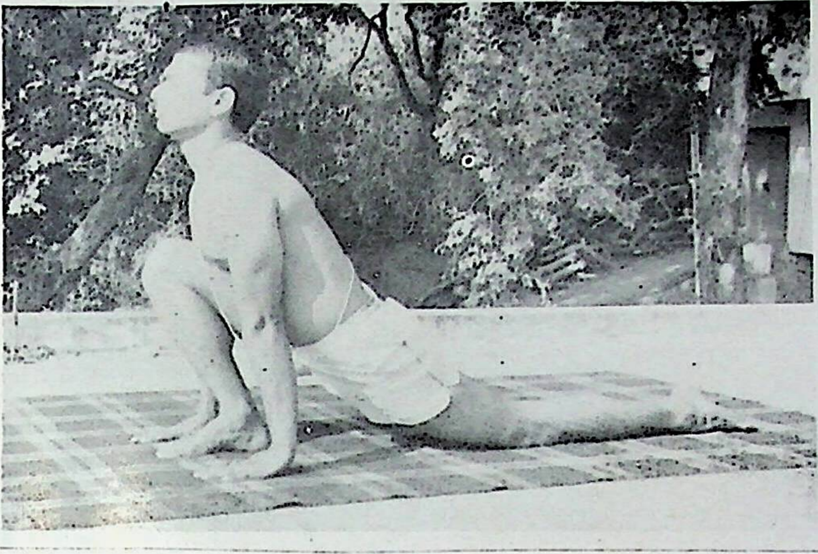
स्थिति १ (पृष्ठ ३)



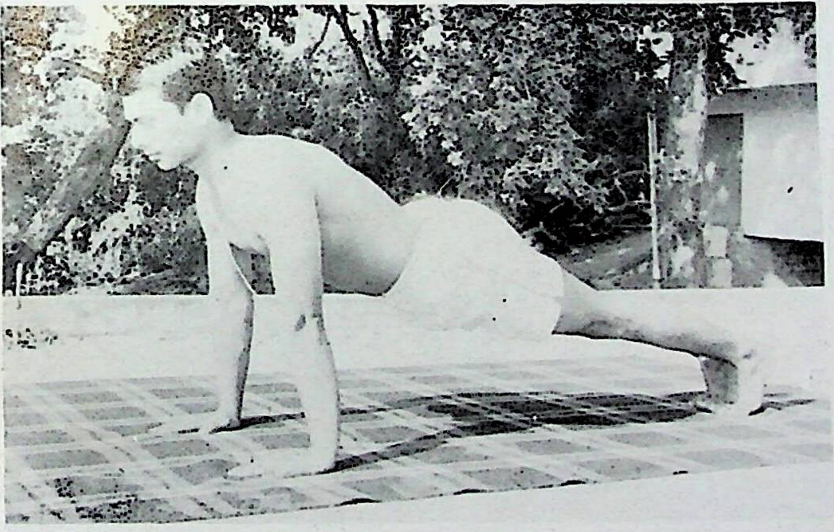
स्थिति २ (पृष्ठ ४)



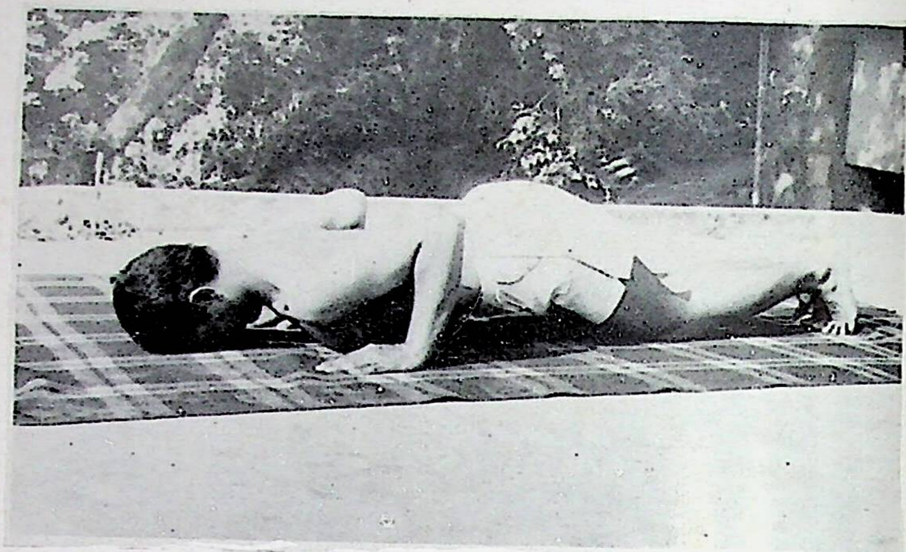
स्थिति ३ (पृष्ठ ४)



स्थिति ४ (पृष्ठ ४)

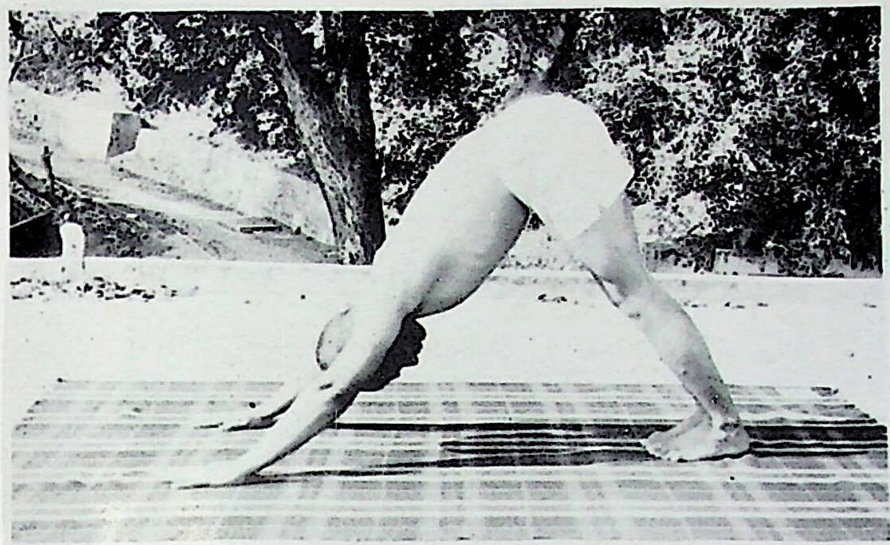


स्थिति ५ (पृष्ठ ४)

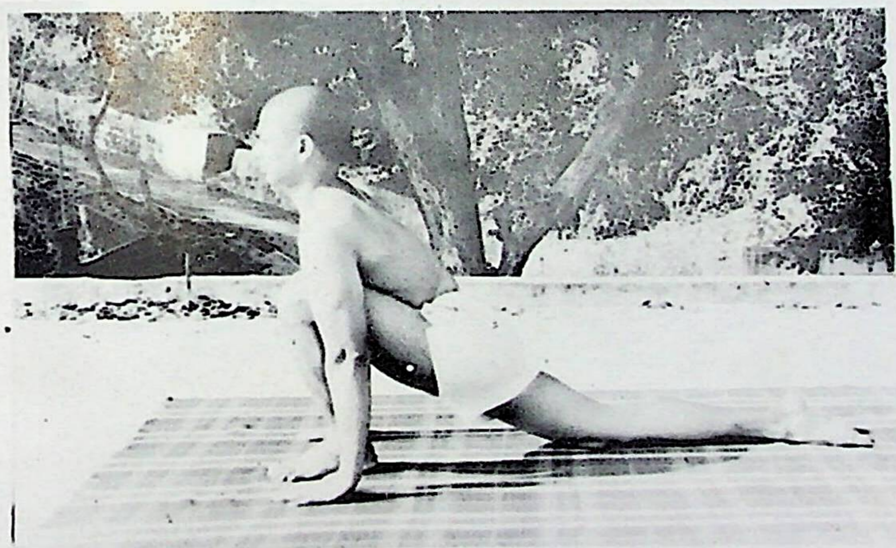


स्थिति ६ (पृष्ठ ४)

स्थिति ७ (पृष्ठ ४)



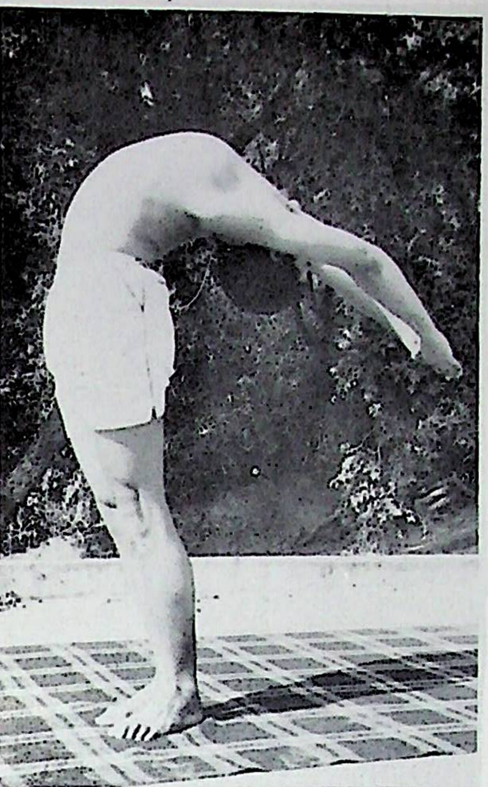
स्थिति ८ (पृष्ठ ४)



स्थिति ९ (पृष्ठ ४)



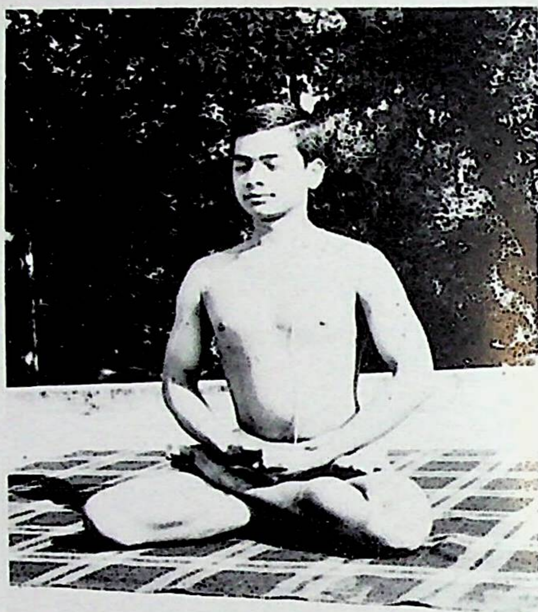
स्थिति १० (पृष्ठ ४)



स्थिति ११ (पृष्ठ ४)

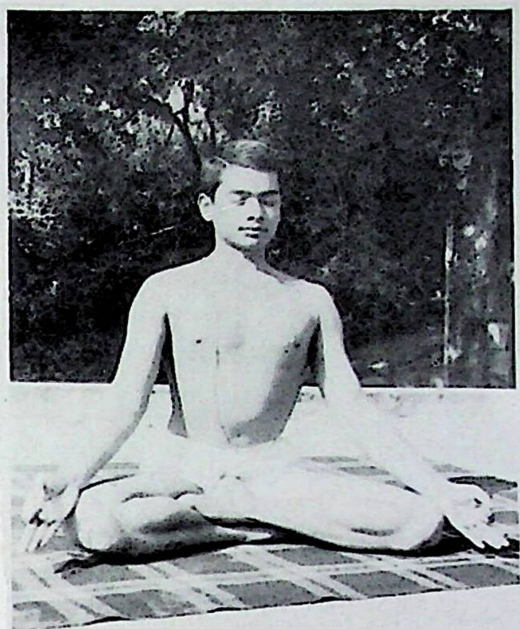


स्थिति १२ (पृष्ठ ५)



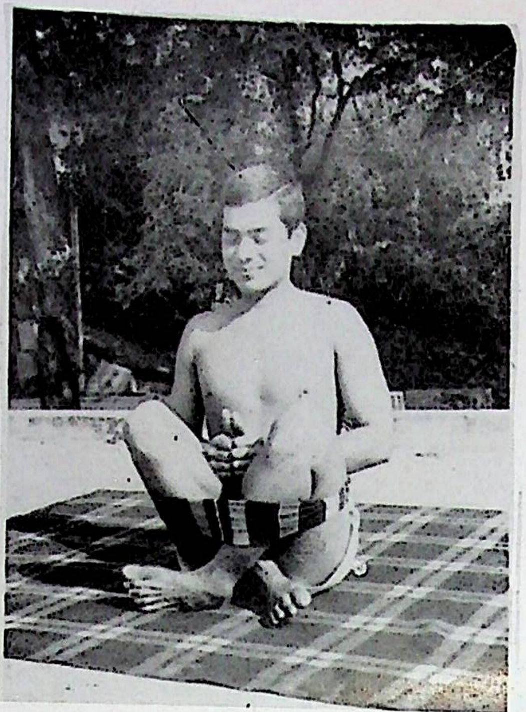
पद्मासन (पृष्ठ ८)

सिद्धासन
(पृष्ठ १०)

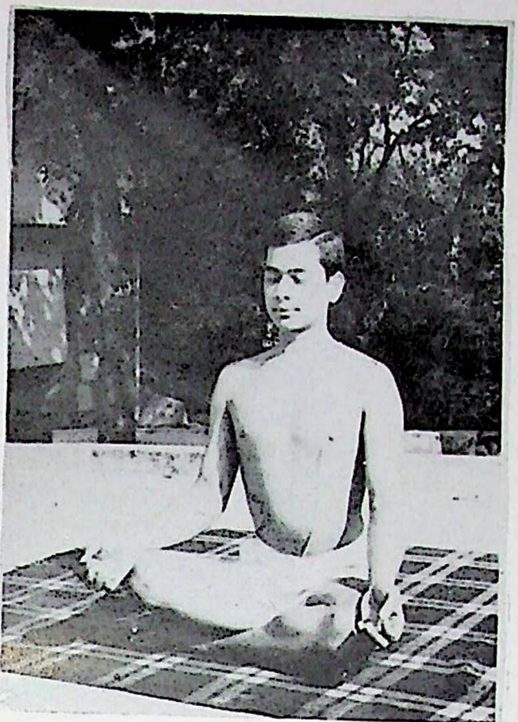




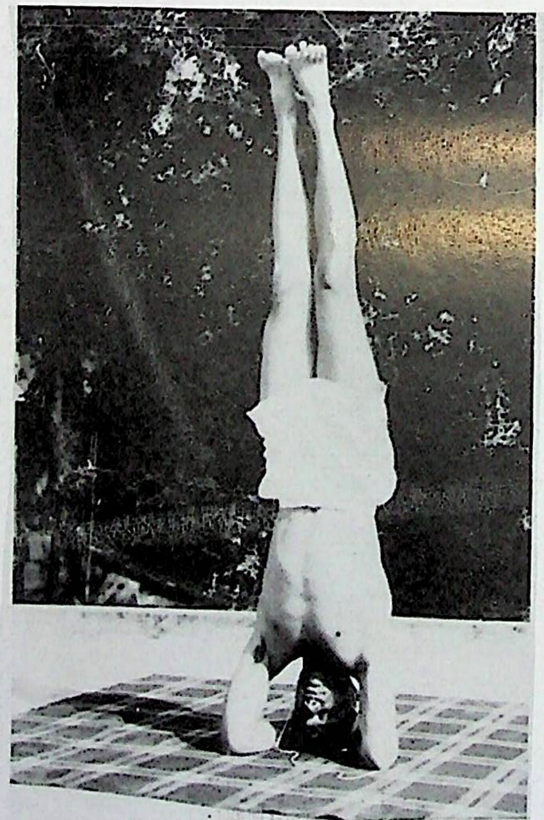
स्वस्तिकासन (पृष्ठ ११)



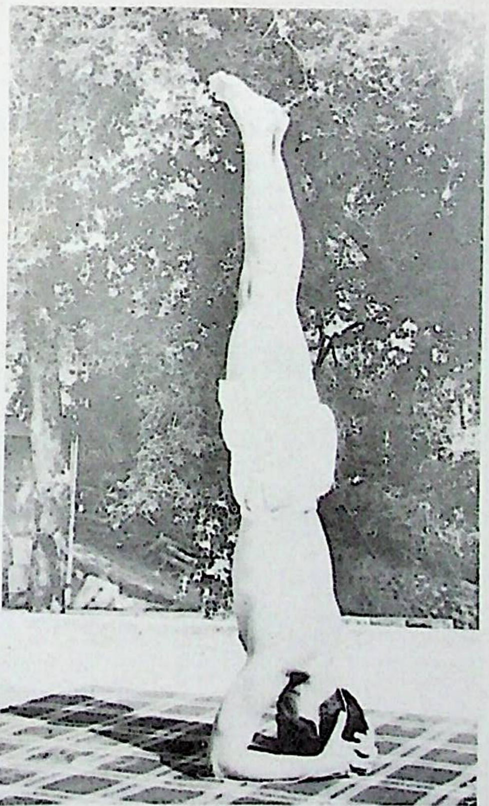
सुखासन (पृष्ठ १२)



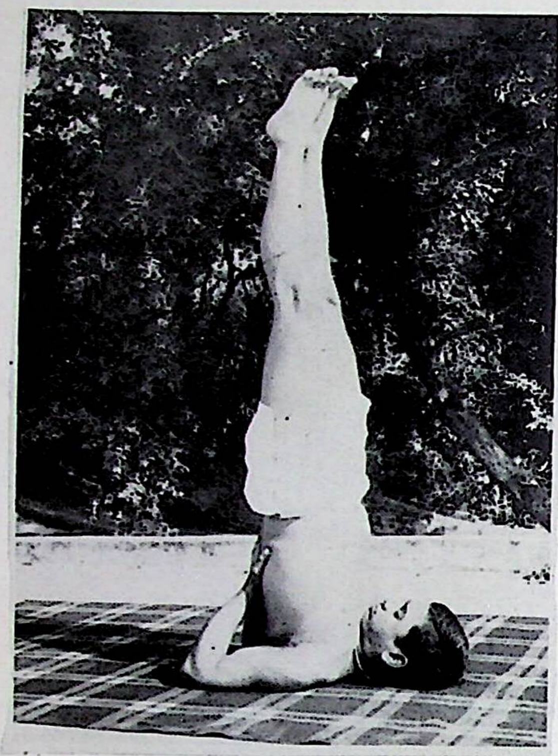
सुखासन (दूसरा प्रकार)



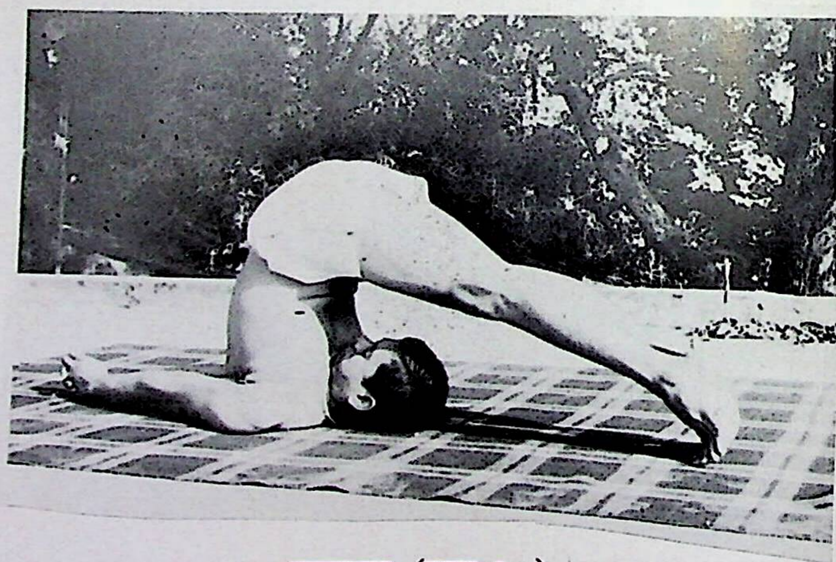
शीर्षासन—सामने से (पृष्ठ १४)



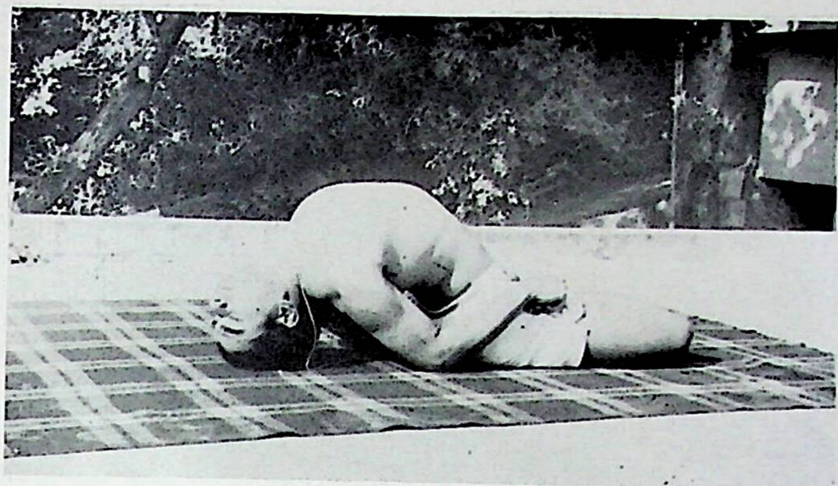
शीर्षासन—पार्श्व से



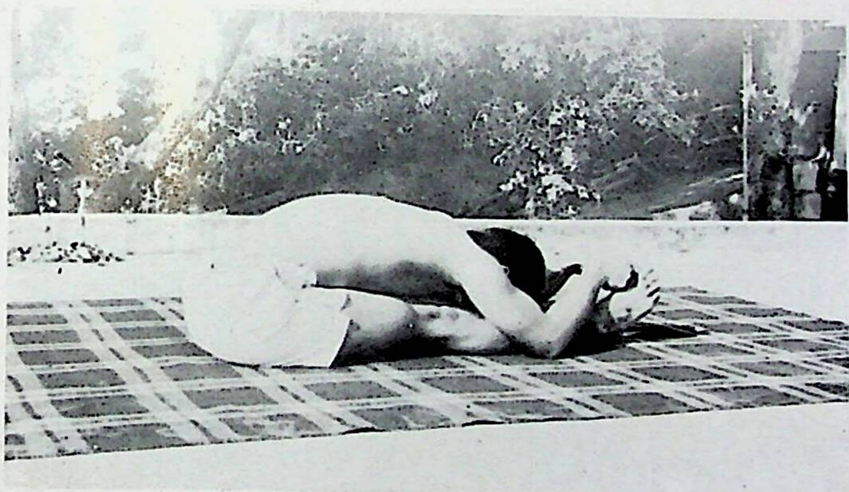
सर्वाङ्गासन (पृष्ट १८)



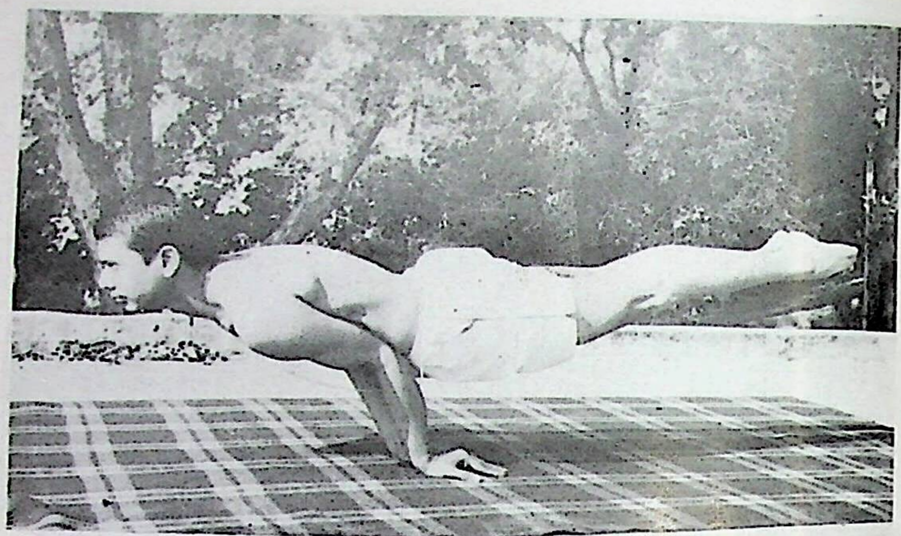
हलासन (पृष्ठ २०)



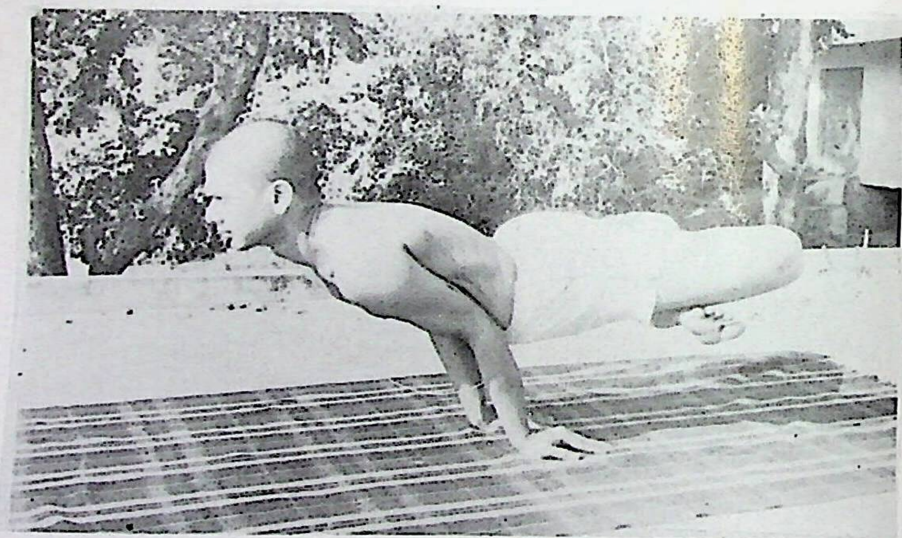
मत्स्यासन (पृष्ठ २२)



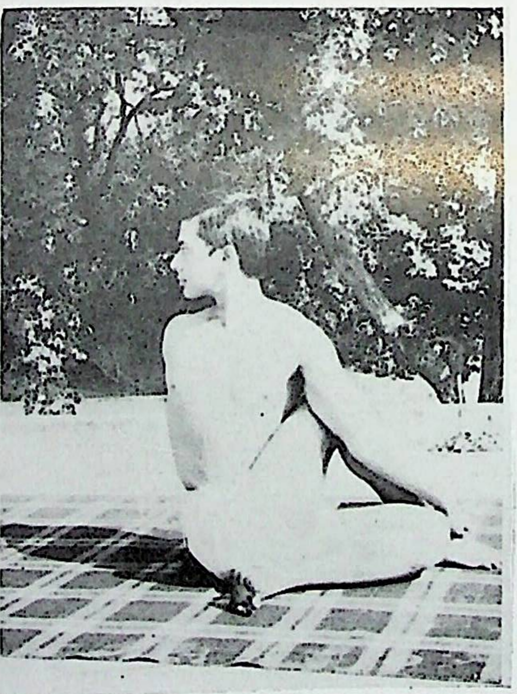
पश्चिमोत्तानासन (पृष्ठ २३)



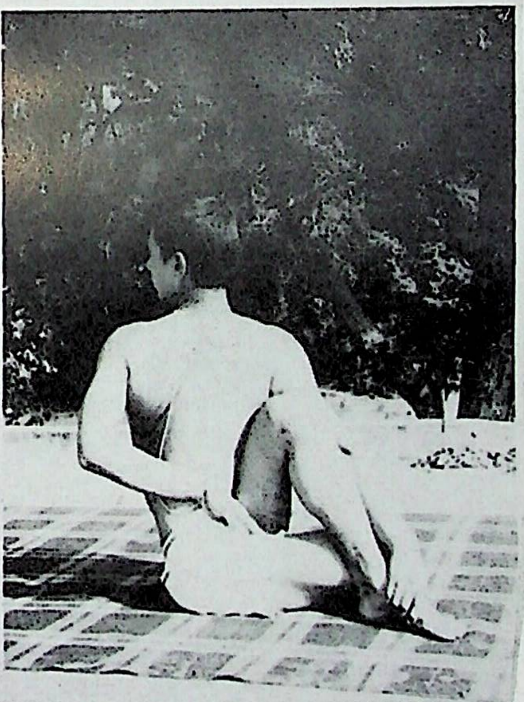
मयूरासन (पृष्ठ २४)



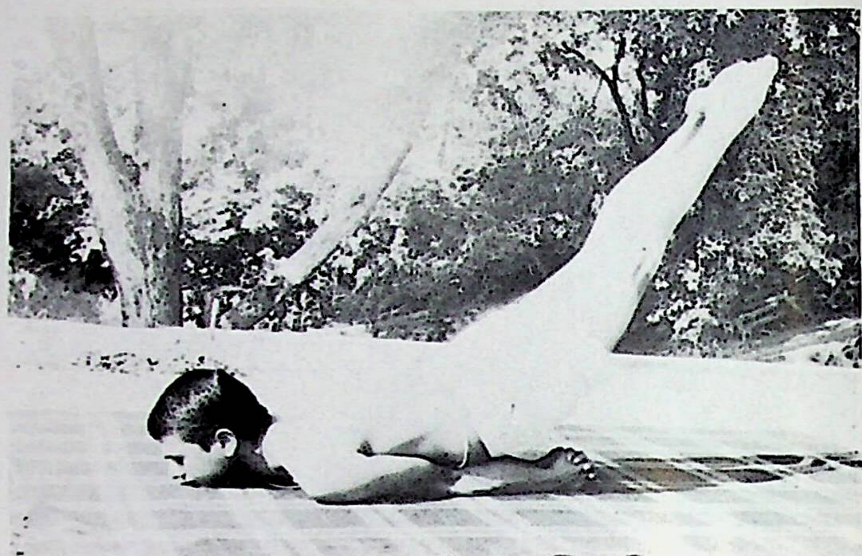
लोलासन (पृष्ठ २६)



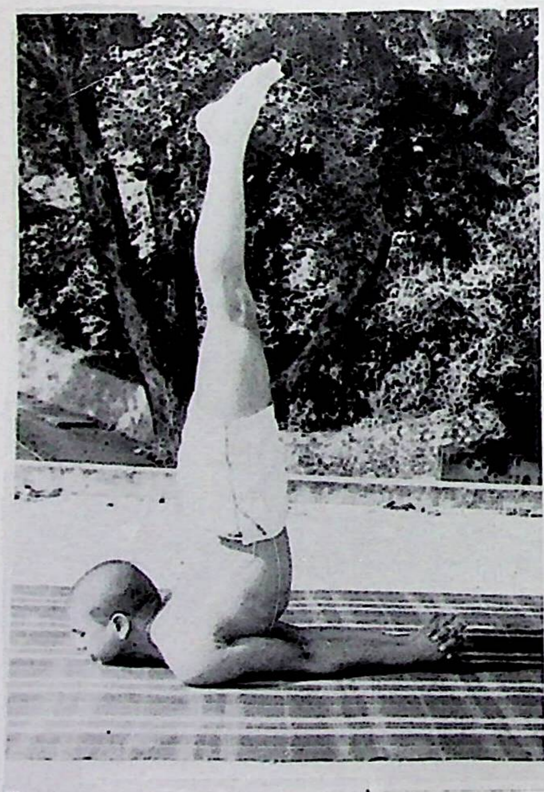
अर्ध-मत्स्येन्द्रासन—सामने से (पृष्ठ २७)



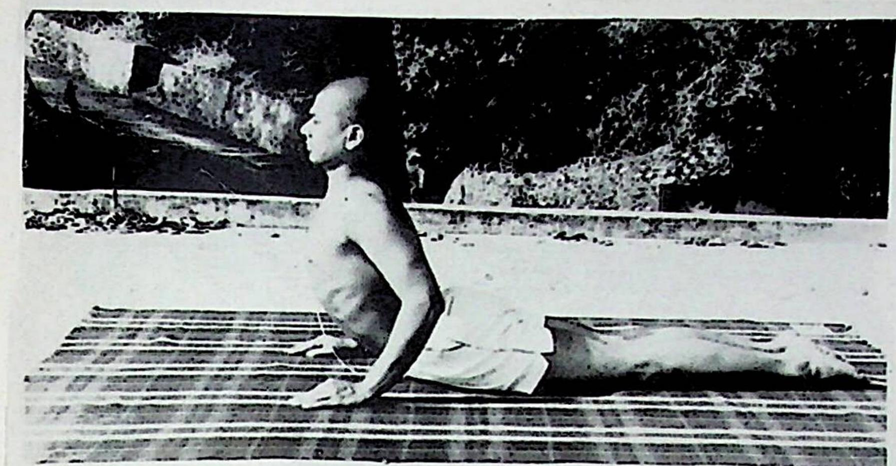
अर्ध-मत्स्येन्द्रासन—पीछे से



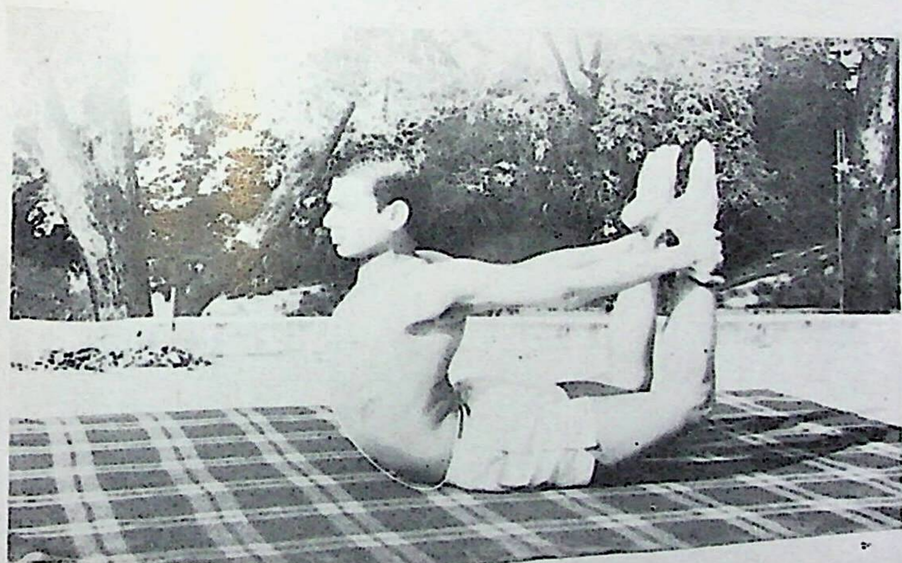
शलभासन
(पृष्ठ २८)



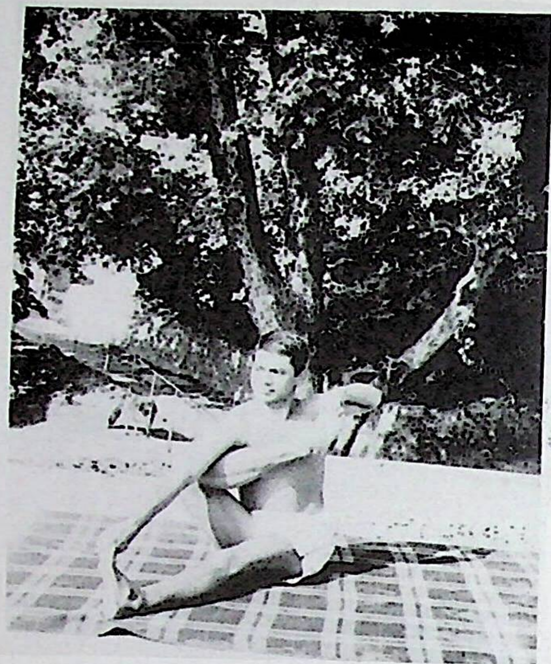
पूर्णशलभासन



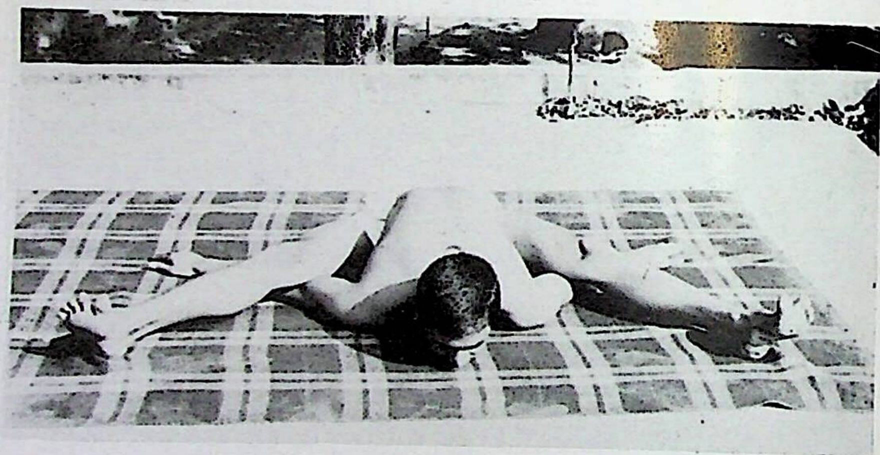
भुजङ्गासन (पृष्ठ २९)



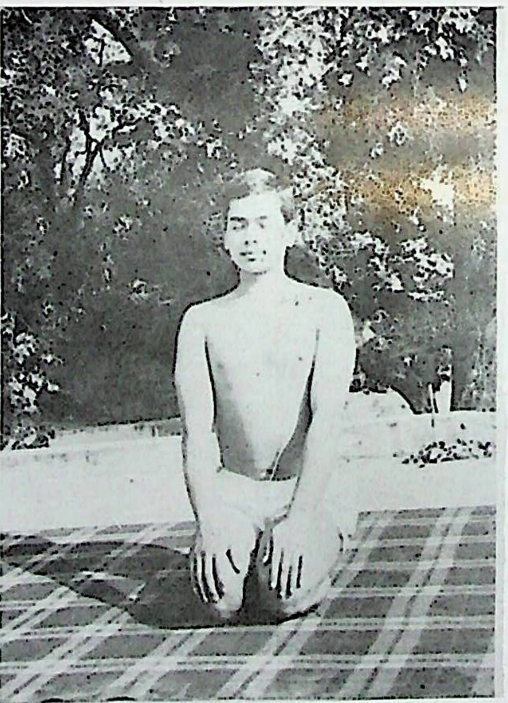
धनुरासन (पृष्ठ ३१)



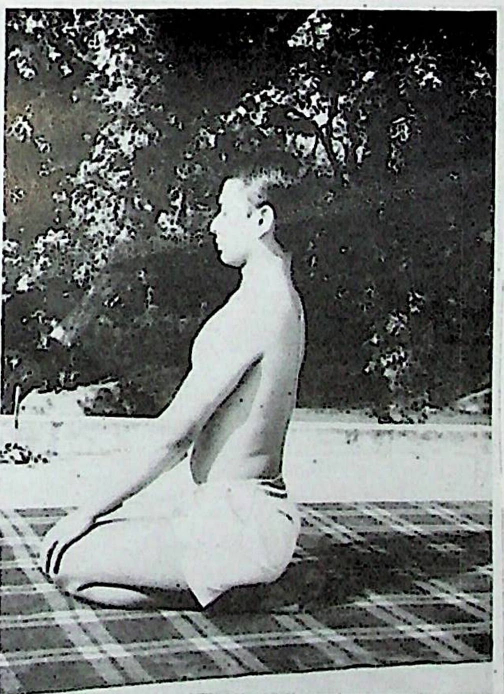
आकर्षण
धनुरासन
(पृष्ठ ३२)



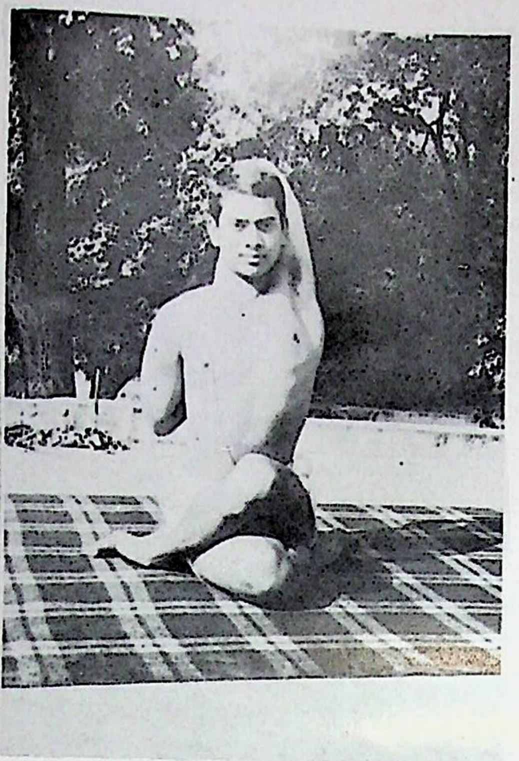
कूर्मासन (पृष्ठ ३५)



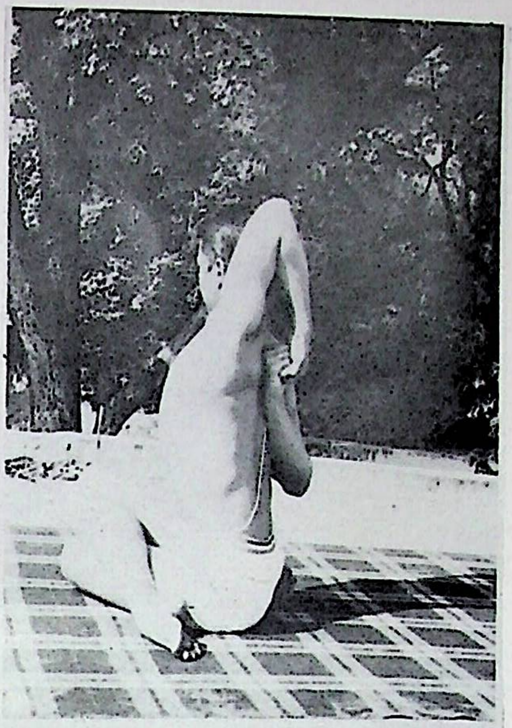
वज्रासन—सामने से (पृष्ठ ३४)



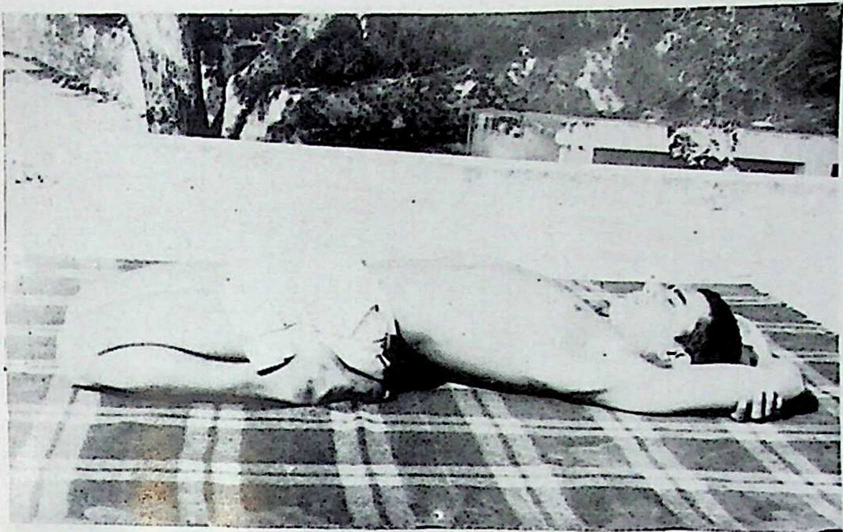
व्रजासन—पार्श्व से



गोमुखासन—पार्श्व से



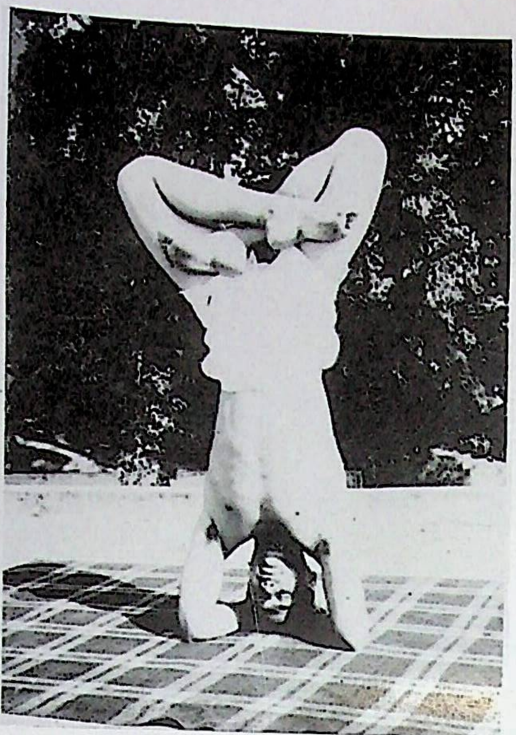
गोमुखासन—सामने से (पृष्ठ ३२)



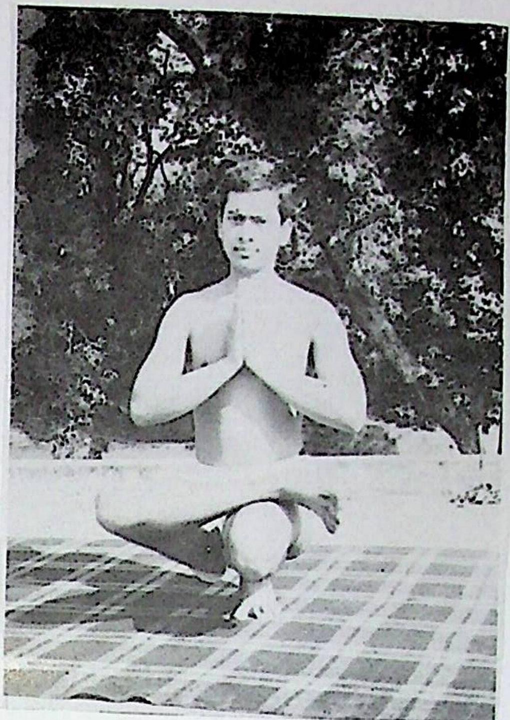
सुप्त व्रज्रासन
(पृष्ठ ३६)



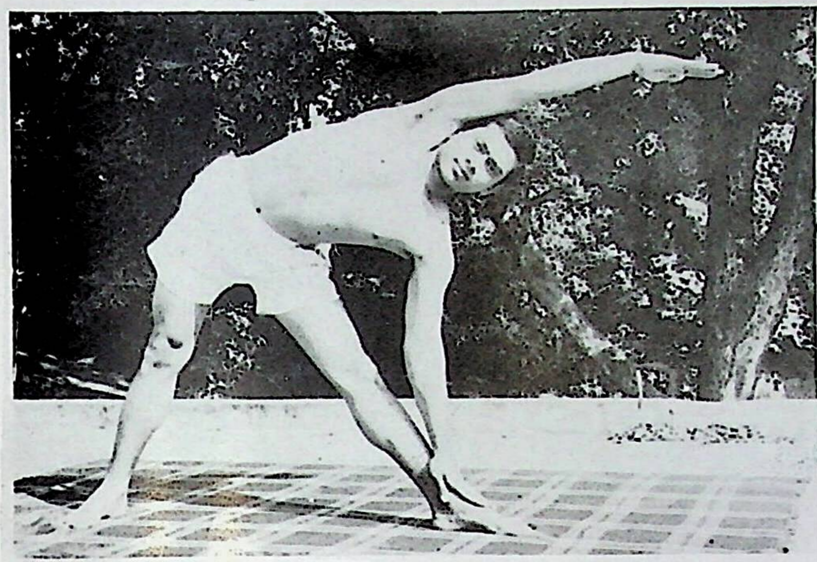
गरुड़ासन
(पृष्ठ ३७)



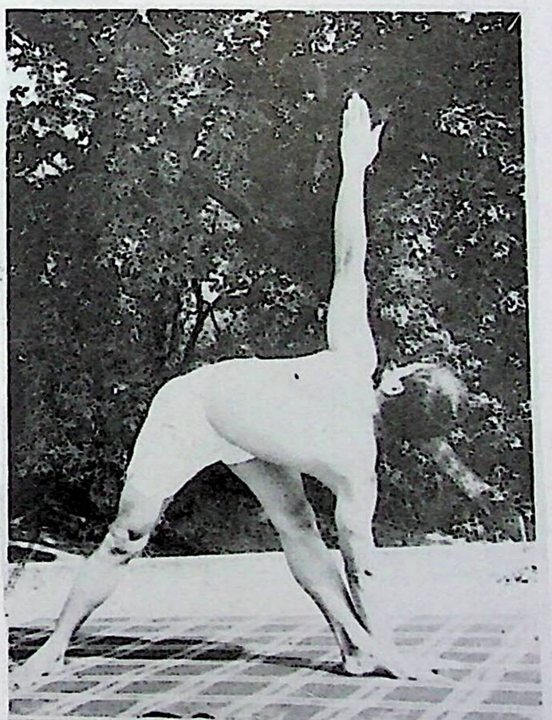
ऊर्ध्व पद्मासन (पृष्ठ ३७)



पादांगुष्ठासन (पृष्ठ ३९)



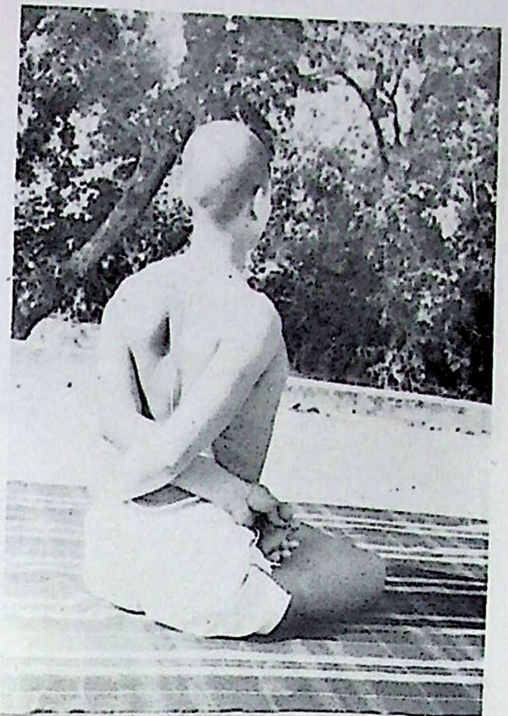
त्रिकोणासन (पृष्ठ ४०)



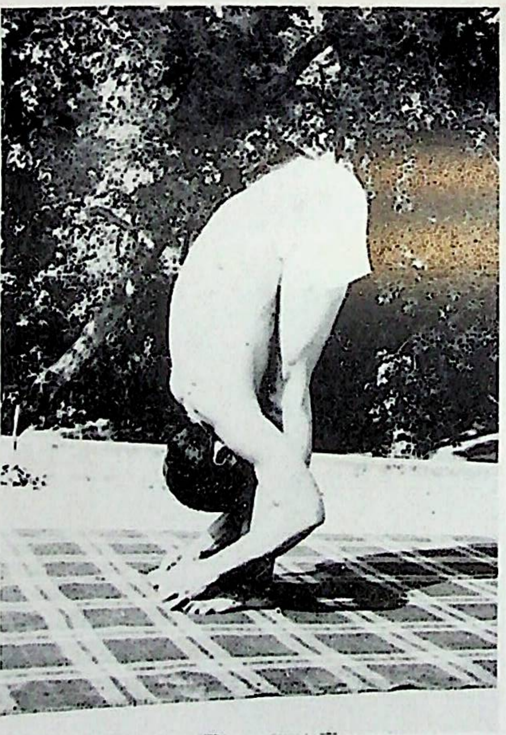
त्रिकोणासन (दूसरा प्रकार)



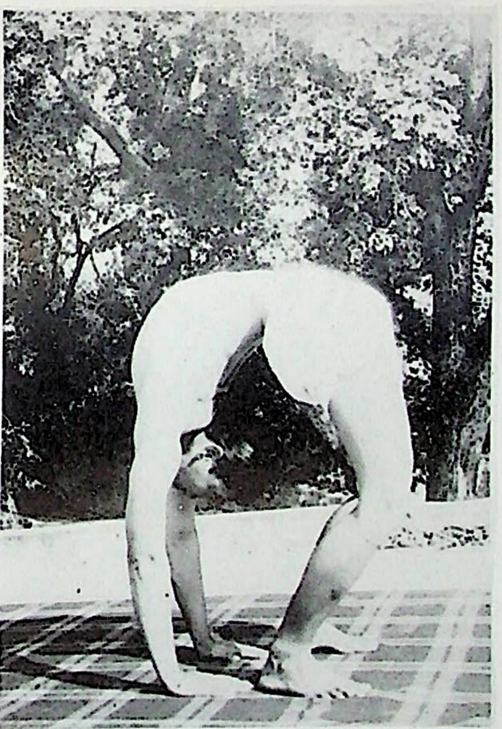
बद्धपद्मासन—सामने से (पृष्ठ ४१)



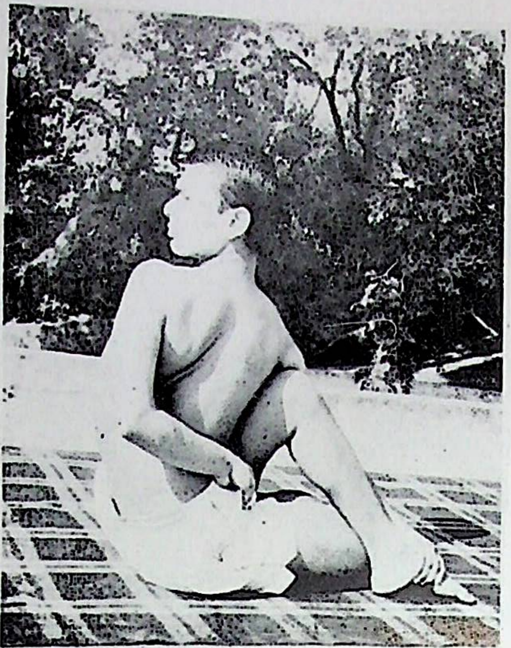
बद्धपद्मासन—पीछे से



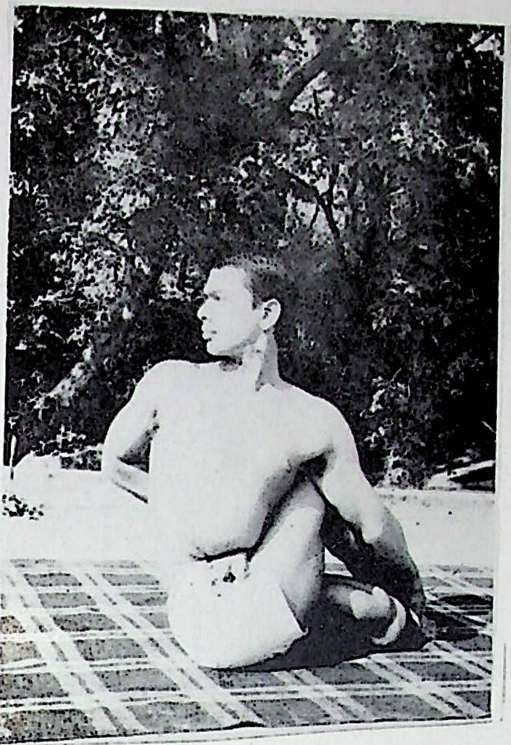
पादहस्तासन (पृष्ठ ४२)



चक्रासन (पृष्ठ ४६)



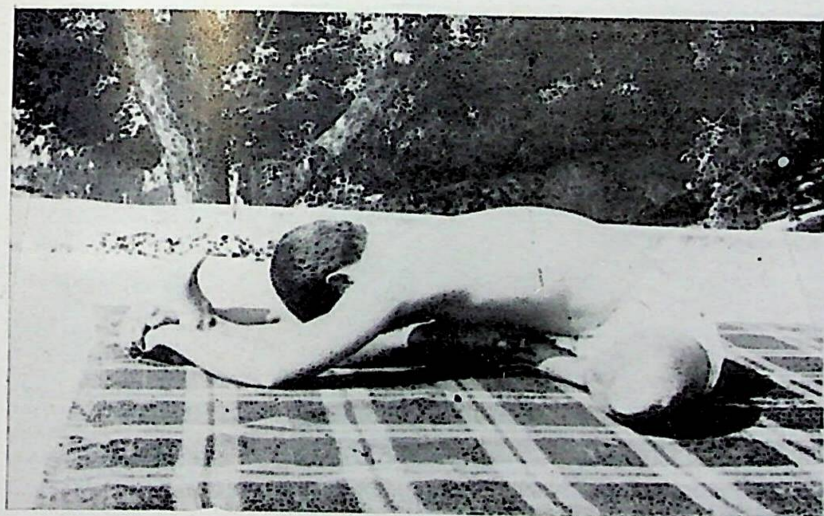
अर्ध-मत्स्येन्द्रासन (पृष्ठ २७)



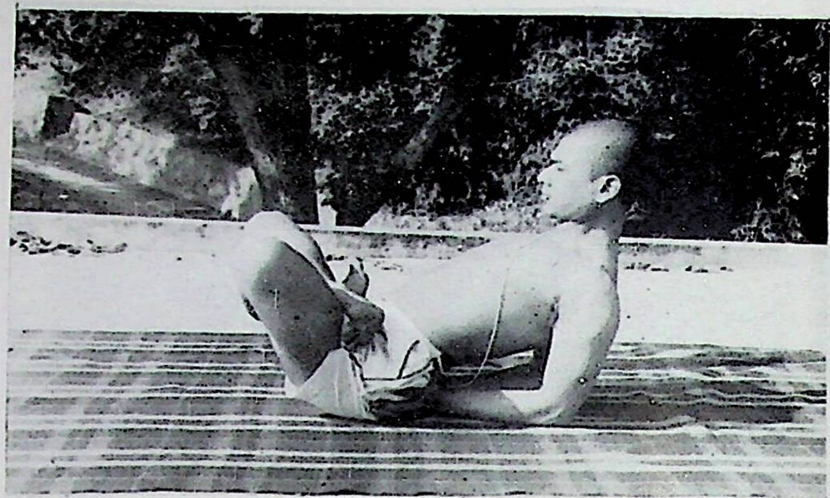
पूर्ण मत्स्येन्द्रासन

शवासन
(पृष्ठ ४७)





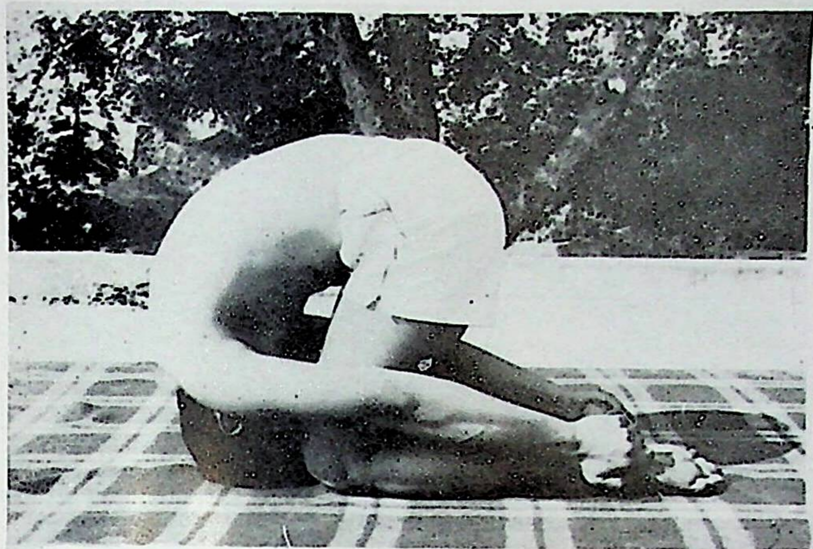
जानुशीर्षासन (पृष्ठ ५०)



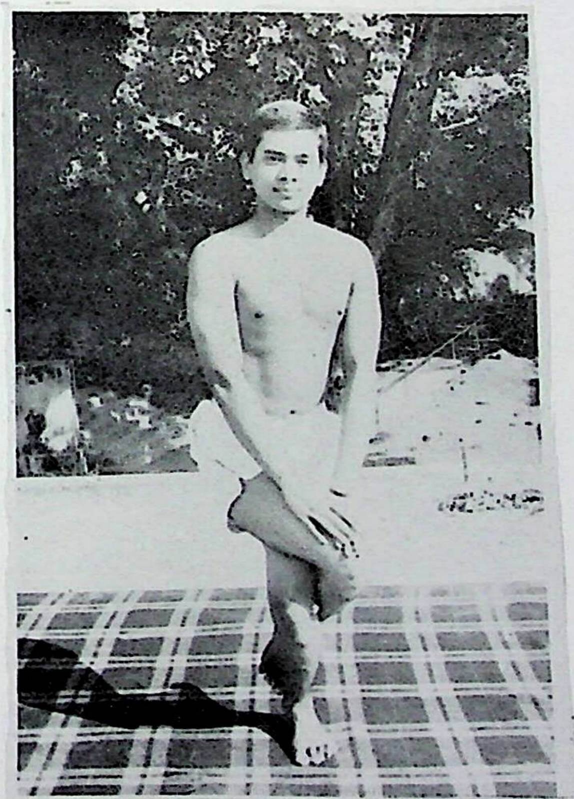
तोलांगुलासन
(पृष्ठ ५१)



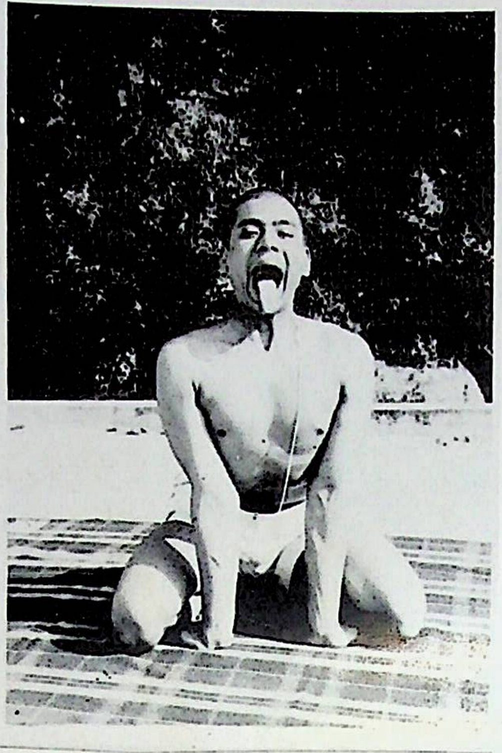
गर्भासन
(पृष्ठ ५१)



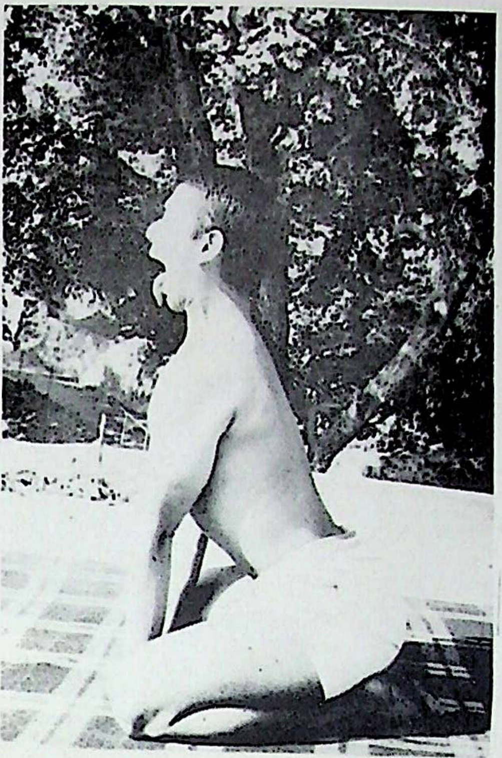
ससाङ्गासन
(पृष्ठ ५२)



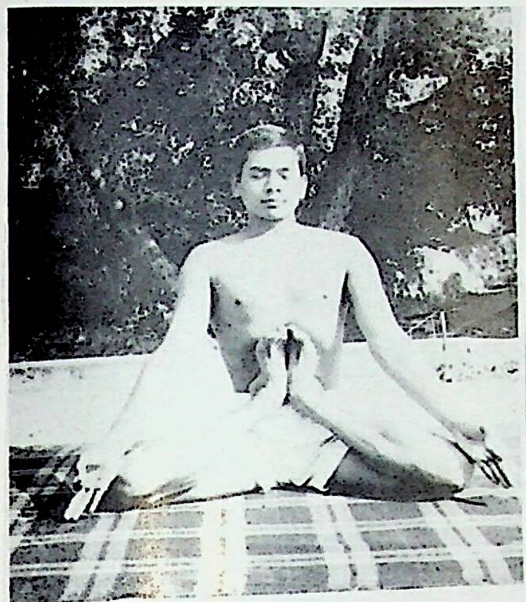
संकटासन
(पृष्ठ ५५)



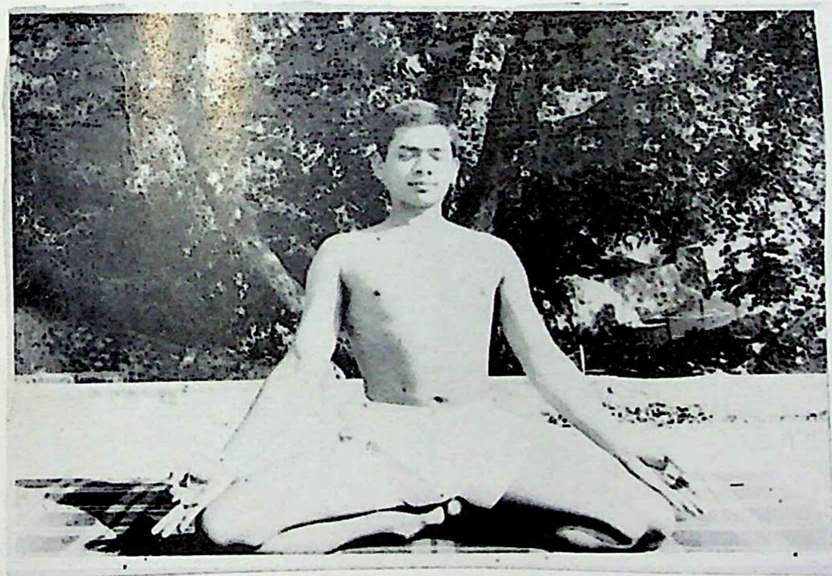
सिंहासन—सामने से (पृष्ठ ५२)



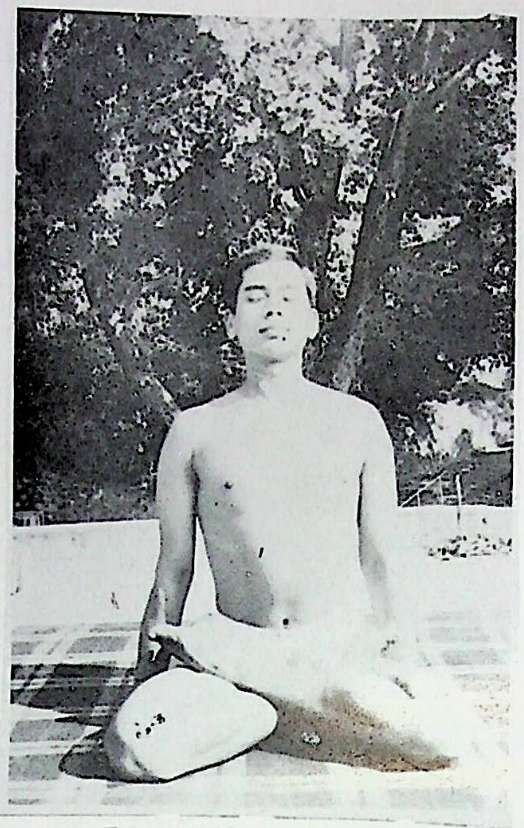
सिंहासन—पार्श्व से



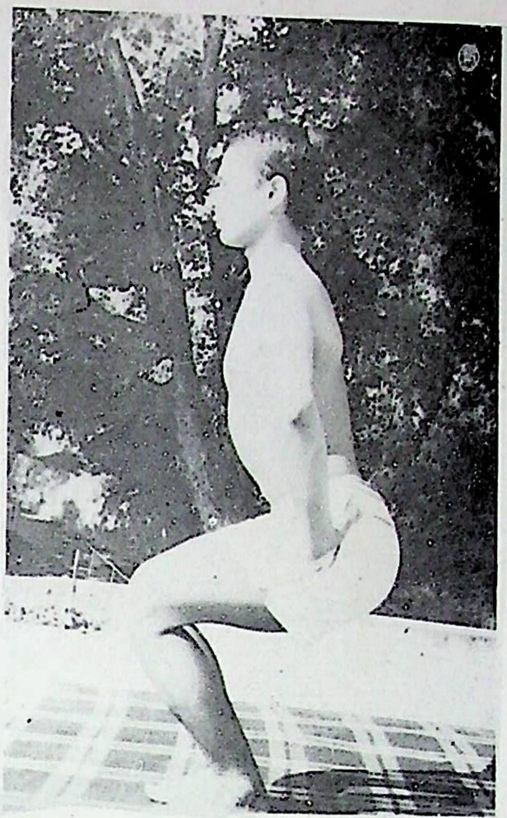
कन्दपीड़ासन
(पृष्ठ ५४)



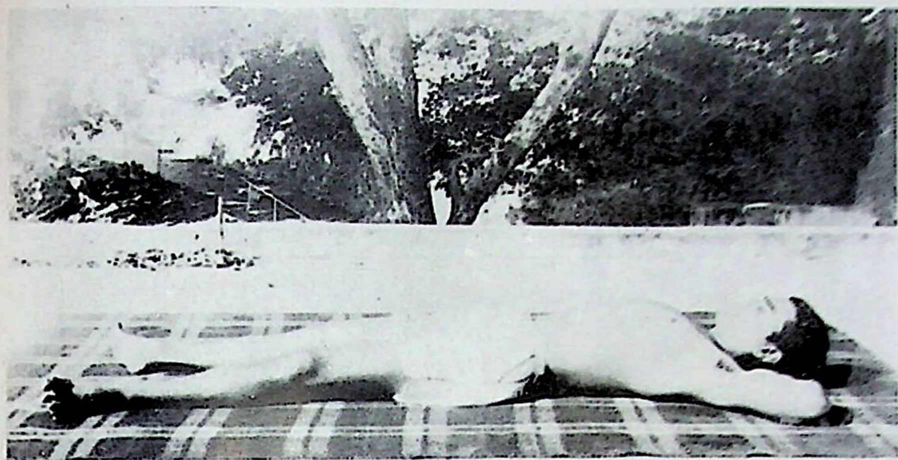
कन्दपीड़ासन (दूसरा प्रकार)



योगासन (पृष्ठ ५५)



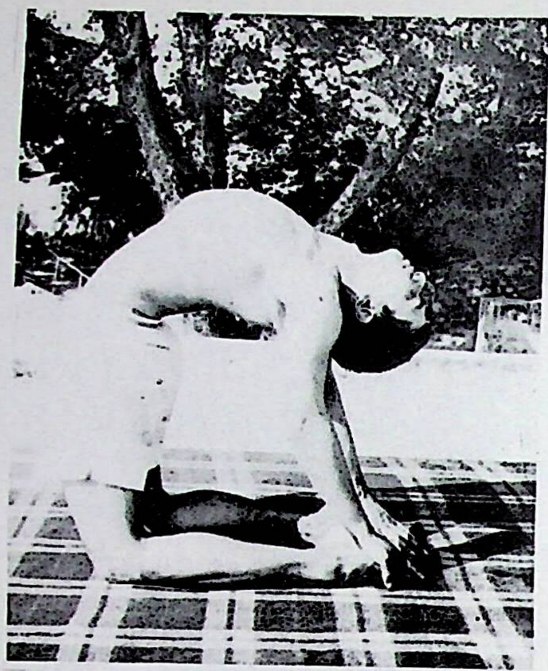
उत्कटासन (पृष्ठ ५५)



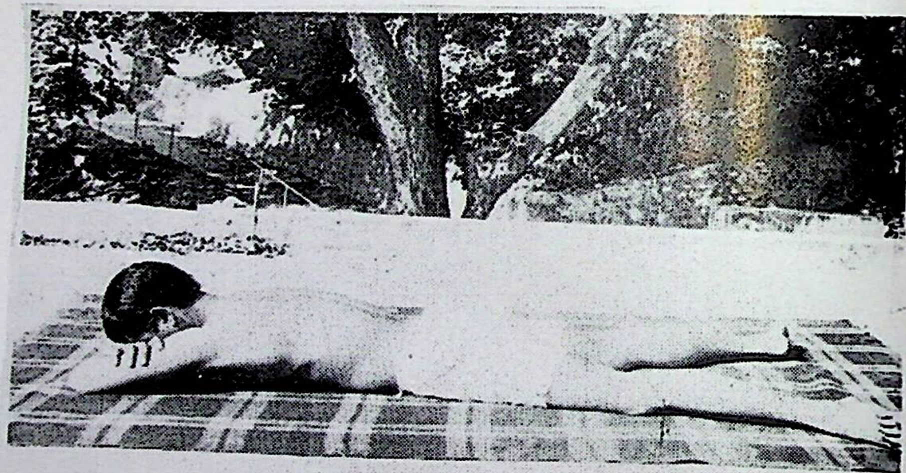
ज्येष्टिकासन (पृष्ठ ५६)



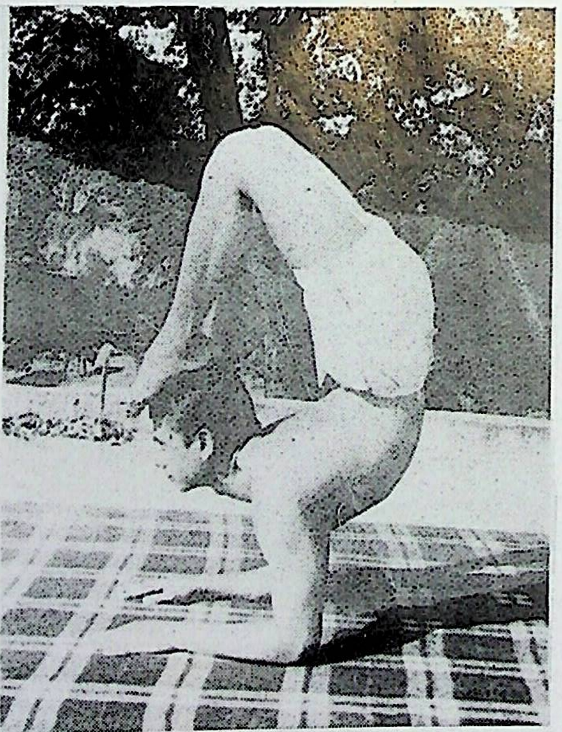
अद्वासन (पृष्ठ ५६)



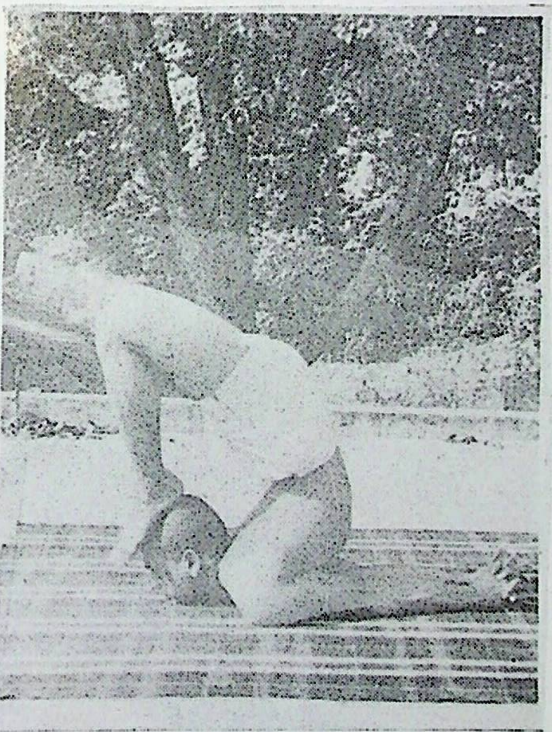
उष्ट्रासन
(पृष्ठ ५७)



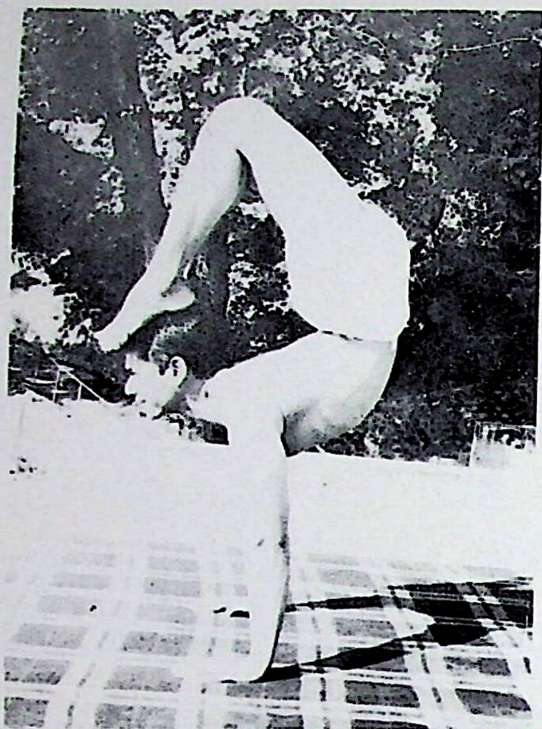
मकरासन (पृष्ठ ५७)



वृश्चिकासन (पृष्ठ ५७)



वृश्चिकासन—दूसरा प्रकार



हस्त वृश्चिकासन

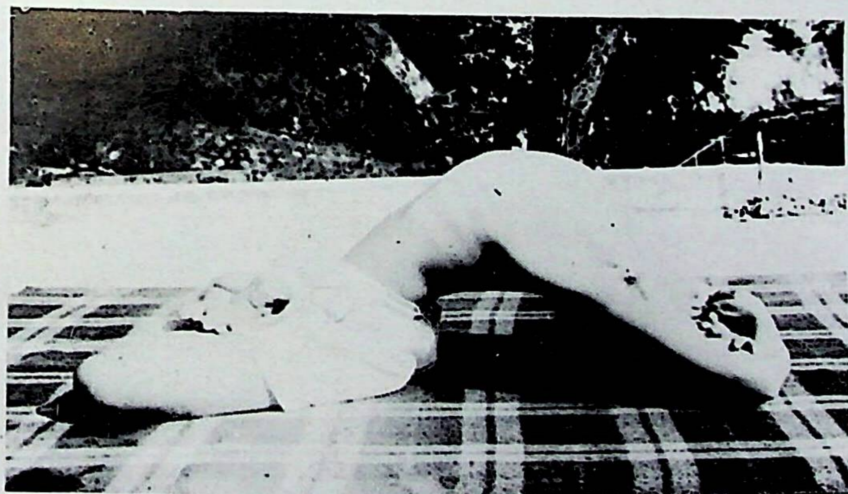
योगनिद्रासन (पृष्ठ ५८)

पर्यंकासन

सामने से

(पृष्ठ ५९)



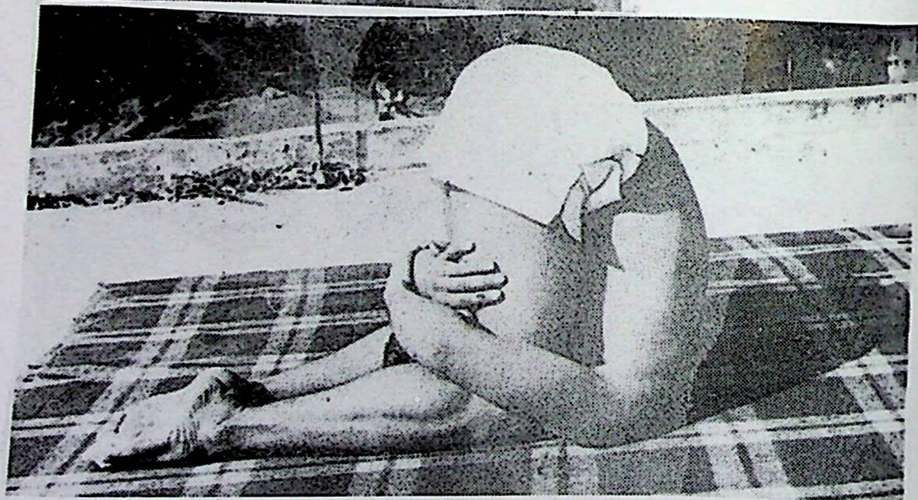


पर्यंकासन—पार्श्व से



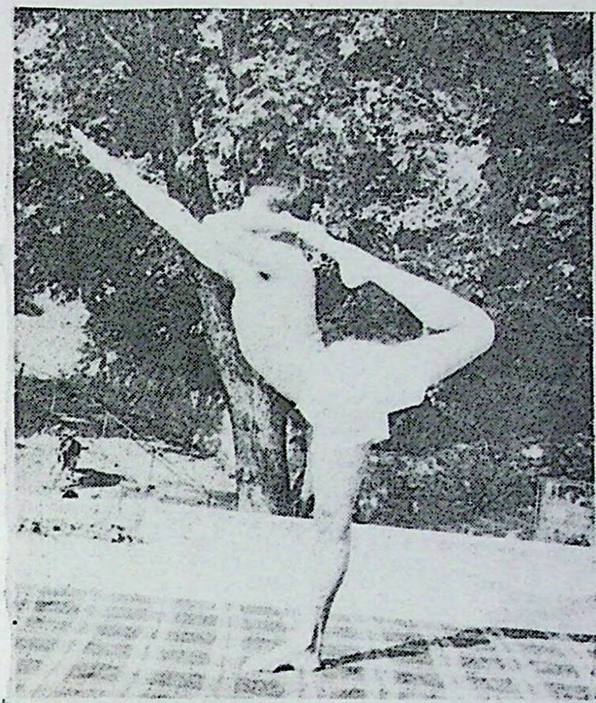
वातायनासन

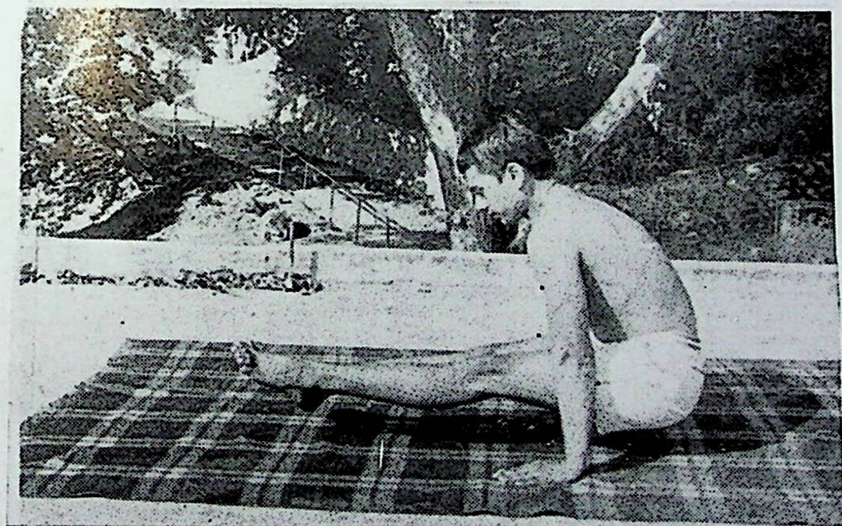
(पृष्ठ ५९)



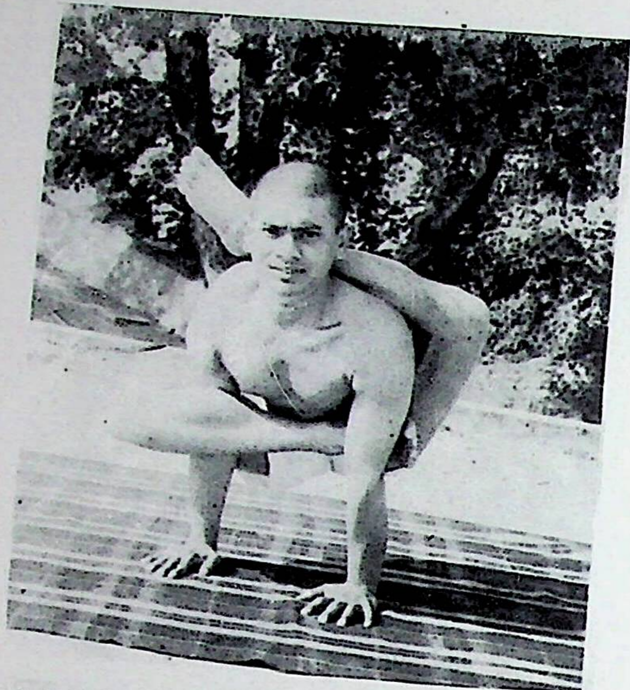
कर्णपीड़ासन (पृष्ठ ५८)

नटराजासन





ब्रंह्मचर्यासन

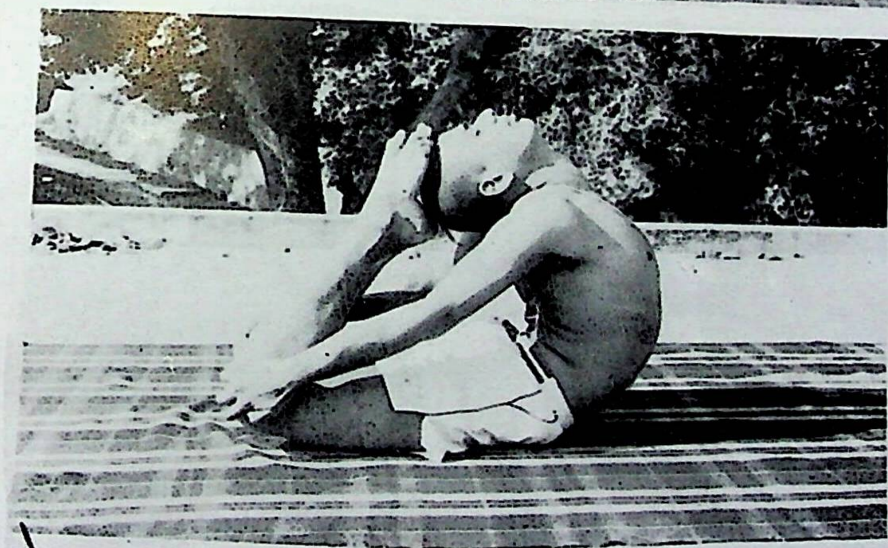


ओङ्कारासन

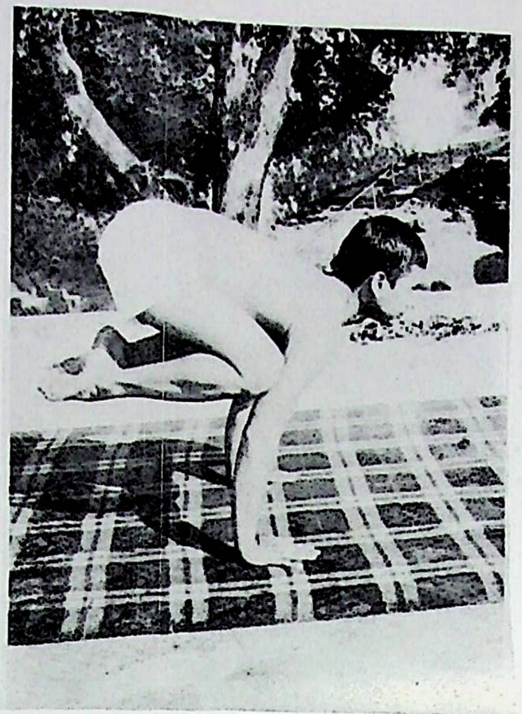
हनुमानासन

हस्तवृक्षासन
(पृष्ठ १७)

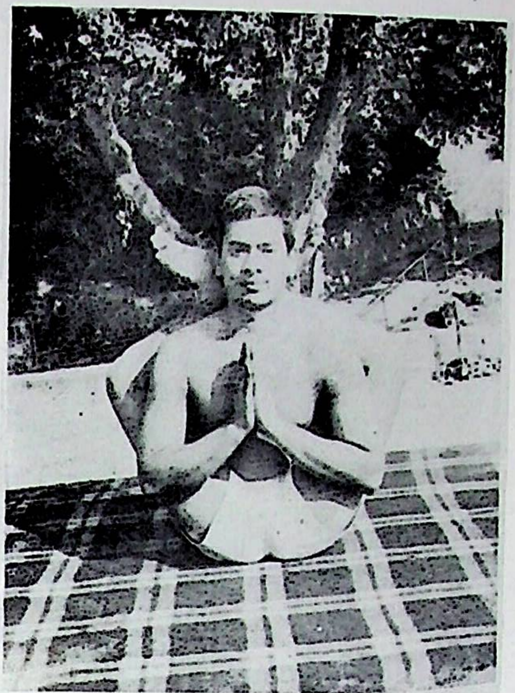




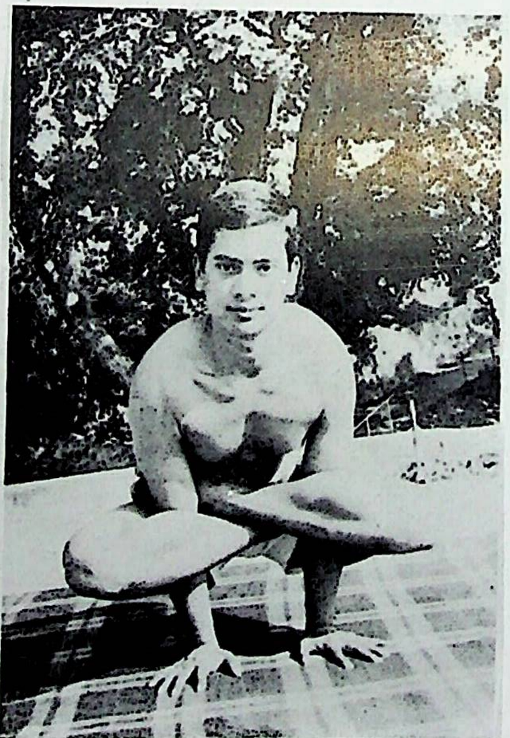
राजहंसासन



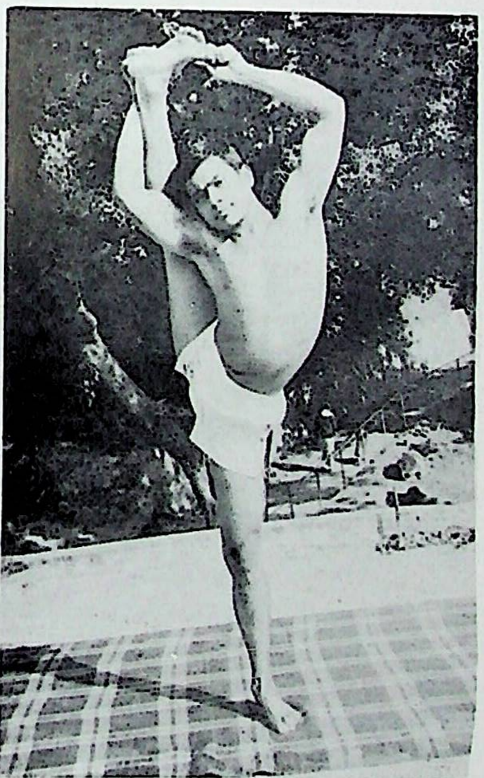
बकासन



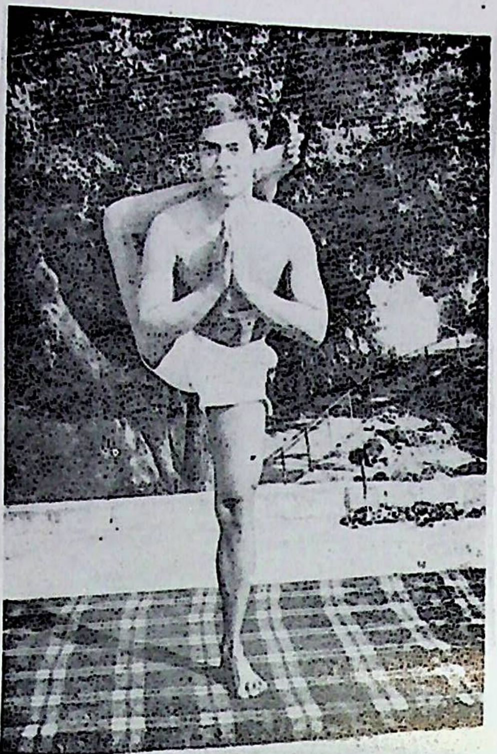
द्विपादशीर्षासन



कुक्कुटासन (पृष्ठ ५३)



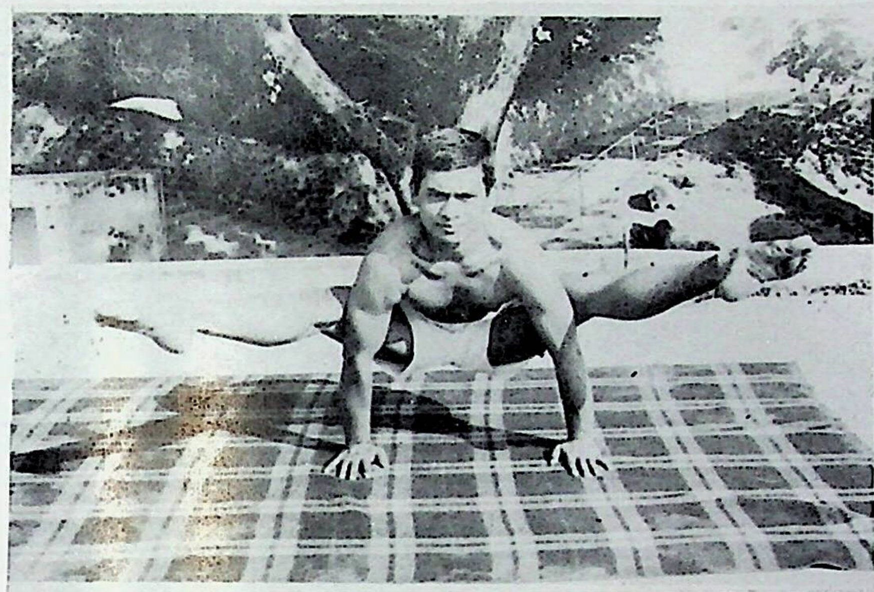
एकपादशीर्षासन



भैरवासन

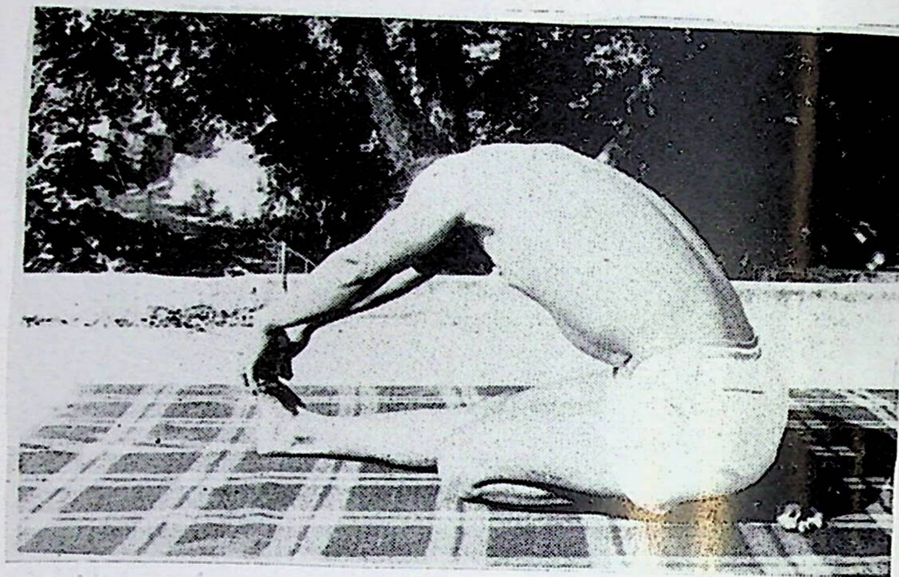


कपोतासन

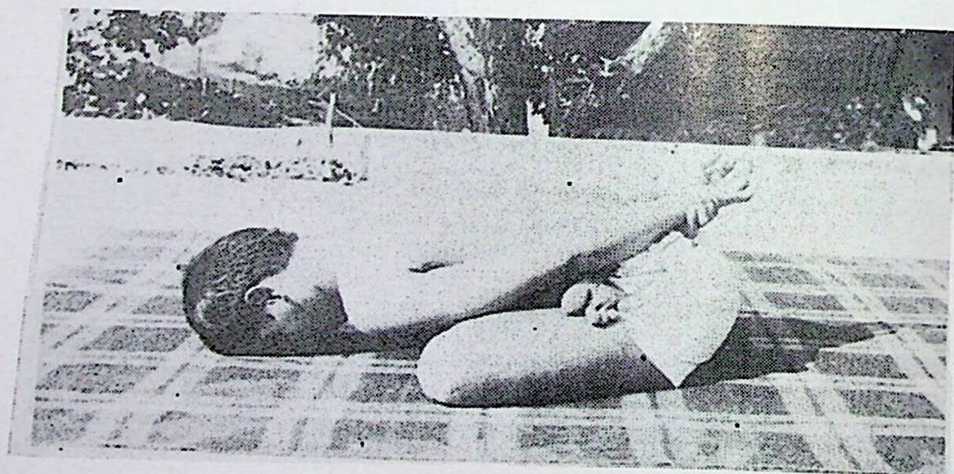


टिट्टिभासन

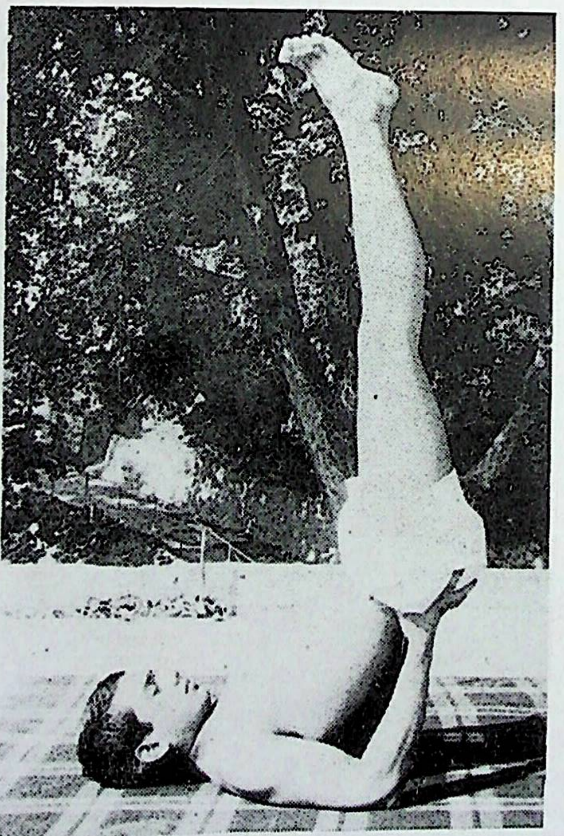
मुद्राएँ और बन्ध



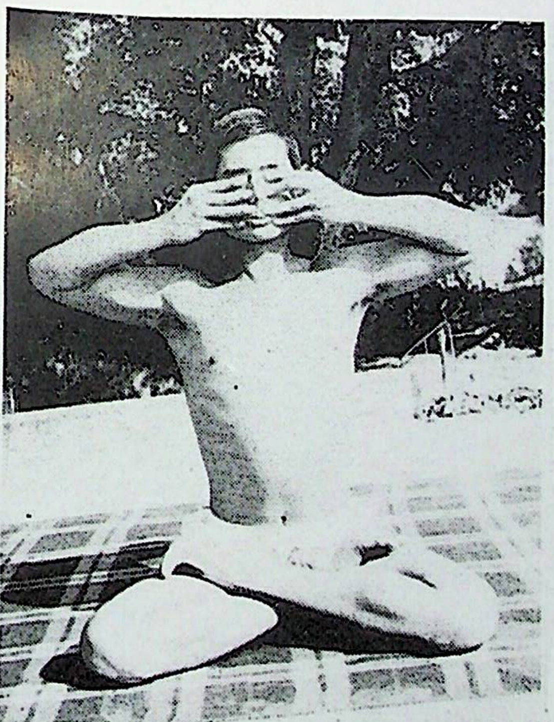
महामुद्रा (पृष्ठ ७४)



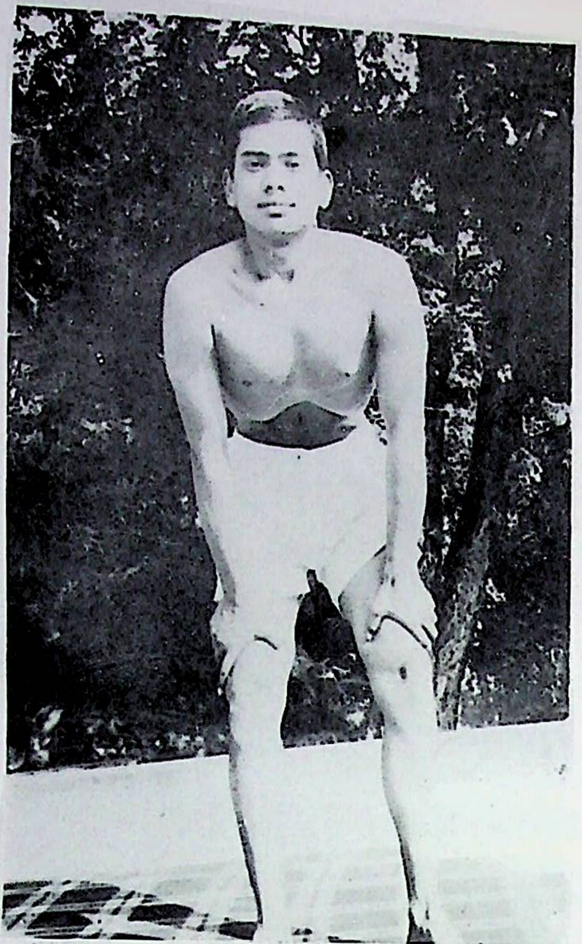
योगमुद्रा (पृष्ठ ७४)



विपरीतकरणीमुद्रा (पृष्ठ ७६)



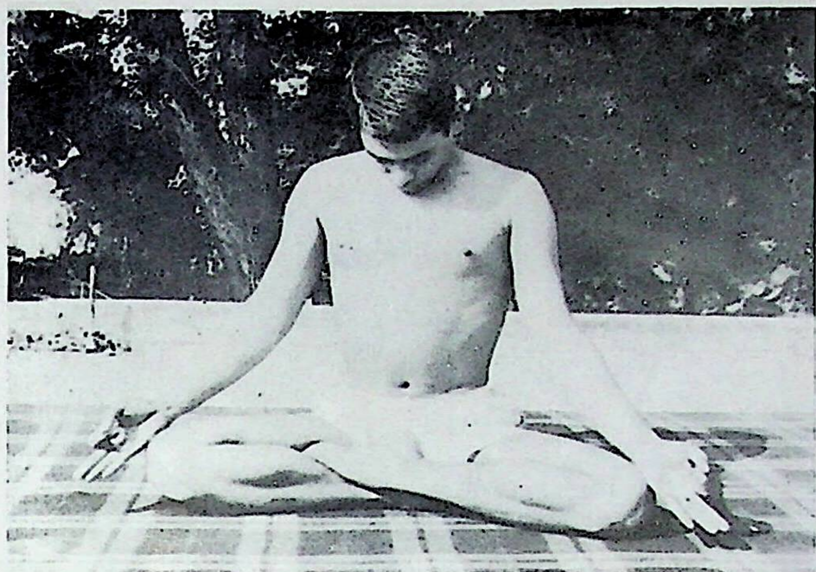
योनिमुद्रा (पृष्ठ ८०)



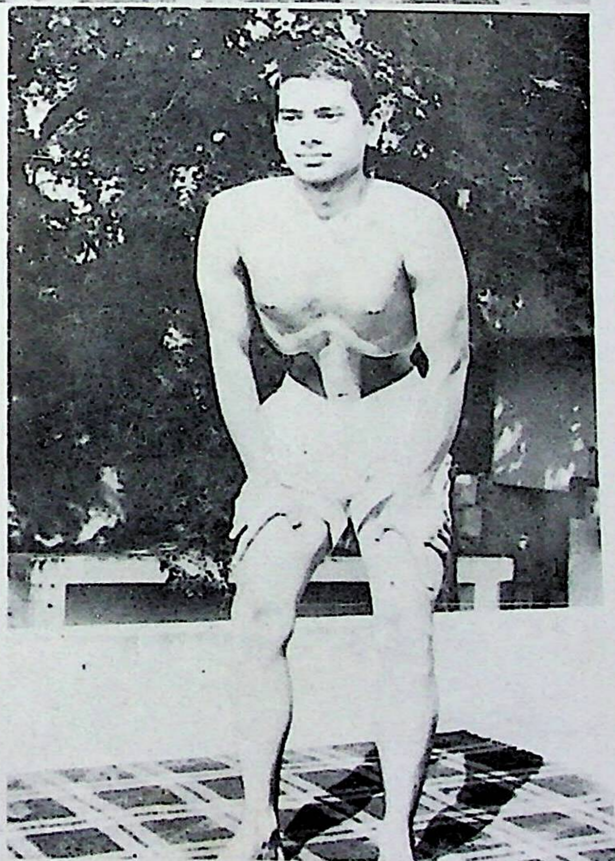
उड्डीयानबन्ध—सामने से (पृष्ठ ७९)



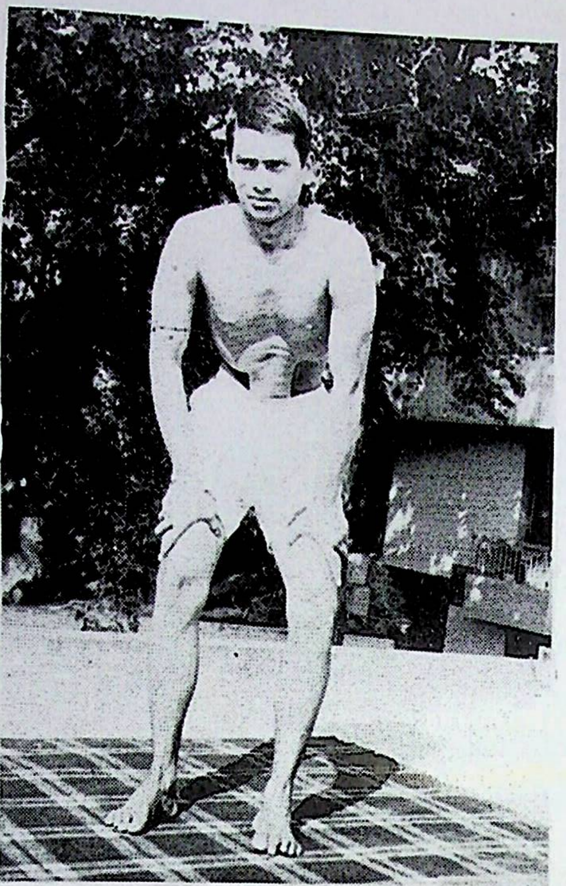
उड्डीयानबन्ध—पार्श्व से



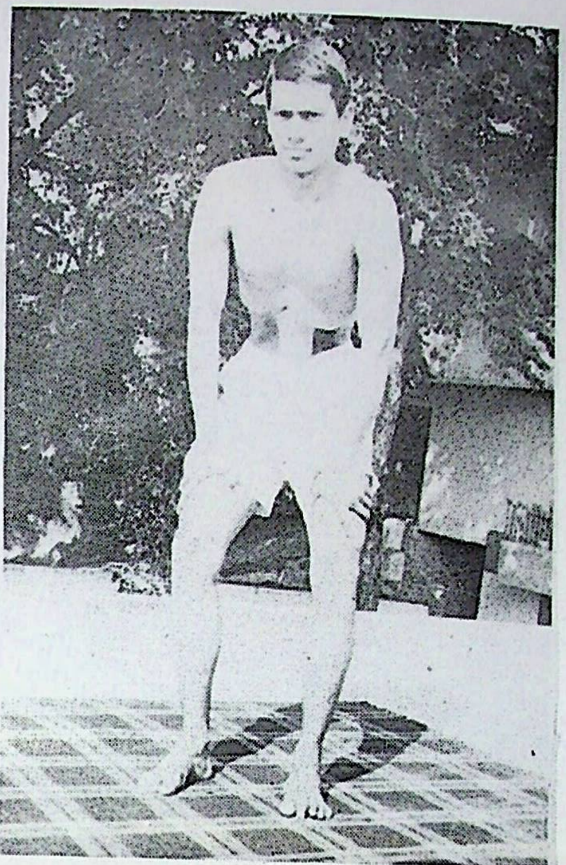
जालन्धरबन्ध
(पृष्ठ ७८)



मध्यम नौलि

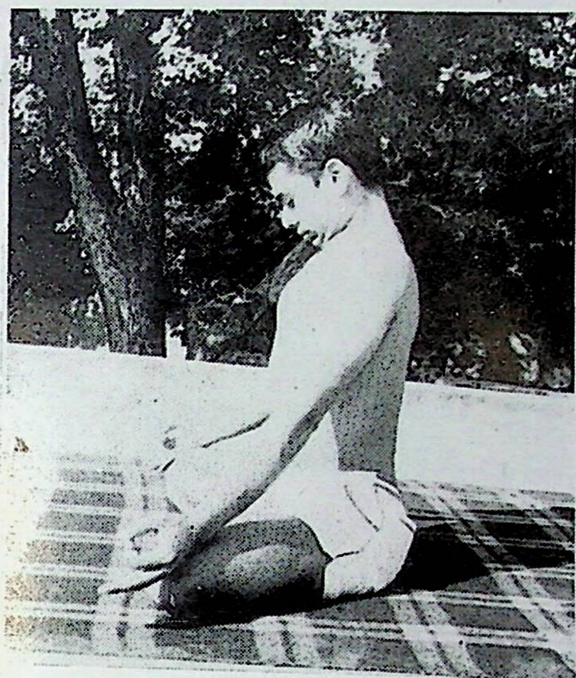


वाम नौलि

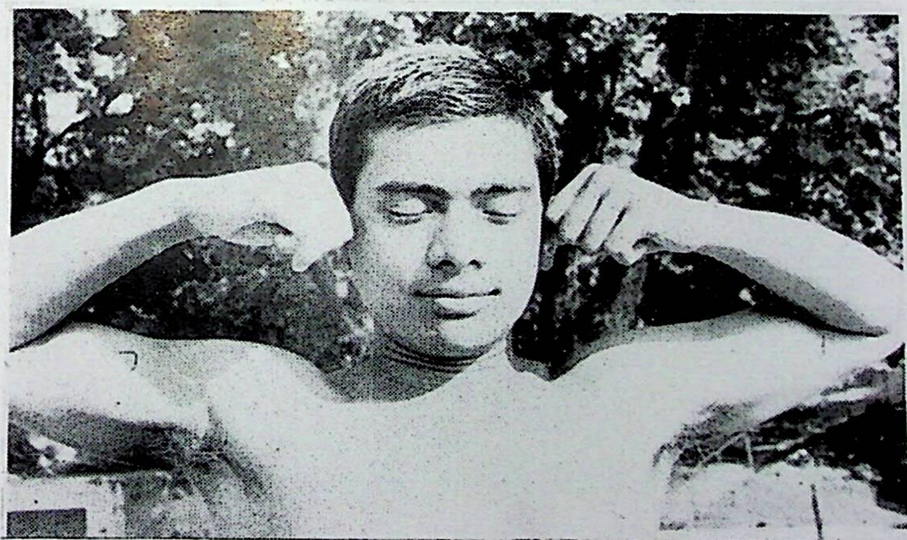


दक्षिण नौलि

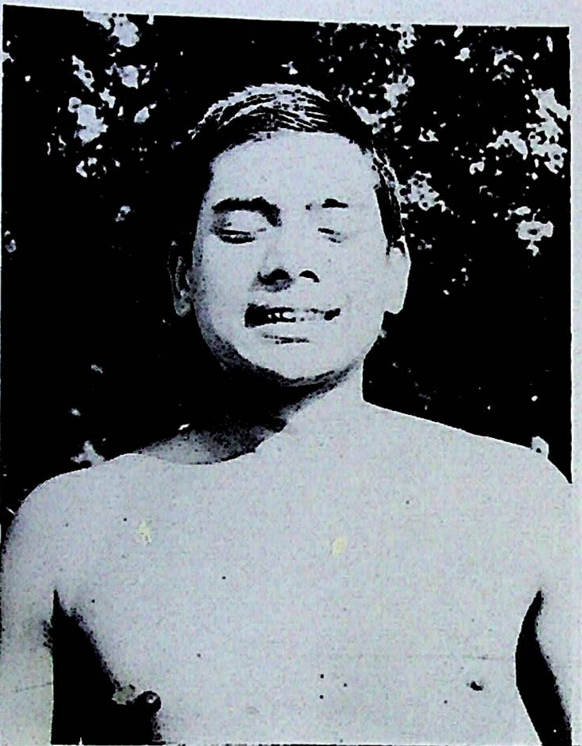
प्राणायाम

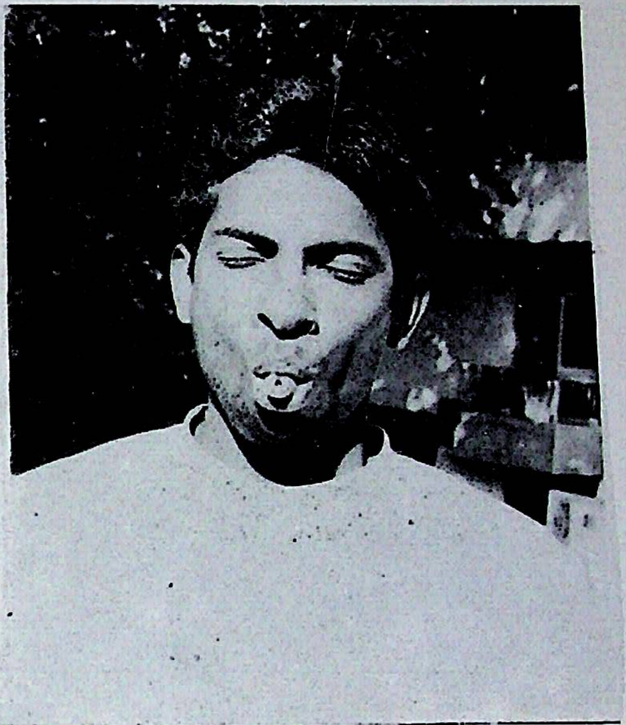


सूर्यभेद
(पृष्ठ ८३)



भ्रामरी (पृष्ठ ८७)


सीत्कारी (पृष्ठ ८४)


शीतली (पृष्ठ ८५)

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

८ सितम्बर, सन् १८८७ को विश्वमञ्च पर प्रथम प्रभात देखा। परिवार के लोग उनको कुप्पुस्वामी कहते थे, जो कालान्तर में स्वामी शिवानन्द सरस्वती के नाम से दिग्विश्रुत हुए। जनता की आधिभौतिक चीत्कार ने उनको मलाया बुलाया और वैदिक गीतों की सनातन-परम्परा ने उनको हिमालय की ओर प्रेरित किया। १० साल तक अकट तपश्चर्या कर, आत्मसंयम और आत्मशुद्धि के अवतरण से अनवरत ध्यान में समाधिस्थ होते हुए उनको ज्ञानोज्ज्वलप्रज्ञा की अनुभूति हुई।

अपना ज्ञान जनता को देने और निष्काम कर्मप्रणाली के आधार पर समाज [illegible] मानवता का निर्माण करने को सन् १९३६ में उन्होंने 'दि[illegible]' को जन्म दिया और कालान्तर में सन् १९४८ में [illegible] अकादमी' [illegible] अद्वितीय संस्था को उद्यत होते [illegible] के नाते [illegible] से अधिक गम्भीर ग्रन्थों के [illegible] उनके जीवन [illegible]शाल ज्ञानज्योति बिम्बित हो[illegible]-से-साधारण [illegible] का पथ-प्रदर्शन करती है। [illegible], मानव-समाज के वि[illegible] के लिए, अक्षरों का स्वरूप दे कर, ये विशाल विश्व के तीर्थयात्री के [illegible] तो दिखा रहे हैं; अन्धकार में नवीन प्रभात तो ला ही रहे हैं; साथ-साथ वे प्रत्येक सत्यशील, परन्तु यातनातप्त साधक के चिर-सहयात्री भी रहे हैं, जिनका शब्द उसे प्रोत्साहन और अभिप्रेरणा देता, जिनकी कृपाकटाक्षवीक्षणलहरी उनको दिव्य बना देती, स्वर्णमय कर देती है। आज तो वे विश्व के गुरुदेव हैं जिनकी ब्रह्माण्ड-व्यापिनी विजय-वैजयन्ती के नीचे सभी धर्म, सभी सम्प्रदाय और सभी वर्ण तथा सभी मनुष्य अपना-अपना आश्रय खोज रहे हैं और निस्सन्देह भविष्य भी उनकी अवतार-कथा को घर-घर गायेगा; क्योंकि उन्होंने अपने दिग्विजयी व्यक्तित्व को परात्पर-जीवन में तन्मय कर दिया था। वे १४ जुलाई, १९६३ को महासमाधि में लीन हुए।

ISBN 81-7052-126-2 HS 203 Rs. 50/-